परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

❊ जन्मदिवस 19–03–1971 ❊ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ❊ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

नालडियार

ग्रन्थकर्त्ता

परम पूज्य आचार्यश्री पदुमनार जी महाराज

सम्पादक

विनयसागर

प्रकाशक

प्राकृत भारती अकादमी

जयपुर (राजस्थान)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

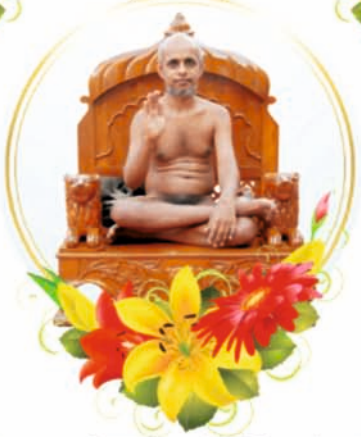

परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार

प्राकृत भारती पुष्प-71

आचार्य पदुमनार रचित

नालडियार

(मूल तामिल, अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी पद्यानुवाद सहित)

सम्पादक
म. विनयसागर

आंग्ल-अनुवादक
डॉ. जी. ए. पोप
एफ. डब्ल्यू. इलिस

संस्कृतपद्यानुवादक
एस. एन. श्रीराम देसिकन्, शिरोमणि

हिन्दी-पद्यानुवादक
टी. इ. श्रीनिवास राघवन्, मीमांसाकेसरी

भूमिका
डॉ. मंडन मिश्र

प्रकाशक
प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर
मगनीराम बैजनाथ गोयनका चेरि. ट्रस्ट. मुंगेर

प्रकाशक

देवेन्द्रराज मेहता

सचिव

प्राकृत भारती अकादमी

३८२६, यति श्यामलाल जी का उपासरा

मोतीसिंह भोमियों का रास्ता

जयपुर-३०२००३(राज.)

एवं

के. एन. गोयनका

अध्यक्ष

श्री मगनीराम वैजनाथ गोयनका चेरिटेबल ट्रस्ट

लक्ष्मी भवन

मुंगेर-८११२०१(बिहार)

प्रथम संस्करण, १९९०

मुद्रक :

डिलक्स आफसेट प्रिन्टर्स, दयाबस्ती, दिल्ली द्वारा

परिमल पब्लिकेशन्स, शक्तिनगर दिल्ली।

பிராக்ருத் பாரதி மலர் - 71

ஆசாரிய பதுமனார் தொகுத்த

நாலடியார்

(தமிழ் மூலத்துடன் ஆங்கில உரையும்
ஹிந்தி சமஸ்கிருத மொழிபெயர்ப்புப் பாடல்களும்)

ஆசிரியர்

மகோபாத்யாய ம. வினயசாகர்

ஆங்கில மொழிபெயர்ப்புரை

டாக்டர் G. U. போப் மற்றும் F. W. இல்லீஸ்

சமஸ்கிருத மொழிபெயர்ப்புப் பாடல்கள்

சிரோன்மணி S. N. ஸ்ரீராம தேசிகன்

ஹிந்தி மொழிபெயர்ப்புப் பாடல்கள்

மீமாம்ஸ கேஸரி தி. ஈ. ஸ்ரீனிவாஸ ராகவன்

முன்னுரை

டாக்டர் மதன் மிச்ரா

வெளியிடுவோர்

பிராக்ருத் பாரதி அகாடமி, ஜெயபூர்

ஸ்ரீ மகனிராம் பைஜ்நாத் கோயங்கா
அறக்கட்டளை, முங்கேர்

வெளியிடுவோர் :

தேவேந்திரராஜ் மேத்தா
செயலர்,
பிராக்ருத் பாரதி அகாடமி,
3726, யதி சியாம்ளாள் உபாஸரா,
மோதிசிங் போமி சாலை,
ஜெயபூர் - 302003 (ராஜ)

மற்றும்

K. N. கோயங்கா
தலைவர்,
ஸ்ரீ மகனிராம் பைஜ்நாத் கோயங்கா அறக்கட்டளை,
லக்ஷ்மி பவன்,
முங்கேர் - 711201 (பீஹார்)

முதற்பதிப்பு 1990

அச்சிடுவோர்

டிலக்ஸ் ஆப்ஸெட் பிரிண்டர்ஸ், தயாபஸ்தி, தில்லி மூலம்
பரிமல் பப்ளிகேஷன்ஸ், சக்தி நகர், தில்லி.

प्रकाशकीय

परम्परागत श्रुति के अनुसार कहा जाता है कि नालडियार कई जैन मुनियों की संयुक्त रचना है, जिसका संकलन आचार्य पदुमनार ने किया था। नालडियार तमिल भाषा का सातवीं शताब्दी का अत्यधिक प्राचीन, महत्वपूर्ण और उपयोगी नीति ग्रंथ है। इस ग्रंथ का उद्देश्य यह है कि ज्ञानमय व दर्शन युक्त जीवन जीया जाये। शरीर, यौवन, अर्थ, यश इत्यादि अनित्य, अस्थाई और नश्वरशील हैं। इसके विपरीत ज्ञान, दर्शन, तप, सत्य, दान, करुणा, मैत्री आदि जीवन में आवश्यक हैं और उनकी उपादेयता स्थापित करते हैं। इन गुणों से युक्त एक प्रामाणिक जीवन जीने की प्रेरणा नालाडियार से मिलती है। यह ग्रंथ भारतीय नीति परम्परा की एक अत्यधिक महत्वपूर्ण कड़ी है। ऐसे विख्यात तमिल ग्रंथ को तीन भाषाओं के अनुवाद के साथ प्रस्तुत करते हुए प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर और श्री मगनीराम बैजनाथ चेरिटेबल ट्रस्ट, मुंगेर को विशेष प्रसन्नता है।

एक समय था जब भारतीय धर्मों और दर्शनों में नीति का भी प्रमुख स्थान था, किन्तु बाद में एक विकृति उभर आयी। कई मूल दार्शनिक बिन्दुओं पर चचयिं होती रहीं, पर सार्थक नीति का स्थान गौण होता चला गया। सम्यग्ज्ञान, दर्शन और चारित्र तीनों ही जीवन की उन्नति, एवं विकास के लिए आवश्यक हैं, किन्तु उनका पूर्णत: मिश्रण नहीं बन पाया। धर्म चर्चाओं तक ही सीमित रह गया और जीवन में उत्तर नहीं पाया। ऐसे संदर्भ में नालडियार जो जीवन जीने की कला या नीति ग्रंथ है, का विशेष स्थान बनता है।

इस बात की भी प्रसन्नता है कि तमिल, अंग्रेजी और हिन्दी अपनी स्वयं की लिपियों के साथ यहां प्रस्तुत हुए हैं। संस्कृत और अंग्रेजी के अनुवाद भी उनके साथ जुड़े हैं।

हमें इस बात की भी प्रसन्नता है कि दक्षिण भारत का एक प्रमुख ग्रंथ उत्तर एवं अन्य भारतीय क्षेत्रों के निवासियों के लिए उपलब्ध होगा। यह हमारा विश्वास है कि राष्ट्रीय एकता एवं समन्वयवादिता को प्रोत्साहित करने का भी एक प्रयास चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, अवश्य है। आशा है, पाठकगण इन सभी पहलुओं से इस ग्रंथ के अध्ययन से आनंदित होंगे।

प्रस्तुत संस्करण में मूल तमिल के साथ स्व. डॉ. जी. यू. पोप एवं एफ. डब्ल्यू. इलिस का अंग्रेजी अनुवाद, संस्कृत पद्यानुवाद एस. एन. श्रीराम

देसिकन न्यायशिरोमणि और हिन्दी पद्यानुवाद टी. इ. श्रीनिवास राघवन, प्रवीण प्रचारक, शिरोमणि, मीमांसा केसरी के प्रकाशित किए जा रहे हैं। हम उक्त तीनों भाषाओं के विद्वानों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

हमारे अनुरोध पर इस ग्रंथ की प्रस्तावना श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय दिल्ली के कुलपति डा. मंडन मिश्र, मीमांसाचार्य ने सार गर्भित विस्तृत प्रस्तावना लिखकर प्रदान की अत: उनके प्रति भी हम कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का सम्पादन जैन साहित्य और प्राकृत भाषा के प्रौढ़ विद्वान महोपाध्याय विनयसागर जी (जो प्राकृत भारती अकादमी के निदेशक एवं भोगीलाल लहेरचंद भारतीय संस्कृति संस्थान, दिल्ली के प्रोफेसर पद पर कार्यरत हैं) ने पूर्ण लगन के साथ किया है अत: उनके भी हम आभारी हैं।

लेखक से हिन्दी पद्यानुवाद प्राप्त कर श्री मोहनचंद जी ढढ्ढा (मद्रास) ने जो सहयोग दिया है, उसके लिए हम उनका हार्दिक अभिनंदन करते हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन में राजस्थान सरकार के सामान्य प्रशासन विभाग जयपुर ने आर्थिक अनुदान प्रदान कर महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके लिए भी हम आभार व्यक्त करते हैं।

के. एन. गोयनका
अध्यक्ष,
श्री मगनीराम बैजनाथ गोयनका
चेरिटेबल ट्रस्ट, मुंगेर

देवेन्द्रराज मेहता
सचिव,
प्राकृत भारती अकादमी
जयपुर

PUBLISHER'S NOTE

The "Naladiyar", a great 7th Century Tamil work on ethics, is generally believed to be a collection of the sayings, gleaned by Acharya Padumnar, from out of the writings of several prominent Jain saints. The objectives underlying such an effort was to promote proper conduct emerging from right knowledge and doctrine. It highlights the ephemeral nature of body, youth, material resources, fame etc. On the other hand it emphacised positive and permanent role of proper knowledge and doctrine, "Tapa" or penance, truthfulness, compassion, and "Maitri" or universal brotherhood encompassing all the living creatures, irrespective of the levels of their development. It leads for a credible conduct endowed with such virtues. Prakrit Bharati academy and Sri Magni Ram Baijnath Goenka Charitable Trust are particularly happy to publish such a prominent Tamil work with Sanskrit, Hindi and English translations and, that too, in their own scripts.

There was a time when the Indian philosophies and religions accorded an important place to ethics. However later, metaphysics got over, emphasis with such a shift, the analgum of right knowledge, doctrine and conduct, so essential for a meaningful life, could not be achived. Religion, overtime, tended to become a matter of discussion and debate without adequate effort to live it up in actual life. In this context, Naladiyar, compilation on the art of living, assumes significance.

We are also happy that such an important

work of the South, now easily available for the readership in the North, will obviously contribute, though is a small measure, to the cause of national unity and fraternity.

In this edition the English translation of Late Dr. G.P. Pope and F.W. Elis, the Sanskrit translation of S.N. Sriram Desikan, Nyaya Siromani,which was published in 1981, and the Hindi translation of T.E. Srinivas Raghavan, Mimansakesari, have been incorporated. We are therefore, indebted to them.

On our request, Dr. Mandan Mishra, Vice-Chanceller, Lal Bahadur Shastri Kendriya Sanskrit Visvavidyalaya, Delhi, has kindly written an Introduction to the present edition. Thus we are grateful to him.

We are also indebted to Mahopadhyaya Vinayasagar, the Director of Prakrit Bharati Academy, Jaipur and Professor in Bhogilal Leherchand Institute of Indology, Delhi who is the editor of this work.

K.N. Goenka
CHAIRMAN
Sri Maganiram Baijnath
Goenka Charitable Trust,
Munger

Devendraraj Meheta
SECRETARY
Prakrit Bharati Academy
Jaipur.

வெளியீட்டாளருரை

சமணத் துறவிகள் பலராலும் இயற்றப்பட்ட பாடல்களைத் தொகுத்து முறைப்படுத்தி ஆசாரிய பதுமனார் நானூறு பாடல்களைக் கொண்ட 'நாலடியார்' எனும் இந்நூலை வழங்கியுள்ளார் என்பது பழங்காலத்தொட்டே நிலவி வரும் கருத்தாகும்., தமிழ் மொழியில் பாடப்பெற்றுள்ள பழம்பெருமைகளுடையது இந்நூல். பாரிலுள்ளோர்க் கெல்லாம் பயனுடைத்தாய் ஏழாம் நூற்றாண்டில் தலைசிறந்த நூல் களுள் ஒன்றாகும். நிறைஞானக் கொள்கைகளுடன் வாழ்க்கையை அமைத்துக் கொடுப்பதே இந்நூலின் நோக்கமாகும். இதில் இளமை, உடல், செல்வம், புகழ் ஆகியவை நிலையற்றவை ஆதலின் அழியக் கூடியவை என்பதும், அஃதன்றி ஞானம், ஒழுக்கம், தவம், வாய்மை, தானம், கருணை, நல்ல நட்பு ஆகியவை வாழ்விற்கு எங்ஙனம் இன்றி யமையாதவை என்பதும் நிலை நாட்டப்படுகிறது. இந்த நற்குணங் களுடன் வாழ்க்கையை அமைத்துக்கொள்ள இந்நூல் தூண்டுதலாகவும் உள்ளது. இத்துணைப் புகழ் வாய்ந்த நூலின் தமிழ் மூலத்துடன் மூன்று மற்ற மொழிகளின் மொழிபெயர்ப்புகளையும் வெளியிடுவதில் ஜெயபூரைச் சேர்ந்த பிராக்ருத் பாரதி அகாடமி, மற்றும் மூங்கேரைச் சார்ந்த ஸ்ரீ மகனிராம் பைஜ்நாத் அறக்கட்டளையும் மகிழ்ச்சியடை கின்றது.

முன்பு நம் பாரத நாட்டில் நிலவிய மதங்களிலும் கொள்கைகளிலும் அறநெறிகளுக்கே முக்கிய இடமளிக்கப்பட்டன. பின்னர் இதில் மாற்றம் உருவாகித் தத்துவத்தின் அடிப்படைகளைப்புற்றிய ஆராய்ச்சி யும் விவாதங்களும் மேலோங்கி அறநெறி யொழுக்கங்களைப் பின்னுக்குத் தள்ளிவிட்டன. மெய்யறிவு, தத்துவம், ஒழுக்கம் ஆகிய மூன்று மிணைந்தே வாழ்க்கையின் முன்னேற்றத்திற்கு இன்றியமையாதனவா யிருந்தபோதிலும்; அவற்றில் முழுமையான இணைப்பேற்படாமல் தத்துவ வாதங்களே நிலை பெற்றனவேயன்றி வாழ்வின் முன்னேற்றம் காணப்படவில்லை. இந்தச் சூழ்நிலையில் வாழ்க்கை நன்னெறிக்குரிய அறத்தினைப் புகட்டும் நாலடியார் முக்கிய அங்கம் வகிக்கிறது.

இந்நூலின் தமிழ்ப்பாடல்களுடன் இதன் பொருளை மொழி பெயர்த்து ஹிந்தி சமஸ்கிருத மொழியில் கவிதைகளாகவும், ஆங்கில உரையாகவும் இணைத்து வெளியிடுவதில் பெருமகிழ்ச்சியடை கிறோம்.

பாரதத்தின் தென்பாகத்தில் சிறப்புற்று விளங்கும் ஒரு நூல் அதன் வடக்கு முதலான மற்றப் பகுதிகளிலுள்ள மக்களுக்கும் அறிமுகப் படுத்துவதிலும் மிக்க மகிழ்ச்சியடைகிறோம். இதனால் நம் நாட்டின் ஒற்றுமைக்கும் ஒருங்கிணைப்பிற்கும் சிறிதளவேனும் உதவக்கூடும் என்று நம்புகிறோம். இந்நூலைப் படிப்போர்கள் நிறைவான இன்பம் பெற்று மகிழ்வர் எனக் கருதுகிறோம்.

இந்தப் பதிப்பில் தமிழ்ப் பாடல்களுடன் அவற்றிற்கு மறைதிரு டாக்டர் ஜி.யூ. போப் மற்றும் F. W. இல்லீஸ் வழங்கியுள்ள ஆங்கில வுரையும், இவற்றை சமஸ்கிருத மொழியில் பாடல்களாக நியாய சிரோன்மணி ஸ்ரீமான் ஸ்ரீராமதேசிகனும், ஹிந்தி மொழியில் பாடல் களாக பிரவீண் பிராசரக் சிரோன்மணி மீமாம்ஸ கேஸரி ஸ்ரீமான் கி. ஈ. ஸ்ரீனிவாச ராகவனும் மொழிபெயர்த்து வழங்கியுள்ளனர். இவர் களனைவர்க்கும் நாங்கள் மிக்கக் கடமைப் பட்டவர்களாகிறோம்

எங்கள் வேண்டுகோளுக்கிணங்க தில்லி ஸ்ரீ லால்பகதூர் சாஸ்திரி மத்திய சமஸ்கிருதப் பல்கலைக் கழகக் துலபதி மீமாம்ஸாசார்ய டாக்டர் மண்டன் மிச்ரா இந்நூலின் கருத்தாழங்களைத் திரட்டி விரிவான முன்னுரை வழங்கினமைக்கு நன்றியைத் தெரிவித்துக் கொள்கிறோம்.

இந்தப் புத்தகத்தின் ஆசிரியப் பணியை முழு கவனத்துடன் புரிந்துள்ள சமண இலக்கிய மற்றும் பிராக்ருத மொழி வல்லுநர் மகோபாத்யாய ஸ்ரீ வினயசாகர் (இவர் பிராக்ருத் பாரதி அகாடமி இயக்குநரும், தில்லி போகிலால் லேஹர்சந்த் பாரதப் பண்பாட்டுக் கழகத்தின் பேராசிரியரும் ஆவார்) அவர்களுக்கு நாங்கள் மிக்கக் கடமைப்பட்டவர்களாவோம்.

சென்னை ஸ்ரீ மோஹன்சந்த் டட்டா ஹிந்தி மொழி பெயர்ப்புக் கவிதையைப் பெற்றுத் தருவதில் நல்கிய உதவிக்கும் எங்கள் நல் வணக்கங்களைத் தெரிவித்துக் கொள்கிறோம்.

இப்புத்தக வெளியீட்டிற்காக ராஜஸ்தான் மாநில அரசின் ஜெயபூர் பொது வெளியீட்டுக் கழகம் நிதியளித்து சிறப்பான உதவி செய்தமைக் கும் எங்கள் நன்றிக் கடனைக் தெரிவித்துக் கொள்கிறோம்.

K. N. கோயங்கா
தலைவர்
ஸ்ரீ மகனிராம் பைஜ்நாத் கோயங்கா
அறக்கட்டளை,
லக்ஷ்மி பவன்,
முங்கேர் 711201 (பீஹார்).

தேவேந்திரராஜ் மேத்தா
செயலர்,
ப்ராக்ருத் பாரதி அகாடமி,
ஜெயபூர்.

प्रस्तावना

मानव और भाषा

मानव एक चिन्तनशील प्राणी है। अपने चिन्तन-मनन को अभिव्यक्त करने की मानवीय इच्छा 'वाक्-शक्ति' के माध्यम से सार्थक हुई। चूंकि 'वाणी' मन की अनुगामिनी है इसलिए उपनिषद् में मन को पिता तथा वाणी को माता कहा गया है।[1] आचार्य शंकर ने मन को बछड़े की भांति तथा वाणी को गौ की उपमा दी है, क्योंकि मन से आलोचित विषय में ही वाणी प्रवृत्त होती है।[2] जैन परम्परा की पारिभाषिक शब्दावली में इसे यूँ व्यक्त कर सकते हैं कि व्यक्ति में स्वविचारों/भावनाओं को अभिव्यक्त करने की इच्छा जागृत होने पर 'मनोयोग' सक्रिय होता है, तदनन्तर 'वचनयोग' में सक्रियता आती है, परिणामत: काययोग की सक्रियता से भाषा-वर्गणा के पुद्गल-परमाणुओं का ग्रहण, उनका भाषारूप में परिणमन तथा ध्वनिरूपों का बाहर उत्सर्जन हो पाता है।

यदि वाणी न होती तो क्या होता? इस सम्बन्ध में आचार्य दण्डी की यह सत्योक्ति स्मरणीय है कि यदि शब्दात्मक ज्योति न होती, तो समस्त तीनों लोक अन्धेरे में ही पड़े रहते,[3] क्योंकि समस्त लोक-व्यवहार का प्रमुख साधन 'वाणी' ही है।[4] इसी दृष्टि से उपनिषद् में जहाँ इस दैवी शक्ति 'वाणी' को पुरुष का 'रस' (सार) बताया गया है,[5] वहां, सब कुछ अभिव्यक्त करने में समर्थ इस वाणी की उपासना के लिए भी प्रेरित किया गया है।[6] वस्तुत: पुण्यशाली व्यक्ति को वाणी देवी कल्याणवसना पत्नी की तरह स्वयं को स्वत: समर्पित कर देती है।[7]

अस्तु, यह निर्विवाद है कि वाग्देवी के वरदहस्त से उपकृत होने वाले चिन्तनशील विचारकों/मनीषियों के प्रयास से ही मानव-जाति सभ्यता व संस्कृति के चरमोत्कर्ष की ओर बढ़ती गई है।

वाणी और सुभाषित

वैदिक काल से मानव-जाति की यह प्रबल भावना रही है कि समाज में परस्पर सौमनस्य, सौहार्द, प्रेम, सुख-शान्ति का वातावरण बना रहे।[8] चूंकि वाणी लोक-व्यवहार का प्रधान साधन है, इसलिए परस्पर सौमनस्य आदि की दृष्टि से वाणी की प्रशस्तता अत्यन्त अपेक्षित समझी जाती रही है। वैदिक वचनानुसार, जिस प्रकार चलनी से सत्तू को छान कर परिशुद्ध किया जाता है, उसी प्रकार बुद्धिमान् व्यक्ति अपने बुद्धि-वैभव से भाषा को परिमार्जित/ परिष्कृत/ परिशोधित/अलंकृत कर उसे प्रयुक्त करते हैं। फलस्वरूप उनकी वाणी में

मंगल-श्री के निवास होने से उनकी मित्रता में वृद्धि होती है।[9] यही कारण है कि प्राचीन धर्मग्रन्थों में मधुर, हितकारी व सत्य वचन बोलने की महत्ता बारंबार प्रतिपादित की गई है। उदाहरणार्थ, 'हे विद्वानों! मैं सभाओं में सुन्दर वाणी बोलूं,[10] मेरी जिह्वा के अनुभाग तथा मूल में मधु (मिठास) हो, और मैं सदा मधुर बोलूं,[11] आदि-आदि। वस्तुत: प्रिय बोलने वालों के लिए कोई पराया नहीं होता। कहा भी है—'क: पर: प्रियवादिनाम्'।[12] कल्याणकारी वाणी वक्ता के लिए भी कल्याणकारिणी होती है।[13] इसके विपरीत, कठोर वाणी के काटे, बाणों से भी अधिक मर्मघाती व पीड़ादायक होते हैं,[14] क्योंकि वाणी द्वारा किया हुआ घाव कभी नहीं भरता।[15] इसलिए शास्त्रों में कठोर वाणी का प्रयोग करना तथा किसी की दुखती रग को छूना आदि वर्जित माना गया है।[16]

जैन व वैदिक दोनों परम्पराओं में सत्य की महिमा गाई गई है। दोनों ही परम्पराओं में कल्याणकारी कथन को ही 'सत्य' की श्रेणी में रखा गया है।[17] आचार्य कल्हण (12वीं शती) का यह कथन यहां अतिप्रासंगिक प्रतीत होता है कि वही गुणवान् व्यक्ति प्रशंसा का पात्र होता है जिसकी वाणी उचित न्यायकारी न्यायधीर के समान अतीत अर्थ-सत्य घटना को निष्पक्ष रूप से दृढ़तया उपस्थापित करती है।[18]

सुभाषितों की परम्परा

शिक्षा, निष्णात पंडितों में वही व्यक्ति अग्रगण्य माना गया है जो अपने ज्ञान व अनुभव को दूसरे में-शिष्य में-संक्रान्त कर सकने की योग्यता रखता हो।[19] कर्णप्रिय, सर्वसुखकारी वाणी पुण्यकर्मा व्यक्तियों की ही हो सकती है और अतिसभ्य विद्वान् ही मनोगत गम्भीर भावों को (सुवाणी द्वारा) प्रकट करने में समर्थ होते हैं।[20] उपर्युक्त मन्तव्यों को दृष्टिगत रखते हुए विद्वानों ने अपने ज्ञान व अनुभव के निष्कर्षों को सहज बोधगम्य व प्रभावपूर्ण बनाकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया और सूक्तियों/सुभाषितों/नीतिपरक उपदेशों के सृजन की परम्परा का सूत्रपात किया।

काव्यविद्या को 'कान्ता-संमित-उपदेश' बताया गया है।[21] जगत् में प्रभु/शासक/स्वामी के आदेश पालनीय होते हैं। कभी-कभी मित्रादि के अनुरोध को भी स्वीकार कर कार्य किया जाता है। किन्तु, इन दोनों से भी प्रभावकारी कान्ता-वचन होता है जो स्वाभाविक सरस रूप में व्यक्ति के लिए अभीष्ट कार्य में प्रयोजक होता है। वेद व पुराण आदि द्वारा प्रदत्त विविध धर्मोपदेशों की अपेक्षा, कवि का काव्य भी अधिक प्रभावकारी होता है जो कान्ता-तुल्य सरस वचनों द्वारा पाठक के मन में धर्मादि पुरुषार्थों में प्रवृत्त होने की स्वत: स्फूर्ति पैदा करता है। इस दृष्टि से समस्त काव्य-विद्या इस प्रकार सुभाषित ही है। किन्तु, 'सूक्ति' व

'सुभाषित' से तात्पर्य उन छोटे-छोटे स्वतन्त्र मुक्तक काव्यों से है जो अपने में 'गागर में सागर' की तरह भाव गाम्भीर्य, जीवन-सत्य तथा अनुभव-निष्कर्षों को समेटे हुए रहते हैं। वैदिक मंत्र-संग्रहों को सम्भवत: 'सूक्त' इसी दृष्टि से कहा गया प्रतीत होता है। भारतीय संस्कृति के आदि धर्मग्रन्थों वेदों, स्मृतियों, पुराणों से लेकर अधुनातन रचित संस्कृत-प्राकृतादि विविध भाषाओं के विभिन्न काव्यों में सूक्तियों/सुभाषितों को यत्र-तत्र समाहित हुआ देखा जा सकता है। रामायण व महाभारत में यत्र-तत्र महापुरुषों के मुख से, या प्रसंगवश स्वत: कवि/रचनाकार द्वारा उपदेश-वाक्य प्रस्तुत किये गए हैं, इनमें अधिकांश स्वतन्त्र सूक्तियों/सुभाषितों के रूप में पठनीय/मननीय हैं। महाभारत का शांति व अनुशासन पर्व तो विविध नीतियों/उपदेशों का महानिधि है ही।

कालिदासादि महाकवियों की कृतियों में 'अर्थान्तरन्यास' अलंकार के रूप में लघुसूक्तियां प्रचुर मात्रा में देखी जा सकती है । आचार्य महाकवि बाण (7वीं. शती ई.) ने कालिदास की सूक्तियों की महती प्रशंसा भी की है।[22] भावगाम्भीर्य के धनी महाकवि भारवि (ई. छठी शती) ने अपने 'किरातार्जुनीय' महाकाव्य में द्रौपदी आदि के कथनोपकथनों के रूप में अनेक महत्त्वपूर्ण/नीतिपरक श्लोकों को उपनिबद्ध किया है, जो सुभाषितों के रूप में पठनीय/मननीय तथा कण्ठस्थ करने योग्य हैं। इसी काव्य के 'सहसा विदधीत न क्रियाम्' इस प्रसिद्ध पद्य ने एक राजकुमार को निजपुत्र-वध का पाप करने से बचा दिया था, ऐसी किंवदन्ती है। 'त्रिविक्रम' (10वीं शती) के 'नलचम्पू' में दमयन्ती दूत के माध्यम से राजा नल के पास सुभाषितमय पत्र भेजती है जिससे राजा मानों अमृतरस से आप्लावित-सा हो जाता है।[23]

काल-क्रम से इन सूक्तियों/सुभाषितों का महत्त्व और भी बढ़ गया है और कवियों ने स्वतन्त्र रूप से मुक्तक काव्यों के रूप में सूक्तियों/सुभाषितों/नीति-वाक्यों की रचनाएं कीं। और, विविध प्राचीन ग्रन्थों में निबद्ध सुभाषितों आदि का संकलन कर संग्रह-ग्रन्थों का प्रकाशन भी हुआ। आचार्य भर्तृहरि (7वीं शती ई. के लगभग) के शतकत्रय—नीतिशतक, श्रृंगारशतक, वैराग्यशतक इस संदर्भ में महनीय प्रयास के रूप में उल्लेखनीय हैं। महाकवि बाण (7वीं शती) ने राजा शातवाहन द्वारा रचित 'सुभाषितकोष' की चर्चा की है।[24] कुछ विद्वानों ने उक्त ग्रन्थ का साम्य वर्तमान में उपलब्ध 'गाथासप्तशती' ग्रन्थ से प्रमाणित किया है। पंचतन्त्र व हितोपदेश (14वीं शती) जैसे कथा-संग्रहों में भी प्रसंगानुरूप विविध नीतिपरक 'सूक्ति' पद्य समाविष्ट हैं जो व्यावहारिक जीवन के लिए परमोपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। आचार्य क्षेमेन्द्र (11वीं शती) के 'देशोपदेश', 'सेव्यसेवकोपदेश', 'चारुचर्या ' 'चतुर्वर्गसंग्रह' 'नर्मला', आदि ग्रन्थ भी सूक्तियों/सुभाषितों की दृष्टि से महत्वपूर्ण संग्रह-ग्रन्थ हैं। आचार्य जगन्नाथ (17वीं शती) के 'भामिनीविलास' में अन्योक्तिपरक अनेक सूक्तियां उपनिबद्ध हुई हैं।

आचार्य बृहस्पति, शुक्राचार्य, चाणक्य, विदुर आदि के नाम से अनेक नीति-संग्रह प्रकाशित हुए हैं; जिनसे सामान्य-जनमानस में सूक्तियों/नीतिवाक्यों की लोकप्रियता ही पुष्ट होती है।

वस्तुत: इस धरती पर तीन ही रत्न हैं—जल अन्न और सुभाषित।[25] मूर्ख लोग पत्थर के टुकडों को 'रत्न' कह कर पुकारते हैं। इसीलिए विद्वानों की यह धारणा प्राचीन काल से ही रही है कि जिस प्रकार शिलोञ्छवृत्ति से जीविका चलाने वाला तपस्वी मुनि खेत में यत्र-तत्र पड़े हुए धान्यों के कण-कण को चुगता है, उसी प्रकार बुद्धिमान् व्यक्ति को चाहिए कि वह, जहां कहीं से भी हो, उत्तम वचनों/सूक्तों का चयन करें और तदनरूप सुकृतानुष्ठान करें।[26] वचन, चाहे वह बालक के ही क्यों न हों, ग्राह्य हैं।[27] फलस्वरूप अनेक संग्रह-ग्रन्थ भी प्रकाश में आए जिनमें सूक्तियों/सुभाषितों/नीतियों का कोष सुरक्षित रूप से निहित कर दिया गया है। इनमें 'सुभाषित-रत्न-भाण्डागार' (प्रकाशक-निर्णयसागर प्रेस, ई. 1952) आदि ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं।

सुभाषितों की महत्ता व उपयोगिता

सूक्ति-रचना सम्बन्धी काव्य-विद्या में कवि का विशेष पाण्डित्य प्रकट होता है। थोड़े शब्दों में पर्याप्त बात कह देना, जो श्रोता के मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ जाए, निश्चय ही कवि के गम्भीर अनुभव, भाषा-पाण्डित्य व मनोहर कल्पनाशीलता की अपेक्षा रखता है। इसके अतिरिक्त, कवि को अत्यधिक सावधानी यह रखनी पड़ती है कि कहीं कोई दोष न रह जाए। आचार्य मंखक (12वीं शती ई.) ने 'श्रीकण्ठचरित्र' ग्रन्थ में कहा है कि रमणीय सूक्तियों में दोष का पता ठीक उसी प्रकार शीघ्र चल जाता है जिस प्रकार धुले वस्त्र में थोड़ी-सी कालिमा या धब्बा।[28] चूंकि प्राय: कुछ दुर्जन लोगों का यह स्वभाव रहता है कि वे कर्णमधुर सूक्तियों के रस पर ध्यान न देकर दोष खोजते रहते हैं,[29] सलिए भी सूक्ति-रचना में कवि को अपेक्षाकृत अधिक सावधानी रखनी पड़ती है। और, यह काव्यविद्या रचनाकार के कवित्व या पाण्डित्य की योग्यता व शक्ति की अच्छी कसौटी होती है। इसी दृष्टि से कवि-भारती को 'सूक्तिसद्व्रतचारिणी' कहा गया है।[30]

सुभाषितरसास्वाद वास्तव में संसार-वृक्ष के अमृत फलों में से एक है।[31] शार्ङ्गधरपद्धति-कार (14वीं शती) का तो इस सम्बन्ध में यहाँ तक कहना है कि जिस व्यक्ति ने आकण्ठ सुभाषितामृत का पान नहीं किया है, वह विबुध (देव व विद्वानों।की) मण्डली में कैसे प्रविष्ट हो सकता है?[32] काश्मीरी पण्डित शम्भू कवि (11-12वीं शती) ने सूक्तियों को शरच्चन्द्रीय अमृतरसस्यन्दिनी किरणों के समान बताते हुए इन्हें मनुष्यों का अद्वितीय अनिवाशी भूषण माना है।[33]

जैन परम्परा में सुभाषित/सूक्तियां

सर्वज्ञ तीर्थंकर के उपदेशों को संगृहीत कर जैन आगमों की रचना हुई है। सर्वप्राणिहितकारी अनुशासन से पूर्ण 34 आगमों में विविध शिक्षाएं/नीतियां पर्याप्त मात्रा में हैं। इन आगम-ग्रन्थों तथा इनके विविध व्याख्या-साहित्य (टीका, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति आदि) में प्रचुर सूक्ति-कण बिखरे पड़े हैं। जैनाचार्यों द्वारा संस्कृत-प्राकृत आदि भाषाओं में स्वतन्त्र काव्य ग्रन्थों आदि का निर्माण भी प्रचुर मात्रा में किया गया है, उनमें भी पर्याप्त सूक्तियों/सुभाषितों आदि का भण्डार है। जैनाचार्यों ने स्वकल्याण के साथ-साथ पर-कल्याण को भी यथोचित सम्मान दिया है। पर-कल्याण की दृष्टि से प्रमुख साधन, इनकी दृष्टि में, धर्मोपदेश/सन्मार्गदिशन रहा है।[35] काव्य-रचना में भी उनकी दृष्टि धर्मानुबन्धिनी कविता-रचना की ओर अभिमुख रही है।[36] उनके विचार में वही रचना 'शास्त्र' हो सकती है जो प्राणियों के रागद्वेषादि मनोविकारों का उपशमन करें।[37] उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में जैन परम्परा के ग्रन्थों/शास्त्रों/कृतियों में सुभाषितों/सूक्तियों/नीतिवाक्यों/उद्बोधक वचनों को अत्यधिक मात्रा में स्थान प्राप्त हुआ है।

बाईसवें तीर्थंकर अरिष्टनेमि के समय का एक प्रसंग, जो जैनागम में चर्चित है, यहां उल्लेखनीय है। अरिष्टनेमि के लघुभ्राता रथनेमि मुनि अवस्था में रैवतक पर्वत की गुफा में ध्यानस्थ थे। राजीमती साध्वी भी अपनी सहवर्तिनी साध्वियों के साथ वहां आसपास विचरण कर रही थीं। भीषण वर्षा व तूफान में वे अपनी सहवर्तिनी साध्वियों से बिछुड़ कर पानी से भीगे वस्त्रों को सुखाने के उद्देश्य से एक गुफा में प्रविष्ट हुई। उन्होंने कपड़े उतारे और सुखाने के लिए फैला दिए। संयोगवश रथनेमि भी उसी गुफा में साधनारत थे। रथनेमि की दृष्टि सहसा जब राजीमती की सौन्दर्यमय देहयष्टि पर पड़ी तो मन की दुर्बलता ने उन्हें आ घेरा और वे राजीमती से काम-याचना करने लगे। राजीमती को शील-रक्षा के लिए कुछ न सूझा, वे रथनेमि को प्रबोधक वाक्य/सुभाषित सुनानें लगीं, जिनसे संयम-आचरण की प्रेरणा प्राप्त होती थी। उन्होंने कहा—"अपयश के कामुक पुरुष धिक्कार है तुम्हें, जो तुम वमन (त्याग) किए हुए काम-भोगों को फिर ग्रहण करना चाह रहे हो। इससे तो बेहतर है, मर जाओ। क्रोध, मान, माया व लोभ का निग्रह कर, इन्द्रियों को अपने अधीन कर, अपने आप का उद्धार (उपसंहार) कर", आदि आदि। आगम में वर्णित है कि उक्त सुभाषित को सुनकर रथनेमि पर मानों अंकुश लग गया और वे धर्म में तुरन्त स्थिर हो गए।[38] राजीमती के वे सुभाषित 'उत्तराध्ययन' सूत्र (22वें अध्ययन) में संकलित हैं, जो संयमभ्रष्ट किसी भी व्यक्ति के लिए उद्बोधक हो सकते हैं।

जैन पुराणों में भी सूक्तियों की प्रचुर मात्रा दृष्टिगोचर होती है। आचार्य जिनसेन रचित आदिपुराण में स्वयं ग्रन्थकार का कथन है कि जिस प्रकार समुद्र में

बहुमूल्य रत्न प्राप्त होते हैं, वैसे ही यह पुराण सुभाषित-रूपी रत्नों का उत्पत्ति स्थान है,[39] और जो सुभाषित अन्यत्र कहीं खो जाने पर भी नहीं मिल सकते, वे यहां पग-पग पर यथेच्छ रूप में प्राप्त किए जा सकते हैं।[40] उत्तरपुराण-कार के विचार में सुभाषित-महामंत्रों से दुर्जनरूप भूत-प्रेतादि पलायित हो जाते हैं।[41]

सुभाषितों/सूक्तियों के प्रति जैन विद्वानों का अनुराग क्रमशः बढ़ता गया। जैन आचार्य श्री शान्तिसूरि (सिरिसंतिसूरि) (ई. 12वीं शती) का यह कथन [42] उक्त तथ्य को प्रमाणित करता है कि जैसे लोभी को धन से, कामुक को रमणियों से और राजा को पृथ्वी से सन्तोष प्राप्त नहीं होता, वैसे ही विद्वानों को सुभाषितों से कभी तृप्ति नहीं होती। कालक्रम से, कथा-दृष्टान्तों से परिपूर्ण उपदेशात्मक अनेक कृतियां जैनाचार्यों द्वारा विरचित की गईं, जो यद्यपि मात्र सूक्ति/सुभाषित-संग्रह तो नहीं हैं, तथापि उनमें पर्याप्त मात्रा में सुभाषित दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य सिद्धसेन तो सत्पुरुषों की उद्‌बोधक सूक्तियों के लिए प्रसिद्ध हैं ही। [43] आचार्य प्रवरसेन (छठी सती लगभग) द्वारा महाराष्ट्री प्राकृत में रचित 'सेतुबन्ध' (रावणवध महाकाव्य) को आचार्य दण्डी ने सूक्ति-रत्नों का समुद्र बताया है। [44]

कालान्तर में, सूक्तियों/सुभाषितों की स्वतन्त्र रचनाएं भी संस्कृत-प्राकृत आदि भाषाओं में जैन आचार्यों की लेखनी से पर्याप्त मात्रा में प्रसूत हुईं। प्राकृत में रचित उक्त धार्मिक सूक्ति-काव्यों में धर्मदास गणि कृत उपदेशमाला, हरिभद्रसूरि कृत उपदेशपद, मलधारी हेमचन्द्र कृत पुष्पमाला, लक्ष्मीसागरकृत वैराग्यरसायन प्रकरण, पद्मनन्दिकृत धम्मरसायण प्रकरण आदि महत्त्वपूर्ण हैं। संस्कृत-प्राकृत में आचार्य पद्मनन्दि का 'पद्मनन्दिपंचविंशतिका' उल्लेखनीय है। संस्कृत में रचित धार्मिक सूक्ति-ग्रन्थों में आचार्य गुणभद्र कृत आत्मानुशासन, आचार्य शुभचन्द्र कृत ज्ञानार्णव, हरिभद्रकृत धर्मबिन्दु व धर्मसार, रत्नमण्डन गणि कृत उपदेश-तरंगिणी, पद्मानन्द-कृत वैराग्यशतक के नाम उल्लेखनीय हैं। यद्यपि उक्त ग्रन्थों की रचना जैन तात्विक विवेचना, चारित्र-निरूपणा, सद्‌भावना व भक्ति की अभिव्यक्ति आदि उद्देश्यों से की गई है, तथापि इन्हें सुभाषित-बहुल कृति कहना अधिक उपयुक्त होगा। इसी तरह, संस्कृत नैतिक काव्यों में आचार्य अमितगति कृत सुभाषितरत्न सन्दोह, अर्हद्‌दास कृत भव्यजनकण्ठाभरण, राजर्षि अमोघवर्ष-कृत प्रश्नोत्तररत्न मालिका, सोमप्रभ कृत सूक्तिमुक्तावली काव्य, श्रृंगार-वैराग्य-तरङ्गिणी, नरेन्द्रप्रभकृत विवेकपादप, विवेककलिका, जिनवल्लभसूरि कृत धर्मशिक्षा, मंत्री धनद कृत शतकत्रयम् आदि महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ माने जाते हैं। मुनि जयवल्लभ द्वारा रचित 'वज्जालग्ग' (वि. 11वीं शती) प्राकृत भाषा में रचित सुभाषितों का महत्त्वपूर्ण संकलन है। मुनिदेव आचार्य कृत सुभाषितरत्नकोश, सकलकीर्तिकृत सुभाषितरत्न

जैन धर्म का प्रारम्भ उत्तर भारत में (प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव द्वारा अयोध्या में, तथा अंतिम तीर्थंकर महावीर द्वारा वैशाली में) हुआ था। किन्तु, वह वहां तक सीमित न रह कर दक्षिण में हिन्द महासागर तक विस्तीर्ण हुआ। पौराणिक दृष्टिकोण के अनुसार प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव और अन्तिम तीर्थंकर महावीर का दक्षिणदेश से सम्बन्ध रहा है। ऋषभदेव ने आन्ध्रादि देशों में विहार भी किया था।[45] उन्हीं के पुत्र प्रथम चक्रवर्ती भरत ने दक्षिण देश (आन्ध्र, केरल, कर्नाटक, चोल, पाण्डच आदि) पर भी विजय-पताका फहराई थी।[46] 11वीं शती के संस्कृत ग्रन्थ 'क्षत्रचूडामणि', भास्कर रचित कन्नड़ ग्रन्थ 'जीवन्धर चरित' तथा तिरुथुक्कदेव रचित तमिलग्रन्थ 'जीवकचिन्तामणि' से ज्ञात होता है कि भगवान् महावीर कन्नड प्रान्त (तत्कालीन हेमांगद देश) में पधारे थे और वहां का राजा जीवन्धर उनके धर्म में प्रव्रजित हुआ था। प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के श्रमण-संघ में दक्षिण के उन राजकुमारों का होना भी वर्णित है, जो बाद में पालीताना (सौराष्ट्र) के शत्रुंजय पर्वत पर चले गए थे।[47] किन्तु, उक्त पौराणिक वर्णन कथंचित् इतिहासज्ञों को सम्भवत: मान्य नहीं हो। तथापि यह निर्विवाद है कि ई. सन् के प्रारम्भ से पूर्व ही जैन धर्म का प्रवेश दक्षिण भारत में हो गया था। सम्राट् खारवेल (कलिंगाधिपति) (ई. पू. 143) एक आस्थावान् जैन था, इस तथ्य की पुष्टि शिलालेख-साक्ष्य से होती है। दक्षिण के अन्य नरेशों में भी कई जैनधर्मानुयायी या जैनधर्म-प्रशसंक/पोषक हुए। ई. पूर्व तीसरी शती में उत्तरभारत में आए भीषण दुर्भिक्ष के संकट में श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु व विशाखाचार्य के नेतृत्व में श्रमण-संघ दक्षिण में चोल, पाण्डच आदि देशों में गया था।[48] इससे यह निश्चित ही सिद्ध होता है कि वहां (दक्षिण में) जैन धर्म का पहले से प्रचार-प्रसार तथा श्रमण-संघ के अनुकूल वातावरण रहा होगा। कालान्तर में भी दक्षिण भारत जैन धर्म व श्रमण ज्ञान-परम्परा का रक्षक/पोषक/समर्थक बना रहा। कदम्ब वंश, गंग वंश, राष्ट्रकूट वंश, होयसल वंश के कुछ प्रमुख राजाओं ने जैन धर्म की महती सेवा की है।

यदि तमिल साहित्य के वेद 'तिरुक्कुरल' के रचयिता 'तिरुवल्लुवर' (ई. प्रथम शती) को जैन मानने की मान्यता सत्य हो, तो यह कहा जा सकता है कि दक्षिण भारत में ही जैन धर्म के प्रथम स्वतन्त्र सुभाषित काव्य-संग्रह की रचना हुई थी।[49]

'नालडियार' संग्रह

सुभाषित ग्रन्थों की सुदीर्घ परम्परा में प्रस्तुत 'नालडियार' ग्रन्थ का एक विशिष्ट स्थान है। यह सातवीं शती ई. का संकलन ग्रन्थ है, इसमें निबद्ध सूक्तियों की रचना इस काल से भी पूर्व हुई होगी।

'नालडियार' या 'नालडिनानूरु' से तात्पर्य है—चार-चरण वाले चार सौ छन्द। 'पदुमनार' नामक आचार्य द्वारा इसका संकलन किया गया है।

प्रस्तुत रचना की पृष्ठभूमि :

इस रचना के पीछे एक किंवदन्ती कही जाती है : नीलगिरि, क्रौंच, गोवर्धन, श्रीकूट, रांची, अन्नामलाई, हेमकूट, विन्ध्य इन पर्वतीय प्रदेशों में रहने वाले करीब आठ हजार जैन मुनियों को उस समय आए भीषण दुर्भिक्ष का सामना करना पड़ा और वे वहां से पाण्ड्य प्रदेश में आकर, वहां के नरेश के यहां 'सभा-कवि' हो गए। दुर्भिक्ष समाप्त होने पर वे वहां से चलने लगे। किन्तु, राजा ने प्रेमवश उनसे न जाने का अनुरोध किया। मुनिराजों ने छिपकर रात्रि में वहां से प्रस्थान कर दिया, किन्तु चलने से पूर्व उन्होंने अपने-अपने आसनों के नीचे एक-एक स्वरचित पद्य छोड़ दिया। दूसरे दिन, जब राजा को उनके चले जाने का पता चला तो उसे बहुत दु:ख हुआ व शोक की अवस्था में उसने सारे आठ हजार पद्यों की पाण्डुलिपि को 'वैगाई' नदी में फेंक दिया। आश्चर्य की बात यह हुई कि उन पद्यों में से चार सौ पद्य नदी की धारा में डूबे नहीं, अपितु प्रवाह में न जाकर तट पर वापस आ गए। आश्चर्यचकित राजा ने उन चार सौ पद्यों को संगृहीत किया और 'नालडीनानूरु' नाम प्रदान किया। यह भी कहा जाता है कि इन चार सौ पद्यों की पाण्डुलिपि तट से चार कदम आगे गई, और फिर पीछे वापस आ गई। कालान्तर में 'पदुमनार' नामक जैनाचार्य ने इन्हें तीन भागों/वर्गों में तथा चालीस अधिकारों में विभाजित कर सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया।

ग्रन्थ का अंगोपांग-परिचय :

ग्रन्थ में तीन काण्ड हैं—(1) धर्म, (2) अर्थ और (3) काम। धर्मकाण्ड के अन्तर्गत सन्यास व गृहस्थ धर्म—ये दो अध्याय हैं, जिनमें क्रमश: सात व छ: अधिकार हैं। इस प्रकार 'धर्मकाण्ड' में कुल तेरह अधिकार तथा (13×10) एक सौ तीस पद्य हैं। अर्थकाण्ड में राज धर्म, स्नेह धर्म, सुख धर्म, दु:ख धर्म, सामान्य धर्म, शत्रु धर्म, विविधनीतिप्रद ये सात अध्याय हैं, जिनमें क्रमश: सात, चार, तीन, एक, चार व एक अधिकरण हैं। इस प्रकार अर्थकाण्ड में कुल चौबीस अधिकार तथा (24×10) दो सौ चालीस पद्य हैं। काम काण्ड में सुख-दु:ख धर्म व सुखधर्म-ये दो अध्याय हैं, जिनमें क्रमश: एक व दो अधिकरण हैं। इस प्रकार कामकाण्ड में कुल तीन अधिकरण तथा (3×10) तीस पद्य हैं। समग्र योग करने पर तीनों काण्डों की कुल पद्य संख्या चार सौ बैठती है।

धर्मकाण्ड के सन्यास धर्म के अन्तर्गत (1) धन की अनित्यता, (2) यौवन की अनित्यता, (3) शरीर की अनित्यता, (4) धर्म की महत्ता, (5)

शुद्धिहीनता, (6) सन्यास, (7) क्रोध-त्याग, ये सात अधिकार हैं। इसी काण्ड के गृहस्थ धर्म के अन्तर्गत (1) सहनशीलता, (2) पर-स्त्री-त्याग, (3) दान, (4) पूर्वजन्मकृत कर्म, (5) सत्य, (6) पापकर्म से भय—ये छः अधिकार हैं। यहां धर्मकाण्ड समाप्त हो जाता है। इसके आगे अर्थकाण्ड प्रारम्भ होता है। अर्थकाण्ड के राजधर्माध्याय के अन्तर्गत (1) विद्या, (2) अच्छे कुल में जन्म, (3) ऊंचे लोग, (4) निन्दा त्याग, (5) सत्समागम, (6) महत्व, (7) प्रयत्नशीलता ये सात अधिकार हैं। स्नेह धर्माध्याय के अन्तर्गत (1) बन्धुपरिपालन, (2) स्नेह-परामर्श, (3) मित्रकृत अपराध को सहना, (4) अनुचित मैत्री ये चार अधिकार हैं। सुखधर्माध्याय के अन्तर्गत (1) ज्ञानविशिष्टता, (2) विवेकरहितता, (3) व्यर्थ वित्त ये तीन अधिकार हैं। दुःखधर्माध्याय में (1) दानविमुखता, (2) अभाव (दारिद्रता), (3) मान (सम्मान), (4) याचना से डरना ये चार अधिकार हैं। सामान्य धर्माध्याय में (1) अल्पज्ञानवत्ता, (2) जड़ता, (3) नीच कृत्य, (4) मूर्खता ये चार अधिकार हैं। नानानीतिबोधक अध्याय में 'नानानीतिया' नामक एक अधिकार है। यहां अर्थकाण्ड समाप्त हो जाता है। कामकाण्ड में सुख-दुःख धर्माध्याय के अन्तर्गत 'वेश्या' नामक एक प्रकरण है। सुखधर्माध्याय में 'पतिव्रता' व सुखानुभव लक्षण ये दो अधिकार हैं।

विषयों की उपर्युक्त विवरणिका ग्रन्थ के महत्व का प्रतिपादन करने के लिए पर्याप्त है। यह संग्रह भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्मशास्त्र एवं भारतीय मर्यादाओं का उत्तम संकलन है—जिसमें अत्यन्त सुरुचिपूर्ण सरस पद्धति पर आदर्श तत्त्वों का निरूपण किया गया है। गंभीर से गम्भीर विषय को अतिशय मार्मिक माधुर्य के साथ उपस्थित किया गया है। इसमें दार्शनिक चिन्तन और तत्त्वज्ञान का एक अनुपम सम्मिश्रण है—जिसके एक-एक पद्य के अध्ययन से चित्त पर गहरा

मूल तमिल में लिखित इस संग्रह के हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी के अनुवाद इस ग्रन्थ में प्रकाशित हैं। इन तीनों अनुवादों से इस ग्रन्थ की शोभा बहुत बढ़ गई है। सबसे पहले हिन्दी अनुवाद के कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर पाठकों को नीतिशास्त्र के परम उदात्त स्वरूप का आस्वाद कराना चाहता हूं।

प्रथम धर्मकाण्ड में धन और जीवन की अनित्यता की यह प्रस्तावना कितनी प्रभावात्मक है—यह देखिए—

दिवस शीघ्र ही बीतते बिना कहे अनजान,
मृत्युदेव भी क्रुद्ध हो आ जाता अनजान।
अर्जित धन ओ भाग्य सब क्षणभंगुर शक्तिशील,
इसीलिए अर्जित करो पुण्यपुंज दृढ़शील।

(1-3)

नियति लाघ कर जगत में जीयेगा भी कौन?
काल पाश से मुक्त भी जीवित रहता कौन?
दानी बनिए इसलिए कल ही तेरे द्वार,
होगा गोचर श्रवण का मृत का हाहाकार।
(1-6)

दान की महिमा का भी अनेक पद्यों में विवेचन हुआ है। सुपात्र को दिया हुआ दान विशेष लाभकारी होता है। इस पद्य में इसी आशय की उपस्थापना है—

योग्य पात्र को यदि किया थोड़ा सा भी दान,
भावी में वह सिद्ध हो अति लाभकारी महान्।
वरगद तरु का बीज है दिखता स्वल्पाकार,
पर उसकी छाया सदा होती वृहदाकार॥

कठोर वचन बहुत दुःखकर होते हैं। इसीलिए विद्वान् व्यक्ति कभी उनका प्रयोग नहीं करते। इस पद्य में मधुर बोलने का इस रूप में विवेचन है—

कटु वचन का उपयोग तो दुखकर ही हो जाय,
यह तो जग में स्पष्ट ही खूब विदित हो जाय।
पंडित कभी न क्रोध से कहते वचन कठोर॥
वक्ता श्रोता उभय को दुखकर वचन कठोर

परस्त्री-गमन सुख की अपेक्षा भय का मूल है। वह कुंभी-पाक नरक तक मनुष्य को ले जाता है। धर्मशास्त्र के इस सिद्धान्त तथा परस्त्री-गमन से होने वाले अनर्थों का अनेक पद्यों में वर्णन किया गया है।

परपतनी संग के सुख से भय बलवान,
परपतनी संसर्ग से, नर हो पापीयान्।
मरण अन्त इस संग से विधान के अनुसार,
हो या कुंभीपाक का नरकमयी स्वीकार

विद्वानों का सत्संग स्वर्ग के समान है—वह सच्चे आनन्द का देने वाला है—आदि उद्देश्यों से सत्संग की गरिमा का उत्तम विवेचन है। ऐसे अनेक पद्य इस प्रसंग में दिए गए हैं—

मेधायुत बहुशास्त्रविद विरोधभावविहीन,

बुद्धिमान अतिसूक्ष्मदृग् पाठक दोषविहीन।
ऐसे बुधसंपर्क से मिलता जो आनन्द,
अमरावतीय हर्ष से वह है सच्चानन्द।

विद्या ही एकमात्र उत्कृष्ट धन है—जो नर का श्रृंगार करती है। राजधर्माध्याय में विद्या के वैभव का चित्र दरशाते हुए लिखा है—

नहीं सजाता मनुज को रंगयुक्त परिधान,
विलसित सुरम्य केश औ चन्दनादि सामान।
सभ्यशीलता चित्र में वर्द्धक विद्यामात्र,
नर को सचमुच रात-दिन बनती भूषणपाल।

बुरा काम कर पेट भरने की अपेक्षा मरना अच्छा है। सम्मान के साथ जीना ही वास्तविक जीना है। इस भाव को इन शब्दों में व्यक्त किया गया है—

कर के निन्दित काम यदि उदर-भरण हो जाय,
उससे तो यह है भली मरण-वरण हो जाय।
मृत तो फिर औ देह में लेता है अवतार,
तन से महान् मान है, बिना मान बेकार।

इस तरह के अनेक-अनेक दिव्य-भावों और नीतितत्त्वों का यह ग्रन्थ भाण्डागार है। इसके हिन्दी अनुवाद में श्री टी. इ. श्रीनिवास राघवन् ने भावों के प्रकाशन में बहुत सफलता प्राप्त की है। इस सफलता के लिए श्री श्रीनिवास राघवन् हमारे अभिनन्दन के पात्र हैं। श्री राघवन् हिन्दी और संस्कृत साहित्य के भी उत्कृष्ट विद्वान हैं। उनके अनुवाद में संस्कृत काव्य की छाया प्रतिबिम्बित होती है। इस पद्यमय अनुवाद से हिन्दी में नीति-साहित्य की जो श्रीवृद्धि हुई है—वह बहुत ही प्रशंसनीय है।

श्री रामदेशिकन् संस्कृत साहित्य में एक सुप्रसिद्ध नाम है। मेरा उनके साथ एक साहित्यिक के रूप में प्रगाढ़ परिचय है और उनमें तामिल और संस्कृत भाषा के वैदुष्य का अद्भुत समन्वय है। दोनों ही भाषाओं पर उनका अनुपम अधिकार है—इसलिए संस्कृत मनीषियों में उनका एक विशेष स्थान है। भारत सरकार की ओर से संस्कृत विद्या के क्षेत्र में असाधारण सेवा के लिए सन् 1971 में उनको राष्ट्रपति सम्मान प्रमाण पत्र एवं दस हजार रुपए वार्षिक मानदेय से

इस अनुवाद में उनके कवित्व के भव्य रूप के दर्शन होते हैं। संस्कृत भाषा में इस प्रकार के वचनामृतों की अभिव्यक्ति का एक विशेष सामर्थ्य है। इस सामर्थ्य के सशक्त अधिष्ठान श्री रामदेशिकन् हैं। यही कारण है कि उनके संस्कृत अनुवाद में ये सारे विचार उद्दीप्त रूप से प्रकट हुए हैं। मूल ग्रन्थ की तरह

भाषा-सरलता, मार्मिकता, गेयता, प्रभावोत्पादकता, सरसता आदि गुण सुरक्षित हैं। इस अनुवाद में श्री रामदेशिकन् साहिब की बहुश्रुतता, विविध-शास्त्र पारंगतता तथा संस्कृत तामिल भाषा विलक्षणता परिलक्षित होती है।

उदाहरण के रूप में कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

मनुष्य के संसार के भोग में लीन होने की दयनीय अवस्था का इस पद्य में मर्मस्पर्शी निरूपण है :—

करे तु दण्डः पतिताः सुदन्ताः,
न स्पष्टता वाचि गतिश्च मन्दा।
अथापि संसारसुखे रतानां,
कथं भवेन्मोक्षपथि प्रवृत्तिः।

इस पद्य के प्रथम भाग में आचार्य शंकर की चर्पटमंजरी की छाया परिलक्षित होती है। इन्द्रिय सुखों से चित्त को अलग कर संन्यास मार्ग में प्रवृत्त होने वाले संयम के धनी व्यक्ति मोक्ष सुख को प्राप्त करते हैं—यह भाव इस पद्य में अतिशय सरस और प्रसादमयी वाणी में निहित है—

पंचेन्द्रियप्राप्य सुखात् स्वचित्तं,
निवर्त्य संन्यासपथि श्रमेण।
यो वा भवेत् स्थापयितुं समर्थः
सोऽयं ध्रुवं मोक्षसुखं लभेत॥

कुलीन व्यक्ति सब तरह से क्षुधा से पीड़ित और वस्त्र विहीन होने पर भी अपने मार्ग को नहीं छोड़ते; जिस प्रकार सिंह भूख से परेशान होने पर भी घास-फूस नहीं खाता—

विच्छिन्नवस्त्राः क्षुधया कृशांगाः,
सन्तोऽपि चोत्कृष्टकुले प्रसूताः।
न लक्ष्यमार्गात् सततं च्यवन्ते
सिंहः क्षुधार्त्तो न तृणं यथात्ति।

सज्जन व्यक्ति उस पर किए गए एक भी उपकार को जीवनभर याद रखेगा और सैकड़ों अपकारों को भूल जाएगा। इसके ठीक विपरीत दुर्जन मनुष्य सात सौ उपकार आप उस पर करें—उनको भूल जाएगा और यदि एक भी

उसका कर दिया गया हो तो उसे जीवन भर नहीं भूलेगा। अत्यन्त माधुर्यमयी शैली में यह आशय इस पद्य में प्रस्तुत है—

एकोपकारं सुजनः स्मरन् वै,
शतापकारानपि विस्मरेत्सः।
एकापकारस्मरणेन नीचो,
न मानयेत् सप्तशतोपकारान्॥

इस प्रकार एक-एक पद्य में श्री रामदेशिकन् के काव्यसौष्ठव के चित्र हम को देखने को मिलते हैं। वास्तव में यह संस्कृत अनुवाद "नालडियार" के मूल स्वरूप के चार चाँद लगाने में सफल हुआ है। तामिल और संस्कृत की काव्यसुषमा को एक स्थान पर देखने का जो स्वर्णिम अवसर श्री रामदेशिकन् ने हमको प्रदान किया है—वह सर्वथा प्रशंसनीय है।

आंग्ल भाषा में भी इन पद्यों के अनुवाद से एक नैतिक साहित्य की समृद्धि हुई है। इन एक दो उदाहरणों से हम सहज ही में यह अनुमान लगा सकते हैं कि किस प्रकार आंग्ल भाषा के अनुवादक ने मूल भावों की अभिव्यक्ति में सफलता प्राप्त की है—

Wealth abides not, share it and enjoy

when you own emple wealth acquired by blameless means, with many sharing eat the grain that steers have troden out! In centre poised prosperity stands with no man, but revolves like the waggon's wheel.

Chapter-I-2

Good friends like trees that afford both shade and fruit. To yield ready protection alike to all, as a tree affords shade to those that seek its shelter when the heat grows fierce; and to live toiling so that many may enjoy the gain, resembling thus a fruit producing tree, is the duty of the manly man.

Chapter 21-202

The base will not seek the company of the wise and good. If you say to the base man. 'Let us without delay go to seek refuge with faultless sages possessors of mature wisdom, 'he will probably get up and make off, exclaiming, 'Let us go and slumber,!' or he will perhaps demur, and change the subject.

Chapter-35-342

यह अंग्रेजी अनुवाद अंग्रेजी साहित्य के महान् मनीषी डा. जी. ए. पोप (इंडियन इंस्टीट्यूट आक्सफोर्ड) तथा श्री एफ. डब्ल्यू इलिस द्वारा किया गया है।

डा. पोप ने तामिल साहित्य और तामिल जनता के दर्शन और चिन्तन को सारे संसार के समक्ष प्रस्तुत करने की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। श्री इलिस द्वारा इस दिशा में किया गया योगदान स्वर्णाक्षरों में उल्लेखनीय है। तामिल के इस आदर्श काव्य-संग्रह में वर्णित नीति-तत्त्वों को सारे संसार के समक्ष रखने का जो गौरवपूर्ण कार्य डा. पोप एवं श्री एलिस ने किया है—उसके लिए उनका नाम सदा स्मरणीय रहेगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ की उपादेयता

वैदिक व श्रमण-दोनों संस्कृतियों में मानव-जीवन का उद्देश्य चार पुरुषार्थों के अनुष्ठान/सम्पादन से जुड़ा है। ये पुरुषार्थ हैं—धन, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें अंतिम लक्ष्य तो मोक्ष-प्राप्ति है।[50] किन्तु, मोक्ष प्राप्ति का साधन धर्म-अर्थ-काम-रूप त्रिवर्ग का अविरुद्ध/सामंजस्यपूर्ण अनुष्ठान है। इनका फल मोक्ष है। सारांश यह है कि समस्त लौकिक व्यवहार धर्म-अर्थ-काम इन तीनों के अनुष्ठान में समाहित हो जाता है। इन तीनों में भी काम की अपेक्षा धर्म व अर्थ की, तथा काम व अर्थ की अपेक्षा धर्म की श्रेष्ठता मानी गई है।[51] धर्म-अविरुद्ध अर्थ व काम का सेवन शास्त्र-संमत माना गया है।[52]

प्रस्तुत ग्रन्थ धर्मार्थकाम-विषयक लौकिक व्यवहार से सम्बन्धित विविध सत्यों/नीतियों/सदुपदेशों के माध्यम से परम सत्य का उद्घाटन करता है। धर्म, अर्थ व काम में श्रेष्ठता-क्रम को ध्यान में रखकर पहले धर्मकाण्ड, फिर अर्थकाण्ड और अन्त में कामकाण्ड का उपस्थापन किया गया है। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र शायद बचा हो, जहां इस ग्रन्थ के सदुपदेश हमारे अभीष्ट-सिद्धि, अनिष्ट-निवारण तथा सामाजिक सम्बन्धों का निर्वाह आदि कार्यों में उपयोगी नहीं होते हों। इसके अतिरिक्त, श्रावकों के लिए जैन शास्त्रों में सप्त व्यसन त्याग; अहिंसादि अणुव्रतों का पालन, अनित्यादि अनुप्रेक्षाओं/सद्भावनाओं का चिन्तन-मनन तथा दानादि लोकोपयोगी प्रशस्त कर्त्तव्यों का जो निर्देश दिया गया है, वे प्राय: सब इस ग्रन्थ के सदुपदेशों में समाहित हो जाते हैं। इस दृष्टि से इस ग्रन्थ की धार्मिक उपादेयता भी निर्विवाद है। इस ग्रन्थ के चिन्तन/मनन/अनुशीलन से व्यक्ति अच्छा नागरिक, सामाजिक, धार्मिक, नीतिकुशल, सज्जन, उदारचिन्तक एवं सद्भावनापूर्ण व्यक्तित्व का धनी हो सकता है।

यह भारतीय वाङ्मय की एकात्मता का उल्लेखनीय उदाहरण है। तामिल, संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी इन चारों भाषाओं के माध्यम से इस ग्रन्थ में भारतीय तत्त्वज्ञान की उदात्तताओं का निरूपण किया गया है। तामिल भाषा का

अनुभूतियों का सुमधुर प्रतिफलन है। इस प्रकार चार भाषाओं में इस सांस्कृतिक कल्पवृक्ष को आरोपित करने का यह महान् कार्य प्राकृत भारती अकादमी जयपुर के निदेशक महोपाध्याय श्री विनयसागर जी ने किया है। इसकी पृष्ठभूमि में उनकी व्यापक परिकल्पना, चरम विकसित मनीषा, विद्वत्ता, कुशलता और दिव्य दृष्टि विराजमान है। यह दक्षिण और उत्तर भारत की मौलिक एकता का प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस प्रकार के विभिन्न भाषाओं के सामंजस्य के उदाहरण दुर्लभ हैं। प्राकृत भारती अकादमी जयपुर के मांनार्ह सचिव श्री देवेन्द्र राज मेहता के अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण मार्गदर्शन तथा आचार्य जी के संपादन ने इसमें स्वर्णसुरभि का योग किया है। वस्तुत: प्राकृत भारती मनीषियों, सदस्यों तथा पदाधिकारियों की सम्मिलित साधना से ही विकसित हुई है।

अब तक 69 से अधिक प्रकाशन और विभिन्न गोष्ठियों तथा कार्यशालाओं के आयोजन आदि कार्यक्रमों के माध्यम से इस संस्था ने प्राकृत भाषा की जो सेवा की है—वह एक ऐतिहासिक कार्य है। इस प्रकाशन ने उन सारे प्रकाशनों और योजनाओं पर एक कीर्तिस्तम्भ की प्रतिष्ठा की है—इसके लिए प्राकृत भारती के पदाधिकारी एवं निदेशक अभिनन्दन के पात्र हैं।

डा. मण्डन मिश्र
कुलपति
श्री लाल बहादुर शास्त्री
राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ
नई दिल्ली-110016

सन्दर्भ

1. मन एव पिता, वाङ् माता (बृहदा. उप. 1/5/7)
2. तस्य धेन्वा वाच: .. . . . . मनो वत्स:। मनसा हि प्रम्राव्यते। मनसा ह्यालोचिते विषये वाक् प्रवर्तते, तस्मान्मनो वत्सस्थानीयम् (बृहदा. उप. ५/8/। पर शांकर भाष्य)।
3. दण्डीकृत काव्यादर्श-1/4.
4. दण्डीकृत काव्यादर्श-1/3,
5. छान्दोग्य उप. 1/1/2, देवी वाचमजनयन्त देवा:

(निरुक्त-11/29 में उद्धृत ऋक्संहिता)

6. वागेव एतत्सर्वं विज्ञापयति, वाचमुपास्स्व (छान्दोग्य. उप. 7/2/1)

7. उत त्व: पश्यन्न ददर्श वाचम्, उतत्व: श्रृण्वन्न श्रृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विसस्रे जायेव पत्य उषती सुवासा:॥
(ऋग्वेद 10/7/4)

8. द्र. ऋग्वेद-संज्ञानसूक्त, अथर्ववेद-3/30/1; यजुर्वेद. 36/18,

9. सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत ।
अत्रा सखाय: सख्यानि जानते, भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधिवाचि॥
(ऋग्वेद 10/71/2)

10. चारु वदानि पितर: संगतेषु (अथर्व. 7/13/1),

11. जिह्वाया अग्रे मधु मे, जिह्वामूले मधूलकम् (अथर्व. 1/34/2)।
भद्रं भवतु मे वच: (पैप्पलाद संहिता, 10/15/1)। -हितोपदेश, 2/13,

12. यत्कल्याणं वदति, तदात्मने (वृहदा. उप. 1/3/2); विदुरनीति-34/77

13. महाभारत उद्योग-पर्व; विदुर नीति, 34/79-80,

14. विदुरनीति, 34/78, 36/5-6, 8

15. विदुरनीति-34/8, 36/5-8; शुक्रनीति-3/62,

16. (क) वैदिक ग्रन्थ :मनुस्मृति-4/138;महाभारत-वनपर्व-210/31;
शांतिपर्व- 287/20; गीता-17/15
(ख) जैन ग्रन्थ : प्रश्नव्याकरण सूत्र-2/2; उत्तराध्ययनसूत्र-19/27;
दशवैकालिक 6/11 तथा वाक्यशुद्धि नामक सप्तम अध्ययन;
अनगारधर्मामृत-4/42; लाटी संहिता-6/5-7; भगवती-आराधना-823-33;
848; हेमचन्द्र-योगशास्त्र-2/55, 61; 1/21, 37

17. राजतरंगिणी-1/7,

18. मालविकाग्निमित्र-1/16,

19. किरातार्जुनीय 14/3-4

20. मम्मट-कृत-काव्यप्रकाश-1/2,

21. निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीविष्वव जायते॥(हर्षचरित-1/16)

22. लेखलिखितप्रणय-सुभाषितामृतरसप्लवेनाप्लावितहृदय: (नलचम्पू, छठा उच्छ्वास)।

23. अविनाशिनमग्राम्यमकरोत् सातवाहन:।
विशुद्धजातिभि: कोशं रत्नैरिव सुभाषितै:॥ (हर्षचरति-1/13)।

24. पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि, जलमन्नं सुभाषितम्।
मूढ़ै: पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा विधीयते॥ (चाणक्यनीति-14/1)

25. सुव्याहृतानि सूक्तानि सुकृतानि ततस्तत:।
संचिन्वन् धीर आसीत शिलाहारी यथा शिलम्॥ (महाभारत, उद्योगपर्व, विदुर नीति-34/33)

26. विदुरनीति-34/32,

27. सूक्तौ शुचावेव परे कवीनां सद्य: प्रमादस्खलितं लभन्ते।
अधौतवस्त्रे चतुरं कथं वा विभाव्यते कज्जलबिन्दुपात:॥
(श्रीकण्ठचरित्र, 2/9)

28. कर्णामृतं सूक्तिरसं विमुच्य, दोषे प्रयत्न: सुमहान् खलानाम्।
निरीक्षते केलिवनं प्रविष्ट: क्रमेलक: कण्टजालमेव॥
(बिल्हण-कृत विक्रमांकदेवचरित-1/29, (ई. 11-12 वीं शती)

29. साध्वीव भारती भाति, सूक्तिसद्व्रतचारिणी।
ग्राम्यार्थवस्तुसंस्पर्शविहिरंगा महाकवे:॥
(कश्मीरी कवि वल्लभदेव 'सुभाषितावली' 145, ई. 12वीं शती)

30. संसारकटुवृक्षस्य द्वे फले ह्यमृतोपमे।
सुभाषितरसास्वाद : संगति सुजने जने॥
—हितोपदेश 1/54

31. कथमिह मनुष्यजन्मा संपरिवसति सदसि विबुधगमितायाम्।
येन न सुभाषितामृतमाल्हादिनिपीतमातृप्ते: (शार्ङ्गधरपद्धति, 140)

32. पुंसामेकमखण्डितं पुनरिदं मन्यामहे मण्डनं
यन्निष्पीडितपार्वणामृतकरस्यन्दोपमा: सूक्तय:॥ (राजेन्द्रकर्णपूर, 74)

33. राजवार्तिक 8/1/13

34. आदिपुराग-1/76

35. आदिपुराण-1/63

36. प्रशमरतिप्रकरण-186-188,

37. तीसे सो वयणं सोच्चा, संजयाए सुभासियं।
अंकुसेण जहा नागो धम्मे संपडिवाइओ।।
(उत्तराध्ययन सूत्र-22/48)। दशवैकालिक अ. 2

38. यथा महार्ह्यरत्नानां प्रसूतिर्मकराकरात्।
तथैव सूक्तिरत्नानां प्रभवोऽस्मात् पुराणतः।।
(आदिपुराण-2/116)
सुभाषितमहारत्नसम्भृतेऽस्मिन् कथाम्बुधौ। (आदि पुराण-1/38)।

39. सुदुर्लभं यदन्यत्र चिरादपि सुभाषितम्।
सुलभं स्वैरसंग्राह्यं यदिहास्ति पदे पदे।। (आदिपुराण-2/122)

40. आदिपुराण-1/88,

41. लुद्धो धणेण, रमणीहिं कामुओ पत्थिवो वि पुहवीए।
विडसोवि सुभासिएहिं को संपत्तो जए तित्तिं।।
(पृथ्वीचन्द्रचरित्र, 1/229. पृ. 17)

42. बोधयन्ति सतां बुद्धिं सिद्धसेनस्य सूक्तयः। (हरिवंशपुराण-1/30)।

43. सागरः सूक्तिरत्नानां सेतुबन्धादि यन्मयम्। (काव्यादर्श)।

44. आदिपुराण-25/287

45. आदिपुराण-19/77-102

46. द्रष्टव्यः प्रो. के. एस. रामचन्द्र राव कृत 'जैनिज्म इन साउथ इण्डिया'
पृष्ठ-1,

47. वृहत्कथाकोष; रयधूकृत महावीरचरित; भारतीय इतिहास : एक दृष्टि (डा. ज्योतिप्रसाद जैन) पृ., 233-35; आगम और त्रिपिटक : एक अनुशीलन (डा. नगराज मुनि) भाग-2, पृ. 617-19, 377-84,

48. द्रष्टव्य: 'तिरुवल्लुवर एण्ड हिज तिरुक्कुरल' (ता. ना. सुब्रह्मण्यम्), प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, भूमिका भाग,

49. धर्मार्थिकाममोक्षाणां मोक्षाख्यमेव कार्यं परं कार्यम्।

प्रशमरतिप्रकरण-148 पर हरिभद्र-टीका)।

50. धर्मार्थिकाममोक्षाणां युगपत्समवाये पूर्वः पूर्वो गरीयान्

(नीतिवाक्यमृत 3/15)।

महाभारत, वनपर्व, 33/38-39; 313/102

51. परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ। मनुस्मृति-4/176; जैनहरिवंश पुराण-9/137; विष्णुपुराण-3/11/7; नीतिवाक्यामृत-3/2; धर्मार्थाविरोधेन कामं सेवेत (कौटिल्य अर्थशास्त्र-1/7/3)।

CONTENTS

DHARMAKĀṆḌA

1 : SAṆYĀSA DHARMĀDHYĀYA

		Pages
Ch.1	T செல்வநிலையாமை E The Instability of Prosperity S :अर्थानित्यत्वम्	1-5
Ch. 2	T இளமை நிலையாமை E Youth Abides Not S. यौवनानित्यत्वम्	6-10
Ch. 3	T யாக்கை நிலையாமை E The Bodily Frame Endures not S शरीरानित्यत्वम्	11-15
Ch. 4	T அறன் வலியுறுத்தல் E The Mights of Virtue S धर्मवैशिष्ट्यम्	16-20
Ch. 5	T தூய்தன்மை E Impurity S पूततराहित्यम्	21-25
Ch. 6	T துறவு : E Renunciation S संन्यास :	26-30
Ch. 7	T சினமின்மை E The Absence of Anger : Meekness S कोपनिरास	31-35

2 : GṚHASTHA DHARMĀDHYĀYA

CH. 8	T பொறையுடைமை E Patience S सहनशीलता	36-40
Ch. 9	T பிறன்மனை நயவாமை E The Not Desiring other Men's Wives S परदारविमुखता	41-45

Ch. 10 T ஈகை
E Liberality 46-50
S दानम्

Ch. 11 T பழவினை
E Old Deeds 51-55
S जन्मांतर कर्म

Ch. 12 T மெய்ம்மை
E Truth : Reality 56-60
S सत्यम्

Ch. 13 T தீவினையச்சம்
E Dread of Evil Deeds 61-65
S दुष्कर्मभीतिः

ARTHAKĀṆḌA

1: RĀJADHARMĀ DHYĀYA

Ch. 14 T கல்வி
E Learning 66-70
S विद्या

Ch. 15 T குடிப்பிறப்பு
E High Birth 71-75
S सत्कुलप्रसूतिः

Ch. 16 T மேன்மக்கள்
E Great Men 76-80
S महान्तः

Ch. 17 T பெரியாரைப் பிழையாமை:
E Aviodance of offence to the Great 81-85
S महात्मनिंदावर्जनम्

Ch. 18 T நல்லினஞ்சேர்தல்:
E Association with the Good 86-90
S सत्समागमः

Ch. 19 T பெருமை:
E (Moral) Greatness 91-95
S :महत्वम्

Ch. 20 T தாளாண்மை:
E Persevering Energy 96-100
S प्रयत्नशीलता

2 : SNEHADHARMĀDHYĀYA

Ch. 21 T சுற்றந் தழால் :
E The support of kindred 101-105
S बन्धुपरिपालनम्

Ch. 22 T நட்பாராய்தல் :
E Scrutiny in Forming Friendships 106-110
S स्नेह-परामर्श:

Ch. 23 T நட்பிற் பிழைபொறுத்தல் :
E Bearing and Forbearing in Friendship 111-115
S मित्रापराधसहनम्

Ch. 24 T கூடாநட்பு :
E Unreal Friendship 116-120
S अनुचित मैत्री

3 : SUKHA DHARMĀDH.YĀYA

Ch. 25 T அறிவுடைமை:
E The Possession of Practical Wisdom. 121-125
S ज्ञान-विशिष्टता

Ch. 26 T அறிவின்மை :
E The Lack of Practical Wisdom 126.130
S विवेकशून्यता

Ch. 27 T நன்றியில் செல்வம் :
E Wealth that Profits not 131-135
S व्यर्थ-वित्त

4 : DUKHADHARMĀDYĀYA

Ch. 28 T ஈயாமை :
E Absences of charity : or, the miser. 136-140
S दान-विमुखता

Ch. 29 T இன்மை :
E Poverty 141-145
S सर्ववस्तुशून्यता

Ch. 30 T மானம் :
E Honour (Self-respect) 146-150
S मान:

Ch. 31 T இரவச்சம் :
E The Dread of Mendicancy 151-155
S याच्ञाभीति:

5 : SĀMĀNYADHARMĀDHYĀYA

Ch. 32 T அவையறிதல்:
E The Knowledge of the Assembly 156-160
S सभातत्त्वपरिज्ञानम्

6 : SATRU-DHARMADHYAYA

Ch. 33 T புல்லறிவாண்மை :
E Insufficient Knowledge 161-165
S अल्पज्ञानवत्त्वम्

Ch. 34 T பேதைமை:
E Utter Folly 166-170
S जाड्यम्

Ch. 35 T கீழ்மை:
E Lowness 171-175
S नीचकृत्यम्

Ch. 36 T கயமை
E Baseness 176-180
S मौढ्यम्

7 : NĀNĀNĪTI BODHAKĀDHYĀYA

Ch. 37 T பன்னெறி :
E Miscellaneous Topics 181-185
S नानानीत्यधिकारः

KARMAKĀṆḌA

1 : SUKHA-DUKHA DHARMĀDHYĀYA

Ch. 38 T பொதுமகளிர் :
E Wantons 186-190
S पण्याङ्गना

2 : DUKHADHARMĀDHYĀYA

Ch. 39 T கற்புடைமகளிர் :
E Chaste Matronhood 191-195
S पवित्रता

Ch.40 T காமநுதலியல் :
E The Characteristics of Love 196-200
S सुखानुभवलक्षणम्

CHAPTER I.
THE INSTABILITY OF PROSPERITY
अधि-१. धर्मकाण्ड-धन की अनित्यता

1. அறுசுவை உண்டி அமர்ந்தில்லாள் ஊட்ட
மறுசிகை நீக்கியுண் டாரும்—வறிஞராய்ச்
சென்றிரப்பர் ஓரிடத்துக் கூழ்எனின் செல்வமொன்
றுண்டாக வைக்கற்பாற் றன்று. க

Who today dine luxuriously tomorrow beg

Those who ate erewhile, course after course, food of six flavours, supplied by their complaisant spouse, now roam as paupers and beg a mess of pottage here and there; if so, let wealth be counted as a thing of nought! 1

स्वदारहस्तार्पितषड्रसान्न भोक्ताऽपि दारिद्र्यवशात् कदाचित्।
याचेत चेदन्यगृहे यवागूं नित्यं कथं स्याद् धनमत्र लोके ॥१॥

निज पत्नी के हाथ से, दत्त भोज सुस्वाद।
करते नर दुर्भाग्य से, भोगें कभी विषाद॥
पर घर जा यव के लिए, यदि माँगे नर वे हि।
तब धन कैसे नित्य हो, नहीं नित्य जाने हि ॥१॥

2. துகள்தீர் பெருஞ்செல்வம் தோன்றியக்கால் தொட்டுப்
பகடு நடந்தகூழ் பல்லாரோ டுண்க
அகடுற யார்மாட்டும் நில்லாது செல்வம்
சகடக்கால் போல வரும். உ

Wealth abides not, share it and enjoy

When you own emple wealth acquired by blameless means, with many sharing eat the grain that steers have troden out! In centre poised prosperity stands with no man, but revolves like the waggon's wheel. 2

नैकत्र तिष्ठेत् धनमत्र नित्यं चक्रारवत् स्यादधरोत्तरं तत्।
स्थिते हि भाग्ये कृषिमूललभ्य-मन्नं तु भुञ्जीत सबन्ध

अस्थिर होता वित्त है, गाड़ीचक्र समान।
बदल-बदल कर जगत में, ऊंच नीच गतिमान॥
यदि खेती से प्राप्त हो, अनाज भाग्याधीन।
भोजन कर ले तो तभी, बन्धु बीच आसीन ॥२॥

3. யானை யெருத்தம் பொலியக் குடைநிழற்கீழ்ச்
சேனைத் தலைவராய்ச் சென்றோரும்—ஏனை
வினையுலப்ப வேறாகி வீழ்வர்தாம் கொண்ட
மனையாளை மாற்றார் கொள. ௩

Mighty warriors fall.

Those who rode resplendent forth on the neck of an elephant, beneath the state umbrella's shade, as the leaders of the host, when *'other deeds'* destroy, shall change and fall, while foes lead away their wives as captives. 3

गजाग्रसम्बद्धसितातपत्र-च्छायाश्रिता सैन्ययुताः प्रयान्तः ।
३ भूपाश्च पुण्यापगमे स्वपत्नीं हृतां परैर्वीक्ष्य भवेयुरार्ता ॥३॥

गज पर स्थित सित छत्र की, छाया में स्थित भूप।
चार अंग के साथ ही, करते सैर अनूप॥
कभी-कभी दुर्भाग्य से, बनकर अपहृतदार।
मानहीन गतपुण्य हो जायेंगे बेकार ॥३॥

4. நின்றன நின்றன நில்லா எனவுணர்ந்து
தொன்றின ஒன்றின வல்லே செயின்செய்க
சென்றன சென்றன வாழ்நாள் செறுத்துடன்
வந்தது வந்தது கூற்று. ௪

Do your duty, knowing the instability of all things. Time flies! Death comes!

The things of which you said, 'they stand, they stand,' stand not; mark this, and perform what befits yea! what befits, with all your power! Your days are gone! and death close pressing on is come, is come! 4

प्रयान्ति शीघ्रं दिवसाः क्षणेन क्रुद्धः समायाति यमोऽपि शीघ्रम्।
भाग्यास्थिरत्वं सहसा विचिन्त्य पुण्यार्जनेच्छा यदि ते त्वर त्वम्॥४॥

दिवस शीघ्र हैं वीतते, विना कहे अनजान।
मृत्यु देव भी क्रुद्ध हो, आ जाता अनजान॥
अर्जित धन औ भाग्य सव, क्षण भंगुर क्षतिशील।
इसीलिए अर्जित करो, पुण्य पुंज दृढ़शील॥४॥

5. என்னானும் ஒன்றுதம் கையுறப் பெற்றக்காற்
பின்னாவ தென்று பிடித்திரா—முன்னே
கொடுத்தார் உயப்போவர் கோடில்தீக் கூற்றம்
தொடுத்தாறு செல்லும் சுரம். ௫

Give before death comes.

When you have gained and hold in hand any single thing, retain it not with the thought, 'This will serve some other day!' Those who have given betimes shall escape the desert road along which death, an unyielding foe, drags his captives away. 5

पश्चादितीमां मतिमत्र मुञ्च प्रदीयतां प्राप्तधनं परेभ्यः।
क्रूरान्तकप्रेषितपाशजालाद् लभ्येत मुक्तिस्तव दानपुण्यात्॥५॥

देने की मति बाद को, तजो मनुज! तत्काल।
दान करो पर के लिए, अपना अर्जित माल।
क्रूर काल के पाश से, जब तुम हो नहि मुक्त।
तब तव प्रदान पुण्य से, होंगे ही निर्मुक्त॥५॥

6. இழைத்தநாள் எல்லை இகவா பிழைத்தொரீஇக்
கூற்றம் குதித்துய்ந்தார் ஈங்கில்லை—ஆற்றப்
பெரும்பொருள் வைத்தீர் வழங்குமின் நாளைத்
தழீஇம் தழீஇம் தண்ணம் படும். ௬

Death inevitable. Hoard not!

Man's days pass not their assigned bound. None here on earth have ever escaped death's power, made off and got free. O hoarder of ample wealth, dispense it! On the morn the funeral drum will sound. 6

न कोऽपि जीवेत् विधिमप्यतीत्य न कोऽपि दृष्टो यमपाशमुक्तः।
तस्मात्प्रदेयं धनिकाः! श्च एव श्रूयेत गेहे मृतिवाद्यघोषः॥६॥

नियति लांघकर जगत में, जीयेगा भी कौन।
काल-पाश से मुक्त भी, जीवित रहता कौन॥
दानी बनिये इसलिये, कल ही तेरे द्वार।
होगा गोचर श्रवण का, मृत का हाहाकार॥६॥

7. தோற்றம்சால் ஞாயிறு நாழியா வைகலும்
கூற்றம் அளந்துநும் நாளுண்ணும்—ஆற்ற
அறஞ்செய் தருளுடையீர் ஆகுமின் யாரும்
பிறந்தும் பிறவாதார் இல். ௭

Death inevitable.

Death every day takes that fount of light the sun as a measure, metes out your days, and so devours. Do deeds of virtue full of kindly grace. Though all are born, none are exempt from death. 7

सूर्याख्यमानेन यमस्तु मित्वा त्वद्जीवितं नित्यमसौ भुनक्ति।
प्रीतो भव त्वं सकलेषु, दानं कुर्वन्यथा ते जननं वृथैव॥७॥

यम तो रविमय माप से, तव जीवन आहार।
लेता है हर रोज ही, नहीं रहो अनुदार॥
जनता का अनुराग कर, कर ले सम्यक दान।
ना तो तेरा जन्म भी, वृथा रहे सुनसान॥७॥

8. செல்வர்யாம் என்றுதாம் செல்வுழி எண்ணாத
புல்லறி வாளர் பெருஞ்செல்வம்—எல்லில்
கருங்கொண்மூ வாய்திறந்த மின்னுப்போல் தோன்றி
மருங்கறக் கெட்டு விடும். ௮

The wealth of the foolish like the lightning's flash.

The ample wealth of men of mean understanding, who say, 'We're rich,' yet ponder not their path and end appears, and perishes, and leaves no trace; like the flash, when the black thunder-cloud by night opens its mouth. 8

धनाभिमानात् परलोकचिन्ता विहीनमूढेषु यदस्ति भाग्यम्।
तन्मेघमध्योद्भवविद्युतेव भूत्वाऽथ रात्रौ झटिति प्रणश्येत् ॥८॥

वैभव के अभिमान से, मूढ न लखता धर्म।
वनता है दयनीय ही, उसका सुभाग्य -वर्म॥
उसका ही सौभाग्य भी, निश्चित तडित समान।
उत्थित कुछ ही समय में, फिर पाता अवसान॥८॥

9. உண்ணான் ஒளிநிறான் ஓங்குபுகழ் செய்யான்
துன்னரும் கேளிர் துயர்கடீர்யான்—கொன்னே
வழங்கான் பொருள்காத் திருப்பானேல் அஆ
இழந்தான்என் றெண்ணப் படும். கூ

The miser loses all.

He eats not, sheds no light of splendour around, performs no deeds that merit lofty praise, soothes no sorrow that choise friends feel, spends nought, but hoards his wealth in vain: 'Aha! he's lost it all,' shall men pronounce. 9

कीर्त्यार्जनं यत्स्थितकीर्तिरक्षा बन्धोस्तु साह्यं स्वकृतोपभोगः।
निष्काम्यदानं च विना धनं यो रक्षेत् स वित्तेन विहीन एव॥९॥

अपने अनुभव के लिए, बंधु-साहय के अर्थ।
नाम कमाने के लिए, तथा मान के अर्थ॥
धनोपयोग न जो करें, उसको तो अनुदार।
अर्थसहित भी धनरहित, कहता है संसार॥९॥

10. உடாஅதும் உண்ணாதும் தம்உடம்பு செற்றும்
கெடாஅத நல்லறமும் செய்யார்—கொடாஅது
வைத்தீட்டி னர்இழப்பர் வான்தோய் மலைநாட
உய்த்தீட்டும் தேனீக் கரி. கூ

The miser like the honey-bee.

Those who stint in clothes and food, and mortify their bodies, yet do not deeds of deathless virtue, and bestow nothing, hoarding shall suffer loss:— Lord of the cloud-capped hills!—this the hoarding honey-bee attests. 10

वस्त्राण्यधृत्वा स्वयमप्यभुक्त्वा सद्दानधर्माविविधाय लोके।
सम्पाद्य निक्षिप्तधनं विनश्येत् तन्मक्षिकानीतमधोः समानम्॥१०॥

सुवस्त्र जो नहि पहनता, लेता नहि आहार।
दान धर्म करता नहीं, रखता वित्त अपार॥
तत्क्षण कोई अपहरण, करता उसका वित्त।
ज्यों मधुमक्खी से जमा, मधु विनष्ट अनिमित्त ॥१०॥

Ch. 2. Youth Abides Not

२. यौवन की अनित्यता

11. நரைவரும் என்றெண்ணி நல்லறி வாளர்
குழவி யிடத்தே துறந்தார்—புரைதீரா
மன்னா இளமை மகிழ்ந்தாரே கோலூன்றி
இன்னாங் கெழுந்திருப் பார். ௧

Age will come. Be wise early

'Grey eld will come,' - the wise remembering this renounce the world even in tender age; but they who joy in youth unstable, never free form fault, shall erewhile painfully rise up leaning on a staff. 11

ये भाविवृद्धत्वभिया विरक्ता: सद्यौवने ते किल बुद्धिमन्त: ।
ये यौवने भोगरतास्तु पश्चात् खिन्ना भवेयुर्धृतदण्डहस्ता: ॥११॥ =

भावि जरा की बुद्धि से, जो नहि कामाधीन।
यौवन में भी वे नहीं, होते विवेकहीन॥
यौवन में जो भोगरत, रहते विषयाधीन।
पछताएंगे बाद में, वे हो दण्डाधीन ॥११॥

12. நட்புநார் அற்றன நல்லாரும் அஃகினார்
அற்புத் தளையும் அவிழ்ந்தன—உட்காணாய்
வாழ்தலின் ஊதியம் என்னுண்டாம் வந்ததே
ஆழ்கலத் தன்ன கலி. ௨

All is vanity

Served are the ties of friendship; minished are the pleasant ones; love's bonds are loosened too; then look within and say, what profit is there in this joyous life of thine? The cry comes up as from a sinking ship! 12

स्नेहो विनष्टो विमुखा: प्रियास्ता: क्षीणोऽभवद्बन्धुजनानुराग: ।
किं वानुभूतं वद जीवितेऽस्मिन् निमग्ननौकासदृशोऽसि चान्ते ॥१२॥

प्रिया-योग औ मित्रता, बन्धुवर्ग का पाश।
ये सब विनष्ट हो गये, टूटे सूख के पाश॥
क्या तुमने अनुभव किया, अपने यौवन-काल।
जलनिमग्न नौका सदृश,आखिर हो तव हाल ॥१२॥

13. சொல்தளர்ந்து கோல்ஊன்றிச் சோர்ந்து நடையினராய்ப்
பல்கழன்று பண்டம் பழிகாறும்—இல்செறிந்து
காம நெறிபடரும் கண்ணினர்க் கில்லையே
ஏம நெறிபடரு மாறு. கூ

Men are loath to give up bodily pleasures.

Speech falters, they lean on a staff, and walk tottering, their teeth fall out; yet, till the vessel (the body) is scorned by all, they linger in the house, still indulging fond desires; to those no way of safety opens out. 13.

करे तु दण्ड: पतिता: सुदन्ता: न स्पष्टता वाचि, यतिश्च मन्दा।
अथाऽपि संसारसुखे रतानां कथं भवेन्मोक्षपथि प्रवृत्ति: ॥१३॥

लाठी तो है हाथ में, मुख तो दन्तविहीन।
गति भी तो नहि तीव्र है, वचन है स्पष्टहीन॥
फिर भी लौकिक भोग में, नित है नर तल्लीन।
कैसे विमुक्ति मार्ग में, होगा चित्त विलीन ॥१३॥

14. காழாத் தளராத் தகைநடுங்காத் தண்டுன்றி
வீழா இறக்கும் இவள்மாட்டும்—காழிலா
மம்மர்கொள் மாந்தர்க் கணங்காகுந் தன்கைக்கோல்
அம்மனைக்கோ லாகிய ஞான்று. சு

The cherished wife of your youth.

To men that cherish weak desire for her that's doomed to droop and fail, supporting her palsied limbs with a staff, and then to fall and pass away, what anguish comes, when she grasps in her hands the staff her mother held! 14.

कुब्जा च शुष्का धृतदण्डहस्ता चलच्छरीरा मरणोन्मुखीयम्।
आसीत्पुरा कामुककाम्यकाया किं यौवनं शाश्वतमस्ति लोके? ॥१४॥

कामुक कामित अंगना, अब कुब्जा चलदेह।
मरणासन है शुष्कतन, लाठी पर धृतदेह॥
इस चंचल संसार में, क्या कोई है नित्य।
यौवन की हालत कभी, नहि शाश्वत है नित्य ॥१४॥

15. எனக்குத்தா யாகியாள் என்னைஈங் கிட்டுத்
தனக்குத்தாய் நாடியே சென்றாள்—தனக்குத்தாய்
ஆகி யவளும் அதுவானால் தாய்த்தாய்க்கொண்
டேகும் அளித்திவ் வுலகு. ௫

Endless series of successive generations.

My mother bare me, left me here, and went to seek her mother, who in the selfsame manner has gone in search; and thus in ceaseless round goes on the mother-quest. Such is the grace this world affords! 15.

प्रसूय मां मज्जननी मृताऽथ चकार मात्रन्तरगर्भवासम्।
तथैव तस्या जननीति लोके नित्या पुनर्जन्मपरम्परेयम् ॥१५॥

माँ मुझको देकर जनम, रहती मरणासन्न।
फिर औ माता के गर्भ में, होती जन्मासन्न॥
तत्पुत्री भी जन्म औ, मरण उभय से ग्रस्त।
पुनर्जन्म की रीति तो, नित्य धर्म से ग्रस्त ॥१५॥

16. வெறிஅயர் வெங்களத்து வேல்மகன் பாணி
முறியார் நறுங்கண்ணி முன்னர்த் தயங்க
மறிகுளகு உண்டன்ன மன்று மகிழ்ச்சி
அறிவுடை யாளர்கண் இல். ௬

The lamb before the sacrifice.

The lamb in the ruddy slaughter-house will crop the fragrant shoots that dangle from the garland in the slayer's hand; such transient gladness of the thoughtless, youthful hour is never found amid the wise. 16.

वध्यस्थले घातुकहस्तलग्न-मालालसत्पल्लवभक्षणेन।
अजो वधार्हो लभते सुखं यत् तत्तुल्यसंसारसुखं क इच्छेत्? ॥१६॥

वध्य-भूमि में वधकरी, धरता है कर-माल।
इस माला में विलसता, किसलय का है माल॥
उस पल्लव के अशन से, जो सुख पाता जन्तु।
उस सुख के सम भव-हर्ष, कौन चाहता जन्तु ? ॥१६॥

17. பனிபடு சோலைப் பயன்மர மெல்லாம்
கனிஉதிர்ந்து வீழ்ந்தற் றிளமை—நனிபெரிதும்
வேற்கண்ணாள் என்றிவளை வேண்மின் மற்றிவளும்
கோற்கண்ண ளாகும் குனிந்து. எ

Fruit only ripens to fall. Youth leads to decay

The sweet fruit from every tree that bears in the dewy grove must fall to earth. Thus youth decays. Desire not her whose eyes gleam bright as darts. Full soon she too will walk bent down; with a staff to aid her dim sight. 17.

वनं फलाढ्यं तु यथैव शून्यं स्याद्यौवनं योषिति तद्वदेव।
शूलाक्षिणी सेति न वाञ्छयेमां वृद्धा ततः स्यात् किल दण्डहस्ता ॥१७॥

फल-फूलों से सहित वन, कभी-कभी सुनसान।
ज्यों हो त्यों यौवन अचिर, स्त्री का विनाशवान॥
युवती शूलाक्षिणी सम, फिर बूढ़ी बन जाय।
लाठी लेकर हाथ में, फिरती हो असहाय ॥१७॥

18. பருவம் எனைத்துள பல்லின்பால் ஏனை
இருசிகையும் உண்டோ என்று—வரிசையால்
உள்நாட்டம் கொள்ளப் படுதலால் யாக்கைக்கோள்
எண்ணுர் அறிவுடை யார். அ

Constant anxieties about health.

'How old are you ? 'How last your teeth?' and, 'Do you eat two courses yet?' ' men ask with kindly courtesy. By such close questions urged, the wise will learn to judge the body as a thing of nought. 18.

"कियद्वयः किन्नु दृढाः सुदन्ताः वेलाद्वयान्नं किमु लभ्यते ते"।
इत्थं बुधाः सुष्ठु विमृश्य चान्ते न यौवनं ते बहुमानयन्ति ॥१८॥

तेरी कितनी उम्र है, दन्तपंक्ति दृढ़शील।
क्या वेला द्वय अन्न भी, होता पाचनशील॥
यों मानस में सोचकर, नित आखिर धीमान।
यौवन का करते नहीं, मर्यादा संमान ॥१८॥

19. மற்றறிவாம் நல்வினை யாமிளையம் என்னாது
கைத்துண்டாம் போழ்தே கரவா தறஞ்செய்ம்மின்
முற்றி யிருந்த கனியொழியத் தீவளியால்
நற்காய் உதிர்தலும் உண்டு.

Against Procrastination.

Say not, 'in after time we'll learn virtue, we're young;' but while wealth is yours conceal it not; do virtuous deeds. When evil tempests rage, not the ripe fruit alone, but the unripe fruit's fair promise also falls. 19.

"युवाहमस्मी" ति मतिं त्यज त्वं प्रयच्छ सद्यो यदिहात्र लब्धम्।
प्रचण्डवातेन पतन्ति वृक्षात् फलान्यपक्वान्यपि वै कदाचित् ॥१९॥

"मैं जवान" की धारणा, तज लो तुम हे जीव।
जो धन कर में लब्ध हो, वह हो देय अतीव॥
आंधी से तरु से तथा, गिरते हैं फलजाल।
त्यों यौवन में भी मरण, होता है विकराल ॥१९॥

20. ஆள்பார்த் துழலும் அருளில்கூற் றுண்மையால்
தோள்கோப்புக் காலத்தால் கொண்டுய்ம்மின் - பீள்பிதுக்கிப்
பிள்ளையைத் தாயலறக் கோடலால் மற்றதன்
கள்ளம் கடைப்பிடித்தல் நன்று. க0

The infant slain by death.

Relentless death is roaming round, and eyes his man! 'Tis true. Take up your wallet, scape betimes. He bears away the new-born babe, while the mother sorely laments. It is good to bear in mind his guile. 20

सज्जोऽस्ति कालो मनुजान्निहन्तुं तद्धर्मपाथेयमुपार्जयाद्य।
निष्कास्य गर्भाच्छिशुघातकस्य यमस्य नैर्घृण्यमवेहि सम्यक् ॥२०॥

नरवध में तैयार हो, फिरता है यमराज।
इसीलिये तुम पुण्य का, करो अभी से काज॥
गर्भ छेद कर शिशु तथा, माँ का मारक काल।
सचमुच उसका काम है, क्रूर तथा विकराल ॥२०॥

Ch. 3. The Bodily Frame Endures not
३. शरीर की अनित्यता

21. மலைமிசைத் தோன்றும் மதியம்போல் யானைத்
தலைமிசைக் கொண்ட குடையர்—நிலமிசைத்
துஞ்சினர் என்றெடுத்துக் தூற்றப்பட் டாரல்லால்
எஞ்சினர் இவ்வுலகத் தில். க

Mighty kings die.

Even kings that rode on elephants beneath the state umbrella's shade, like the moon appearing over some hill, have had their names proclaimed on earth as dead;—not any in this world have escaped. 21.

शैलाभहस्त्यग्रशशाङ्कतुल्य- च्छत्रावृता पार्थिवसत्तमाश्च।
मृत्युं गतास्तद्विदितं समेषां मृत्योर्विमुक्तः क इहास्ति लोके ॥२१॥

शैलशिखर शत चांद सम, गजेन्द्र पर आरूढ।
श्वेत छत्र धर नृप सभी, मरण शयन आरूढ॥
हमने तो यह मामला, देखा सुना व कान।
किन्तु मरण से त्राण का, देखा सुना न कान ॥२१॥

22. வாழ்நாட் கலகா வடிகொளி மண்டிலம்
வீழ்நாள் படாஅ தெறுதலால்—வாழ்நாள்
உலவாமுன் ஒப்புர வாற்றுமின் யாரும்
நிலவார் நிலமிசை மேல். உ

Time is fleeting,—use it.

As the measure of your days the shining orb each day unfailing rises; so before your joyous days have passed away, perform ye 'fitting deeds of grace'; for none abide on earth. 22.

तवात्र वस्तुं दिवसाः सुक्लृप्ताः ते यान्ति नित्यं सह सूर्यगत्या।
तदानमत्रैव विधेहि शीघ्रं न कोऽपि जीवेद् विधिमप्यतीत्य ॥२२॥

पहले ही तेरे दिवस, विधि से हो निर्णीत।
रवि की गति के साथ हैं, तव दिन खूब व्यतीत॥
इसीलिए सम्यक अभी, कर लो औ को दान।
नियाते जीतकर है नहीं, कोई भी इनसान ॥२२॥

23. மன்றம் கறங்க மணப்பறை யாயின
அன்றவர்க் காங்கே பிணப்பறையாய்ப்—பின்றை
ஒலித்தலும் உண்டாமென் றுய்ந்துபோம் ஆறே
வலிக்குமாம் மாண்டார் மனம். ௩

Mutability of earthly joys.

The marriage drums that sounded out in the festive hall, there and that very day have served for him as funeral drums! Men of lofty minds will note that thus it haps, and will strive to gain the way to escape. 23.

यत्राभवन्मङ्गलवाद्यघोषः तत्रैव चामङ्गलवाद्यनादः।
भवेत् क्षणेनेति बुधा विदित्वा कुर्वन्ति बुद्धिं किल मुक्तिमार्गे ॥२३॥

जहां सुनायी है पड़ा, मंगल-वादन-नाद।
वहां सुनायी पड़ रहा, अशुभ पटह का नाद॥
देह स्थिति की क्षणिकता, अवगत कर बुध लोग।
मुक्ति मार्ग की ओर हो, करते हैं अवलोक ॥२३॥

24. சென்றே எறிப ஒருகால் சிறுவரை
நின்றே எறிப பறையினை—நன்றேகாண்
முக்காலைக் கொட்டினுள் மூடித்தீக் கொண்டெழுவர்
செத்தாரைச் சாவார் சுமந்து. ௪

The funeral.

They march and then strike once! A little while they wait, then strike the drum a second time. Behold, how fine! The third stroke sounds. They veil it, take the fire, and go forth:—the dying bear the dead! 24.

श्रुत्वा त्रिवारं मृतवाद्यघोषं ततो मृतान् सुष्ठु पिधाय वस्त्रैः।
अग्रेऽग्निहस्ताश्च नयन्ति दग्धुं अवेहि तत्त्वं तदिदं समीक्ष्य ॥२४॥

सुनकर मृत का वाद्य-रव, इक दो तीनों वार।
फिर मृत शव को बांधकर, कपड़ों से बहुवार॥
फिर तो दाहर के लिए, नर मरघट की ओर।
जाते हैं लेकर अनल, सोचो तन की ओर ॥२४॥

25. கணம்கொண்டு சுற்றத்தார் கல்லென் றலறப் [டீண்
பிணம்கொண்டு காட்டுய்ப்பார்க் கண்டும்—மணங்கொண்
டுண்டுண்டுண் டென்னும் உணர்வினாற் சாற்றுமே
டொண்டொண்டொ டென்னும் பறை. டு

Death pours contempt on human joys.

To him, who, although he sees them bear the corpse to the burning ground, while friends in troops loudly lament, boldly asserts that wedded life is bliss on earth, the funeral drum speaks out, and mocks his vain utterance. 25.

रुदत्सु बन्धुष्वथ वै मृतानां श्मशानयात्रां प्रसमीक्ष्य चापि।
ऊद्वात्र सौख्यानुभवे रतानां नैराश्यतां वाद्यरवो व्यनक्ति ॥२५॥

मृत शव लखकर बंधुजन, रोते हैं कर हाय।
ले जाते शमशान फिर, ढोकर मृत का काय॥
फिर भी तन-संसर्ग में, जो भी हैं आसक्त।
उसे बताना पटह-रव, विरक्ति में आसक्त ॥२५॥

26. நார்த்தொடுத் தீர்க்கிலென் நன்றாய்ந் தடக்கிலென்
பார்த்துழிப் பெய்யிலென் பல்லோர் பழிக்கிலென்
தோற்பையுள் நின்று தொழிலறச் செய்தூட்டும்
கூத்தன் புறப்பட்டக் கால்.

The dead body

When the '*soul*', that, taking its stand in this skin-clad frame, has fully wrought its works, and partaken of life's experiences, has gone forth, what matters it whether you attach ropes to the body and drag it away, or carefully bury it, or throw it aside in any place you light upon, or *if* many revile the departed? 26.

स्थित्वा शरीरे सुविधाय कर्म विनिर्गते जीवनटे, शवस्य।
रज्ज्वा तु बन्धस्त्वथ संस्कृतिर्वा प्रक्षेपणं वा क्रियतां न हानिः ॥२६॥

तन में रहकर जीव नट, करता है बहु काम।
फिर वह शरीर छोड़कर, जाता है सुरधाम॥
जीव रहित शव देह को, रस्सी से लो बांध।
अथवा फेंको भी कहीं, शव तो है अब शान्त ॥२६॥

27. படுமழை மொக்குளில் பல்காலும் தோன்றிக்
கெடுமிதோர் யாக்கையென் றெண்ணித்-தடுமாற்றம்
தீர்ப்பேம்யாம் என்றுணரும் திண்ணறி வாளரை
நேர்ப்பார்யார் நீள்நிலத்தின் மேல்.

The body a bubble.

'Like a bubble, that in pelting rain appears full oft, and disappears, is this our frame.' So sages have judged, steadfast in wisdom, and have decided to end this dubious strife. On this wide earth who equal these? 27.

शरीरमेतज्जलबुद्बुदेन समानमित्येतदिहावगम्य।
संसारबन्धादथ मुक्तिकामैः धीरैः समानाः कति वाऽत्र सन्ति ॥२७॥

जल बुद्बुदसम देह है, क्षण भंगुर क्षयशील।
मिट जाता दस तत्त्व से, जगत-मोह का शील॥
भव बंधन से मुक्ति के, इच्छुक कितने लोग।
होते हैं इस विषय में, इने-गिने ही लोग ॥२७॥

28. யாக்கையை யாப்புடைத்தாப் பெற்றவர் தாம்பெற்ற
யாக்கையர் லாய பயன்கொள்க—யாக்கை
மகிலியாடு மஞ்சுபோல் தோன்றிமற் றுங்கே
நிகிலியாது நீத்து விடும்.

The body like a cloud on the hillside.

Those who've gained and held fast by this well-knit frame (a human body) should take the gain the body they have gained is intended to yield. Like a cloud that wanders over the hills, the body here appears, and abiding not, departs leaving no trace behind. 28.

शरीरदाढर्ये सति भाविलोक- प्राप्त्यर्थमत्रैव कुरु प्रयत्नम्।
नो चेत् क्षणान्नश्यति ते शरीरं शैलाग्रसञ्चारिघनो यथैव ॥२८॥

जब तक शरीर स्वस्थ है, तब तक भावी लोक।
जोने प्रयत्न तुम रहो, बनकर सुकृत-विलोक॥
नाही तो तेरा वदन, क्षण में भी ही नष्ट।
शैलशिखरगत घन यथा, पल में होता नष्ट ॥२८॥

29. புல்நுனிமேல் நீர்போல் நிலையாமை என்றெண்ணி
இன்னினியே செய்க அறவினை — இன்னினியே
நின்றான் இருந்தான் கிடந்தான் தன் கேள் அலறச்
சென்றான் எனப்படுந லால்.

The body like dew on the tip of a blade of grass.

Considering that all things are transient as the dew-drop on the tip of a blade of grass, now, now at once, do virtuous deeds! 'Even now he stood, he sat, he fell—while his kindred cried aloud he died:' such is man's history! 29.

'अतिष्ठदद्यैव तथोपविष्ट: सुष्वाप, मृत्युं गत" इत्यवाचि।
अतोऽद्य धर्मं कुरु, ते शरीरं तृणाग्रवर्त्यम्बुसमं विनाशि ॥२९॥

"अभी खड़ा वह" चल बसा, यों क्षय जाने कौन।
सोया यह कब चल बसा, कभी खुलेगा मौन॥
ये सब लखकर तुम करो, पुण्य कर्म तत्काल।
त्यों तव तन चिर नहि यथा, तृण-पर थित जल-जाल ॥२९॥

30. கேளாதே வந்து கிளைகளாய் இல்தோன்றி
வாளாதே போவரால் மாந்தர்கள்—வாளாதே
சேக்கை மரன்ஒழியச் சேண்நீங்கு புள்போல
யாக்கை தமர்க்கொழிய நீத்து.

All human relationships merely temporary.

Unasked men some, appear in the home as kinsmen, and then silently go. As the bird silently deserts the tree where its nest yet remains, and goes far off, so these leave but their body to their friends. 30.

स्वयं जनित्वा निजबन्धुमध्ये ततोऽत्र कायं च विहाय मर्त्या:।
मृत्युं लभन्ते, द्रुम एव नीडं त्यक्त्वा द्विजा व्योम्नि यथा डयन्ते ॥३०॥

पैदा होकर खुद मनुज, बन्धु-जनों के मध्य।
दिवस बिताकर बिनु कहे, हो जाते यम-वध्य॥
ज्यों तरु-पिंजर छोड़कर, द्विज जाते आकाश।
त्यों नर पाते हैं मरण, तजकर अपनी लाश ॥३०॥

Ch. 4. The Might of Virtue

४. धर्म की महत्ता

31. அகத்தாரே வாழ்வாரென் றண்ணாந்து நோக்கிப்
புகத்தாம் பெறாஅர் புறங்கடை பற்றி
மிகத்தாம் வருந்தி இருப்பாரே மேலைத்
தவத்தால் தவஞ்செய்யா தார். க

The door closed. Too late.

'Yet those within are blest,' so saying, they look up, but obtain no entrance: their place is at the outer gate. There will they suffer much, who thro' lack of former penitence do no penance now. (In a former state penance won for them a human shape. As *men* they have now failed.) 31.

तप्तं तपो यैर्गतजन्मनीह जन्मन्यमुष्मिन् न तपो व्यधायि।
याच्ञार्थमेते प्रभुगेहमेत्य द्वारे निरुद्धा व्यथिता भवेयुः ॥३१॥

पूर्वजन्म में तप किया, जिसने खूब कठोर।
पर तप तो इस जन्म में, किया न खूब कठोर॥
भीख मांगने धनिक-घर, जाता है वह जीव।
दरवाजे पर ही हो खड़ा, ठहरा खिन्न अतीव ॥३१॥

32. ஆவாநாம் ஆக்கம் நசைஇ அறம்மறந்து
போவாநாம் என்னாப் புலைநெஞ்சே—ஓவாது
நின்றுஞற்றி வாழ்தி எனினும்நின் வாழ்நாள்கள்
சென்றன செய்வ துரை. உ

What wilt thou do in the end thereof?

Say not, O silly soul, we will live desiring wealth and die forgetting virtue! We'll say that ceaselessly toiling thou shalt live long; but tell me, what wilt thou do when all thy happy days are over? 32.

"आढ्यो भवेयं, धननाशकारि धर्मो न कार्यस्त्वि" ति मूढचित्त!।
एवं विचिन्त्य प्रयतेर्यदि त्वं गतं तवायुः वद किन्नु कुर्याः ॥३२॥

वित्त कमाना चाहिये, तथैव मालामाल।
याचक को देना नहीं, निजी न खोना माल॥
विचार कर यों वित्त के, अर्जन में गतकाल।
आता है कब औ कहां, दान धर्म का काल ॥३२॥

33. வினைப்பயன் வந்தக்கால் வெய்ய உயிரா
மனத்தின் அழியுமாம் பேதை—நினைத்ததனைத்
தொல்லைய தென்றுணர் வாரே தடுமாற்றத்
தெல்லை இகந்தொருவு வார். ௩

The wise accept the sorrows of life as retributive.

When the 'fruit of deeds' is come, the fool sighs heavily, and all his soul dies out; but those who reflect and say, 'Tis old desert,' will pass beyond the bound of life's perplexity, and escape (by devoting themselves to virtue). 33.

खेदस्य हेतुर्विधिरित्यजानन् मूढः स्वचित्ते व्यसनं भजेत।
कर्मोद्भवं कृच्छमितीह जानन् संसारदुखाद्व्रजते विमुक्तिम् ॥३३॥

दुख का कारण भाग्य है, यों न जान कर मूढ।
व्यथित करेगा सर्वदा, निज चित्त में निगूढ॥
कृति से उत्थित खेद यों, अवगत कर धीमान।
सांसारिक दुख झेलना, समझेगा आसान ॥३३॥

34. அரும்பெறல் யாக்கையைப் பெற்ற பயத்தால்
பெரும்பயனும் ஆற்றவே கொள்க—கரும்பூர்ந்த
சாறுபோல் சாலவும் பின்உதவி மற்றதன்
கோதுபோல் போகும் உடம்பு. ௪

Virtue is the gain. The body mere refuse.

As the gain from the mortal frame now reached-and which is so hard to reach-with all thy might lay hold of virtue's lasting good. As the juice expressed from the sugar-cane' twill afterwards be thine aid, when the body goes like refuse flung away. 34.

सुदुर्लभं देहमवाप्य तेन धर्मार्जने च क्रियतां प्रयत्नः।
लीयेत कायः सुविधाय धर्मं प्रदाय सारं तु यथेक्षुदण्डः ॥३४॥

दुर्लभ मानुष-जन्म है, उसे प्राप्त कर पुण्य।
कर लो सुधर्म के लिए, न करो सदा अपुण्य॥
धर्म-साधना के लिए, निर्मित है तव देह।
इक्षु-दण्ड से रस यथा, निश्चित निःसंदेह ॥३४॥

35. கரும்பாட்டிக் கட்டி சிறுகாலைக் கொண்டார்
துரும்பெழுந்து வேம்கால் துயராண் டுழவார்
வருந்தி உடம்பின் பயன்கொண்டார் கூற்றம்
வருங்கால் பரிவ திலர்.

The same. The body only sapless stalks.

Those who have pressed the sugar-cane, and early taken the juice, when the refuse heaped up burns, will suffer no grief: those who have toiled and gained the fruit won form embodied existence will feel no pangs when death shall come. 35.

व्रतादिना धर्ममवाप्य पश्चात् समीक्ष्य कालं न बिभेति कोऽपि।
इक्षुं विनिष्पिष्य गुडे तु लब्धे न चेक्षुदाहो व्यसनाय यद्वत् ॥३५॥

व्रतादि से मिलकर सुकृत, फिर तन का अवसान।
लखकर डरता है नहीं, कोई भी इनसान॥
ईख पीसकर गुड मिले, तो न इक्षु का दण्ड।
मृत-तन सम क्या भोगता, निश्पेषण का दण्ड ॥३५॥

36. இன்றுகொல் அன்றுகொல் என்றுகொல் என்னாது
பின்றையே நின்றது கூற்றமென் றெண்ணி
ஒருவுமின் தீயவை ஒல்லும் வகையால்
மருவுமின் மாண்டார் அறம்.

Death stands waiting behind you. Delay not!

'This day ?' 'That day ? What day ? O question not the time! Bethink you death stands behind you ever waiting! Put from you every evil thing; and with all your powers embrace the virtue which sages teach. 36.

श्वो वाऽद्य पूर्वं भविता यमस्य बाधेति बुद्धिं तु विहाय, पार्श्वे।
तिष्ठेत् सदा सो हि धियाऽव, पापं विमुञ्च वाक्यं महतां श्रृणु त्वम् ॥३६॥

यम आता है आज या, कल ही लेने जान।
मनो भाव तज पाप की, कृति न करे इनसान॥
सदैव यम तो साथ है, यों कर सोच-विचार।
सुनो साधुजन के वचन, अपना औ आचार ॥३६॥

37. மக்களா லாய பெரும்பயனும் ஆய்ங்கால்
எத்துணையும் ஆற்றப் பலவால்—தொக்க
உடம்பிற்கே ஒப்புரவு செய்தொழுகா தும்பர்க்
கிடந்துண்ணப் பண்ணற் படும். எ

Use the body to gain the world to come.

When you examine closely the mighty gains to be acquired by birth in a human shape, if they seem manifold, perform not deeds which suit the body's frame alone, but deeds whose fruit is joy in the world to come! 37.

सम्यग्विमृष्टे मनुजस्य जन्म नानाफलोपेतमथापि लोके।
न कायसेवा परमत्र कार्या स्वर्लोकलाभे क्रियतां प्रयत्नः ॥३७॥

मनुज-जन्म है लाभकर, इसमें नहि संदेह।
फिर भी सब से मुख्य नहि, पोषित करना देह॥
ऐहिक सुख सबसे बड़ा, आमुष्मिक सुख भोग।
इसीलिये जपादि करम, कर पाने पर-लोक ॥३७॥

38. உறக்கும் துணையதோர் ஆலம்வித இண்டி
இறப்ப நிழல்பயக்கு மாங்கு—அறபயனும்
தான் சிறிதாயினும் நன்கார்கைப் பட்டக்கால்
வான்சிறிதாப் போற்றது விடும். அ

A benefit conferred by the worthy on the worthy.

The banyan seed, though it be minute as one might see in dreams, grows to a mighty tree of amplest shade; so gifts from a virtuous hand, received by a worthy hand, though small, will hide the diminish'd heavens. 38.

सत्पात्रमुद्दिश्य कृतं तु दानं स्वल्पं सदत्राधिकलाभकारि।
वटस्य बीजं परिमाणतोऽल्पं छायां विशालां तु यथा तनोति ॥३८॥

योग्य पात्र को यदि किया, थोड़ा-सा भी दान।
भावी में वह सिद्ध हो, अति लाभकरी महान॥
बरगद तरु का बीज है, दिखता स्वल्पाकार।
पर उसकी छाया सदा, होती वृहदाकार ॥३८॥

39. வைகலும் வைகல் வரக்கண்டும் அஃதுணரார்
வைகலும் வைகலை வைகுமென் றின்புறுவர்
வைகலும் வைகற்றம் வாழ்நாள்மேல் வைகுதல்
வைகலை வைத்துணரா தார். ௯

Days pass.

Daily they see the passing day added to the sum of the days gone by, as a day that is spent from out the store of their days, yet daily, as they see day dawn, they say joyously, 'This day will abide with us till the close of day.? 39.

दिनेन साकं मनुजस्य चायु-रपीह यातीति न कोपि वेत्ति।
दृष्ट्वाऽपि साक्षान्न करोति धर्मं क्षीणायुरप्येष मुदं प्रयाति ॥३९॥

प्रति वासर के साथ ही, चलता है नर-काल।
समझा जाता चिर नहीं, नर का जीवन-काल॥
फिर भी मानव धर्म का, न करे कार्य-कलाप।
गतचिरायु भी नर यही, करता सुख-संलाप ॥३९॥

40. மானம் அருங்கலம் நீக்கி இரவென்னும்
ஈனம் இளிவினால் வாழ்வேன்மன்—ஈனத்தால்
ஊட்டியக் கண்ணும் உறுதிசேர்ந் திவ்வுடம்பு
நீட்டித்து நிற்கும் எனின். ௪௦

Why should man maintain the perishable body by dishonourable begging ?

Parting with honour's jewel I might still consent to live a suppliant's life of shame if when maintained by such disgrace, this body could abide in strength and last for length of days. 40.

यन्नीचसेवार्जितवस्तुपुष्ट- कायोऽपि दार्ढ्येन चिरं वसेच्चेत्।
मानं विहायाप्यपि भैक्षवृत्त्या जीवस्य रक्षा किमु नोचिता स्यात् ॥४०॥

नीच वृत्ति से पालते, हैं हम तन क्षयशील।
बनता है चिरकाल तक, शरीर भी दृढ़शील॥
भीख-वृत्ति को छोड़कर, निज गौरव संमान।
समीचीन है क्या नहीं, जीवात्मा का त्राण ॥४०॥

Ch. 5. Impurity
५. शुद्धिहीनता

41. மாக்கேழ் மடநல்லாய் என்றரற்றும் சான்றவர்
நோக்கார்கொல் நொய்யதோர் புக்கில்*—யாக்கைக்கோர்
ஈச்சிற கன்னதோர் தோல்அறினும் வேண்டுமே
காக்கை கடிவதோர் கோல்.

Any slight wound may fester,
and reduce the fairest form to a loathsome state.

'O gentle maiden, fair and good!' These paragons that thus rave, know they not 'the heavenly home invisible ?' Let a bit of skin be broken slight as an insect's wing, and you need the stick that drives away the crows! 41.

कायस्थिताल्पव्रणभेदिकाक- निवारणे साह्यकरो हि दण्ड:।
तद्धेयकायं त्वविचार्य सन्तो रम्यां गुणज्ञा रमणीं वदन्ति ॥४१॥

देह-व्रण को नोचकर, खाने उद्यत काक।
लाठी लखकर जगह से, जाता ही है भाग॥
ऐसे तन को हेय नहि, विचार कर भी संत।
रमणी की तारीफ है, करते गुणी अनंत ॥४१॥

42. தோற்போர்வை மேலும் தொகுபலவாய்ப் பொய்ம்மறைக்கு
மீப்போர்வை மாட்சித் துடம்பானல்—மீப்போர்வை
பொய்ம்மறையாக் காமம் புகலாது மற்றதனைப்
பைம்மறியாப் பார்க்கப் படும்.

The body's beauty only skin-deep.

If the body which, with a covering of skin above, possesses many apertures, owes its beauty only to that outward cloak that veils the false *(the inner foulness)*, then is it fitting to say no word of lustful desire which hides the false from itself by the covering veil, but to regard that body as an undeveloped embryo. 42.

चर्मावृतानन्तमलाढचरन्ध्र- पूर्णं शरीर वसनै: पिधाय।
न कामयन्त: स्थितकश्मलं तु समीक्षय त्वं ननु भस्त्रिकेव ॥४२॥

चर्मावृत यह देह है, मलमूत्र से मलीन।
फ़िर भी ललामभूत तन, हो वस्त्र में निलीन॥
मूत्राशय मलरन्ध्र में. क्या दिखता सौन्दर्य।
शरीर में नित मैल से, दिखता नहि सौन्दर्य ॥४२॥

43. தக்கோலம் தின்று தலைநிறையப் பூச்சூடிப்
பொய்க்கோலம் செய்ய ஒழியுமே—எக்காலும்
உண்டி வினையுள் உறைக்கும் எனப்பெரியோர்
கண்டுகை விட்ட மயல்.

Outward adornment is not inward purification.

Will impurity ever cease from the worthless body which the great have abandoned, knowing it to be reeking with odours from processes connected with nutrition, though aromatics be chewed, the head covered with garlands, and the body adorned with false splendour ?
43.

सदाऽन्नमात्राद्ववृधेत्यभिज्ञैः त्यक्तस्य कायस्य तु पूतिगन्धः।
तन्मस्तकालङ्कृतपुष्पजालै- रेलालवङ्गैर्न हि वार्यतेऽसौ ॥४३॥

सतत अन्न से पोषिता, देह घृणित ठहराय।
बुध जन से दूषित सदा, दुर्गन्धित है काय॥
शरीर की दुर्वासिना, लवंग एला आदि।
खाने से मिटती नहीं, धरने से कुसुमादि ॥४३॥

44. தெண்ணீர்க் குவளை பொருகயல் வேல்என்று
கண்ணில்புன் மாக்கள் கவற்ற விடுவேனோ
உண்ணீர் களைந்தக்கால் நுங்குசூன் றிட்டன்ன
கண்ணீர்மை கண்டொழுகு வேன்.

Female eyes shall not bewilder me !

Shall I abandon (my ascetic purpose) because blind, low men worry me, saying (that woman's eye is like) the water-lily in the clear stream, or the warring carp, or a javelin ? will pursue my virtuous way as having seen (that) the eye's real nature(is), like (that of) the palm-tree fruit (which is) scooped out, after the water has been drained off!
44.

नीरे गते रन्ध्रमये तु नेत्रे स्यात्तालतुल्ये त्विति वेद्मि सम्यक्।
"मीनेन शूलेन समाक्षिणीय'- मित्यज्ञवाक्यान्न हि वञ्चितः स्याम् ॥४४॥

ताल तुल्य दृगयुग्म तो, गर्त सदृश गतनीर।
दिखता है शोभारहित, अवगत मुझे अधीर॥
शूल मीन दृग कथन से, होता मिथ्याज्ञान।
मैं इससे वंचित नहीं, पाकर यति का ज्ञान ॥४४॥

45. முல்லை முகைமுறுவல் முத்தென் றிவைபிதற்றும்
கல்லாப்புன் மாக்கள் கவற்ற விடுவெனே
எல்லாருங் காணப் புறங்காட் டுதிர்ந்துக்க
பல்லென்பு கண்டொழுகு வேன்.

The beauty of women's teeth shall not bewilder me.

Though worthless men untaught should fret my soul and rave of teeth like jasmine buds and pearls, shall I forego my fixed resolve, who have seen in the burning ground those bones— the fallen teeth—strewn round for all to see ? 45.

"मुक्ताप्रसूनाभसुदन्तयुक्ते"- त्यज्ञस्य वाक्यं न हरेद् धृतिं मे।
यतो विशीर्णान् रमणीसुदन्तान् स्मशानभूम्यां पुरतो ह्यपश्यम् ॥४५॥

सुमन मोतीसम दन्त युत, यों मूरख-वच-जाल।
सुनकर मैं खोता नहीं, अपना साहस-जाल॥
जीर्ण-शीर्ण रमणी-रदन, नजर पड़े शमशान।
मैं हूं सदैव साहसी, पाकर यति का ज्ञान ॥४५॥

46. குடரும் கொழுவும் குருதியும் என்புந்
தொடருஞ் நரம்பொடு தோலும்—இடையிடையே
வைத்த தடியும் வழும்புமாம் மற்றிவற்றுள்
எத்திறத்தாள் ஈர்ங்கோதை யாள்.

'This vile body.'

(The body) is entrails, and marrow, and blood, and bone, and connecting tendons, and skin, and here and there flesh interposed, and fat. In the midst of these, what sort of a being is she who wears the fresh garlands ? 46.

मज्जास्थिजीर्णाशयचर्मकूटैः रक्तेन मांसेन तथैव नाड्या।
विनिर्मितेऽस्मिन् वनिताशरीरे त्वं स्त्रीत्वबुद्धिं कुरुषे यदंशे ? ॥४६॥

हड्डी मज्जा मांस लहू, नसादि से स्त्री-देह।
निर्मित, फिर रमणीदशा, किस में है सदेह॥
मालाधारी नार की, सूरत मांसीभूत।
अस्थिचर्ममय देह में, ना है छूत-अछूत ॥४६॥

47. ஊறி உவர்த்தக்க ஒன்பது வாய்ப்புலனும்
கோதிக் குழம்பலக்கும் கும்பத்தைப்—பேதை
பெருந்தோளி பெய்வளாய் என்னுமீப் போர்த்த
கருந்தோலால் கண்விளக்கப் பட்டு.

The body disgusting.

The fool will address the earthen pot (the body), form which defilement oozes, which from nine disgusting outlets scatters pollution, and in which slimy liquids move to and fro—and say, 'O thou of the rounded arms,' 'OK thou with armlets decked,'—because it is made bright to his eyes by a covering of black skin. 47.

मलोद्वमत्तन्नवरन्ध्रपूर्ण- स्त्रीरूपभाण्डे मृदुचर्मजुष्टे ।
मुग्धो हि मूढो रमणीं प्रशंसेत् "विशालहस्ता वलयान्विते" ति ॥४७॥

मल-लहू, हड्डी आदि पर, आवृत कोमल चर्म।
सछेद स्त्रीमय पात्र का, कभी नहीं है वर्म॥
मुग्ध मूढ़ ही भीरु का, शंसन इसी प्रकार।
करता है कंकण धरी, "विशाल हस्ताकार" ॥४७॥

48. பண்டம் அறியார் படுசாந்தும் கோதையும்
*கொண்டுபோ ராட்டுவ்வார் கண்டிலர்கொல்—மண்டிப்
பெடைச்சேவல் வன்கழுகு பேர்த்திட்டுக் குத்தும்†
முடைச்சாகா டச்சிற் றுழி.

The body a prey to corruption.

They know not what the body is; with sandal paste and flowers they make it fine. Have they not seen, I pray, the vultures and their mates in flocks with busy beaks devour the body foul when the chariot-axle is snapt? 48.

सक्चन्दनैर्मण्डनमीक्ष्य मर्त्या हेयं शरीरं बहुधा स्तुवन्ति।
प्राणाक्षहीनः शकटाख्यदेहो गृध्रैः सुभक्ष्यः किमु तैर्न दृष्टः ॥४८॥

माला चन्दन आदि से, भूषित तन को देख।
घृणित न करता देह को, मानव बिना विवेक॥
प्राण धुरी से रहित जब, शकट-मयी हो देह।
तब हो खाना चील का, इसमें नहि संदेह ॥४८॥

49. கழிந்தார் இடுதலை கண்டார்நெஞ் சுட்கக்
குழிந்தாழ்ந்த கண்ணவாய்த் தோன்றி—ஒழிந்தாரைப்
போற்றி நெறிநின்மின் இற்றிதன் பண்பென்று
சாற்றுங்கொல் சாலச் சிரித்து.

The eyeless skulls teach.

The skulls of the dead, at the sight of which the gazer fears, with deep cavernous eyes appear, and grinning say to those who still survive, 'Guard well! In virtue's path stand fast. This is the body's grace and worth.' 49.

स्मशानशीर्णान्यतिघोरनेत्र- सम्युक्तशीर्षाणि जनानुदीक्ष्य।
"सन्मार्गगा: सन्तु शरीरतत्त्व-मेतादृशं" चेति वदन्ति किन्नु ? ॥४९॥

श्मशान - शायी भीतिकर, घोरनेत्रयुत मुंड।
सचेत करते व्यक्ति को, दिखा-दिखा कर रुंड॥
सत पथ पर ही जाइये, शरीर विनाशवान।
शरीर की गति जानिये, पाइय यति का ज्ञान ॥४९॥

50. உயிர்போயார் வெண்டலை உட்கச் சிரித்துச்
செயிர்தீர்க்கும் செம்மாப் பவரைச்—செயிர்தீர்ந்தார்
கண்டிற் றிதன்வண்ணம் என்பதனால் தம்மையோர்
பண்டத்துள் வைப்ப திலர்.

The sight of the skulls cures pride.

The skulls of the dead, grinning so as to excite disgust, cure the vain lovers of life of their folly. Those who are cured of this folly, seeing (the skulls in the burning ground), say 'such is this body.' and so value themselves as nothing. 50

स्मशानगश्वेतशिरांसि लोक-भोगे रतानां जनयेद्विरक्तिम्।
मुक्ताश्च ते तत्त्वमिदं विदित्वा न स्वीयदेहं गणयन्ति नीचम् ॥५०॥

श्मशानगत मृत-शीश लख, काम भोग में सक्त।
विषय वासना में सदा, रह जाते नहि सक्त॥
त्यक्त भोग वे तत्त्व को, लेते हैं पहचान।
और देह को समझते, सबसे नहीं महान ॥५०॥

Ch. 6. Renunciation

६. संन्यास

51. விளக்குப் புகஇருள் மாய்ந்தாங் கொருவன்
தவத்தின்முன் நில்லாதாம் பாவம்—விளக்கு நெய்
தேய்விடத்துச் சென்றிருள் பாய்ந்தாங்கு நல்வினை
தீர்விடத்து நிற்குமாம் தீது.

Penitence puts sin to flight.

As when a lamp enters darkness dies, so sin stands not before man's penitence. As, when in a lamp the oil wastes, darkness rushes in, so evil takes its stand where deeds of virtue cease. 51

दीपप्रवेशे तमसो विनाशः पापस्य नाशस्तपसः पुरस्तात्।
घृतस्य नाशे तमसः प्रवेशः पुण्यस्य नाशे प्रविशेद्धि पापम् ॥५१॥

दीप-दीप्ति से तमस का, होता है खुद नाश।
वैसे तप के सामने, होता अघ का नाश॥
आज्य-लोप से तमस का, होता है परवेश।
पुण्य-लोप से पाप का, होता है परवेश ॥५१॥

52. நிலையாமை நோய்மூப்புச் சாக்காடென் றெண்ணித்
தலையாயார் தங்கருமஞ் செய்வார்—தொகையில்லாச்
சத்தமும் சோதிடமும் என்றுங் கிவைபிதற்றும்
பித்தரின் பேதையார் இல்.

Put away useless studies.

The chief of men reflect on change, disease, old age, and death, and do their needful work. Those who raving teach the endless round of sevenfold science, and the lore of stars, are maddest of the foolish throng. 52

वार्धक्यमृत्यू मरणं च भोगं ज्ञात्वा बुधा सन्न्यसनं भजन्ते।
तत्तुल्यमूढो न हि यस्तु शब्द-ज्योतिस्सुशास्त्राध्ययनैककार्यः ॥५२॥

जरा-मरण बीमारियां, तन की हैं अनिवार्य।
इसीलिए संन्यास को, गहते हैं आचार्य॥
गणित-शब्द के शास्त्र में, जो रहते निष्णात।
वे पागसलम मूढ हो, शोकी हैं दिनरात ॥५२॥

53. இல்லம் இளமை எழில்வன்ப்பு மீக்கூற்றம்
செல்வம் வலிஎன் றிவையெல்லாம்—மெல்ல
நிலையாமை கண்டு நெடியார் துறப்பர்
தலையாயார் தாம்உய்யக் கொண்டு.

Renunciation at once.

The best of men in quiet thought discern how house, and youth, and beauty's grace, and high estate, and wealth, and strength, all pass away; and thus, to save themselves, prolonging not the time, renounce all these. 53

भाग्यं बलं यौवनजीवने च रूपं वचो वृद्धिरितीत्यमूनि।
नश्यानि मत्त्वा त्वरया महान्तो भवन्ति मुक्त्यै हतबन्धपाशाः ॥५३॥

जीवन यौवन भाग्य बल, रूप वचन धन भोग।
ये सब शाश्वत हैं नहीं, यों सोचे बुध लोग॥
सहसा सद्गति के लिए, तज भौतिक सुख भोग।
बन्धु पाश से मुक्त हो, करते हैं यति-भोग ॥५३॥

54. துன்பம் பலநாள் உழந்தும் ஒருநாள்
இன்பமே காமுறுவர் ஏழையார்—இன்பம்
இடைதெரிந் தின்னமை நோக்கி மனையா
றடைவொழிந்தார் ஆன்றமைந் தார்.

Pleasure and pain.

Though wretched men suffer afflictions many a day, yet one day's delight they eagerly desire. The men of calm and full wisdom, in pleasure's core see pain, and quit the pleasant household bondage. 54.

दिनैकसौख्यार्थमिमे तु मूढाः खेदात्मकं जीवितमर्थयन्ते।
खेदान्वितं क्षुद्रसुखं समीक्ष्य संसारबन्धाद्विरमन्ति सन्तः ॥५४॥

इक दिन के सुख के लिए, दुखकर जीवन लोल।
बनकर विमूढ मनुज हैं, नहि रहते अविलोल॥
खेद युक्त औ क्षुद्र सुख, विचार कर बुध लोग।
तज लेते हैं सर्वदा, सांसारिक सुख भोग ॥५४॥

55. கொன்னே கழிந்தன் றிளமையும் இன்னே
பிணியொடு மூப்பும் வருமால்—துணிவொன்றி
என்னெடு சூழா தெழுநெஞ்சே போதியோ
நன்னெறி சேர நமக்கு.

Unreflecting soul, why not seek the way of peace?
In vain is my youth spent. Even now disease and old age will come. O soul ! be bold; wrangle no more with me, but rise ! Wilt thou not go where both thou and I may gain virtue's path? 55

हे चित्त ! यातं किल यौवनं मे वार्धक्यरोगौ समुपागतौ च।
चरस्यहो निर्भयमिन्द्रियेषु किं मुक्तये नः कुरुषे न यत्नम्? ॥५५॥

मेरा यौवन अब चला, क्या सोचे रे चित्त।
वृद्ध दशा औ रोग से., होता कलुषित चित्त॥
किये बिना ही शुभ करम, व्यतीत हुआ सुकाल।
भावी विमुक्ति के लिए, यति बनना तत्काल ॥५५॥

56. மாண்ட குணத்தொடு மக்கட்பே றில்லெனினும்
பூண்டான் கழித்தற் கருமையால்—பூண்ட
மிடியென்னும் காரணத்தின் மேன்முறைக் கண்ணே
கடி என்றுர் கற்றறிந் தார்.

Marriage to be dreaded.
Though your wife possess no excellence and bear no child, it is hard to get rid of the marriage bond. For this reason since he who weds puts sorrow on, in olden days the learned made *marriage* a synonym of *dread.* 56

पुत्रेण हीना गुणवर्जिताऽपि भार्या न हेया तत एव सन्तः।
त्यक्त्वैव दुःखप्रदतद्विवाहं ग्राह्यो हि सन्न्यास इतीरयन्ति ॥५६॥

सुतविहीन पतनी तथा, गुणहीना रह जाय।
तो भी वह हेया नहीं, नापि त्यक्त रह जाय॥
दुखकर गृहस्थ-जिन्दगी, सुखकर है सन्यास।
इसीलिए ग्रहणीय है, यति की कृति संन्यास ॥५६॥

57. ஊக்கித்தாம் கொண்ட விரதங்கள் உள்ளுடையத்
தாக்கருந் துன்பங்கள் தாம்தலை வந்தக்கால்
நீக்கி நிறூஉம் உரவோரே நல்லொழுக்கம்
காக்கும் திருவத் தவர்.

Patience and perseverance.

When troubles arise, hard to resist, to cause them to break the vows which their lofty spirits have pledged, the men of power set griefs aside and firmly fix their souls in right. These are the blessed, guarding '*decorum's* rule. 57

महाप्रयत्नै: स्वकृतव्रतेषु दुर्वारविघ्नैरपि कुण्ठितेषु।
अपोह्य विघ्नान् कृतरक्षका ये सन्न्यासयोग्यास्तु त एंव वाच्या: ॥५७॥

संन्यासी वे ही बनें, जो विघ्नों को दूर।
करने में खुद चतुर हो, औ व्रत से भरपूर॥
विघ्न दुखों का मूल लख, जो नहि तजे प्रयास।
वही जगत में ग्रहण कर, सकता है सन्यास ॥५७॥

59. தம்மை இகழ்ந்தமை தாம்பொறுப்ப தன்றிமற்
றெம்மை இகழ்ந்த வினைப்பயத்தால்—உம்மை
எரிவாய் நிரயத்து வீழ்வர்கொல் என்று
பரிவதூஉம் சான்றோர் கடன்.

Forbearance and pity for evil-doers.

To bear with those that speak contemptuous words; yea, more, to say, 'Ah, will these sink in the other world to hell, the place of fire, as fruit of their contemptuous words;' and to grieze, is duty of the perfect man. 58

स्वनिन्दके चापि दयानुचिन्ता निन्दानिमित्तं नरके निवास:।
नैवास्य भूयादिति चिन्तनं च द्वयं यतीनां किल लक्षणं स्यात् ॥५८॥

निन्दक का दुश्मन नहीं, किन्तु दया का पात्र।
उसे समझना चाहिए, औ न नरक का पात्र॥
सच्चा यति तो है वही, जो हों निन्दक-यार।
निन्दक नरक विचार से, औ खुद भी दुखियार ॥५८॥

59. மெய்வாய்கண் மூக்குச் செவியெனப் பேர்பெற்ற
ஐவாய வேட்கை அவாவினைக்—கைவாய்
கலங்காமற் காத்துய்க்கும் ஆற்ற லுடையான்
விலங்காது வீடு பெறும்.

Repression of sensuous emotions.

He who undisturbed, in the ordered way of right, has power to guard and guide the desires and lusts that find entrance by the five sense-gates, called 'body, mouth, eye, nose, and ear'—unfailing shall gain 'release.' 59

पञ्चेन्द्रिप्राप्यसुखात् स्वचित्तं निवर्त्य सन्न्यासपथि श्रमेण।
यो वा भवेत् स्थापयितुं समर्थः सोऽयं ध्रुवं मोक्षसुखं लभेत ॥५९॥

इन्द्रिय मूलक सौख्य से, विमुक्त हो निज चित्त।
तथा यत्न से त्याग में, थित हो अपना चित्त॥
ऐसे संयम-शील को, होगा विमुक्ति लाभ।
दुनिया में सबसे बड़ा, माना विमुक्ति लाभ ॥५९॥

60. துன்பமே மீதூரக் கண்டும் துறவாள்ளார்
இன்பமே காமுறுவர் ஏழையார்—இன்மம்
இசைதொறும் மற்றதன் இன்னுமை நோக்கிப்
பசைதல் பரியாதாம் மேல்.

The biter pleasures of life.

Though wretched men behold afflictions urge and press, *renunciation* is not in their thoughts; delight they eagerly desire. The great in every joy behold its pain, and seek it not. 60

खेदालयां संसृतिमत्यजन् वै स्वल्पं सुखं तत्र वृणोति मूढः।
प्राप्तं सुखं खेदपुरस्सरं चे-त्यालक्ष्य विद्वान् न सुखं वृणीते ॥६०॥

खेद जनक संसार को, तजता है क्या मूढ।
अल्प हर्ष की चाह से, तजता नहीं विमूढ॥
खेदपुरस्सर हर्ष हैं, ऐसे सुख में शोक।
विद्यमानं है जानकर, यति बनते बुध लोग ॥६०॥

Ch. 7. The Absence of Anger: Meekness

७. क्रोध-त्याग

61. மதித்திறப் பாரும் இறக்க மதியா
மிதித்திறப் பாரும் இறக்க—மிதித்தேறி
ஈயும் தலைமேல் இருத்தலால் அஃதறிவார்
காயும் கதமின்மை நன்று.

Disregard of the esteem or disesteem of men.

Who pass esteeming us, let them pass on! And those who contemn and trample on us as they pass, let them too pass on! If even a fly *(especially unclean)* should climb, trampling on their head, it is well that the wise who know its worth, should feel no wrath. 61

सगौरवं पश्यति कश्चिदन्य - स्त्वगौरवं लोकगतिर्विचित्रा।
निर्लक्ष्य भावं वह, मुञ्च कोपं यथैव शीर्षंगतमक्षिकायाम् ॥६१॥

गौरव देते हैं सदा, स्वभाव से कुछ लोग।
इज्जत करते ही नहीं, सगर्व तो कुछ लोक॥
जैसा भी हो हम सदा, नहीं दिखावें कोप।
सिर गत मक्खी देखकर नहि होता है कोप॥६१॥

62. தண்டாச் சிறப்பின்தம் இன்னுயிரைத் தாங்காது
கண்டுழி யெல்லாம் துறப்பவோ—மண்டி
அடிபெயரா தாற்ற இளிவந்த போழ்தின்
முடிகிற்கும் உள்ளத் தவர்.

Resolute men bear meekly the evils of life.

Although disgraces throng thickly, and may not be repulsed, will those whose minds are set upon finishing the work begun, renounce sweet life's unfailing worth in their impatience, whenever they see (evils)? 62

निरर्गलप्राप्तविषादकाले- प्यादत्ततीव्रव्रतपूर्तिकामः।
यो बद्धदीक्षः स तु मानहेतोः प्राणं त्वनर्घं सहसा न मुञ्चेत् ॥६२॥

लगातार दुख में रहे, फिर भी व्यथित न धीर।
बद्ध दीक्ष होकर सदा, बनते नहीं अधीर॥
मान भंग के हेतु से, पण्डित दुर्लभ प्राण।
तजते नहि विपरीत से, करते उसका त्राण ॥६२॥

63. காவா தொருவன் தன் வாய்திறந்து சொல்லும்சொல்
ஓவாதே தன்னைச் சுடுதலால்—ஓவாதே
ஆய்ந்தமைந்த கேள்வி அறிவுடையார் எஞ்ஞான்றும்
காய்ந்தமைந்த சொல்லார் கறுத்து.

Rashness in speech hurts one's self.

If a man opens his mouth and speaks unguarded words, his words will ceaselessly burn his soul. The wise who ceaselessly hear, and ponder well and calmly, even in their wrath, will never give utterance to words of fire. 63

विनैव वाङ्निग्रहमुक्तमन्यैः कठोरवाक्यं व्यथयेद् ध्रुवं नः।
इतीत्थमालोच्य बहुश्रुतास्ते क्रोधेन नोग्रं वचनं ब्रुवन्ति ॥६३॥

कटु वच का उपयोग तो, दुखकर ही हो जाय।
यह तो जग में स्पष्ट ही, खूब विदित हो जाय॥
पण्डित कभी न क्रोध से, कहते वचन कठोर।
वक्ता श्रोता उभय को, दुखकर वचन कठोर ॥६३॥

64. நேர்த்து நிகரல்லார் நீரல்ல சொல்லியக்கால்
வேர்த்து வெகுளார் விழுமியோர்—ஓர்த்ததனை
உள்ளத்தான் உள்ளி உரைத்துராய் ஊர்கேட்பத்
துள்ளித்தூண் முட்டுமாம் கீழ்.

The good man's meekness.
The low man's ungoverned fury.

When men who are beneath them confront them, and speak unseemly words, the excellent wax not hot with anger. The base man will brood over it, chafe and rave for all the town to hear, and leap, and dash his head against a post. 64

नीचैर्जनैः प्रोक्तमयुक्तवाक्यं श्रुत्वा न कोपं कुरुते विरक्तः।
श्रुत्वा तु नीचः कुपितः समेषा, मुक्त्वाऽट्टहासं कुरुते भृशं सः ॥६४॥

नीच जनों के कटु वचन, सुनकर ऊंचे लोग।
कभी कुपित होते नहीं, और न पाते शोक॥
कठोर बातें श्रवण कर, कुपित हुए हैं नीच।
हंसकर करते हैं प्रकट, और जनों के बीच ॥६४॥

65 இளையான் அடக்கம் அடக்கம் இலைபொருள்
இல்லான் கொடையே கொடைப்பயன்—எல்லாம்
ஒறுக்கும் மதுகை உரனுடை யாளன்
பொறுக்கும் பொறையே பொறை.

Self-restraint in youth, gifts from the poor,
and forbearance in the mighty are excellent

The young man's self-restraint is self-restraint. The gift of him who owns no stores of wealth is gift indeed. When man has means and might to punish every fault, if he forbear, call him the patient man. 65

या नम्रता यूनि वरीयसी सा, विनाऽऽर्जनं येन तु दीयते तत्।
स्यादुत्तमं, सत्त्ववता क्षमा या प्रदर्शिता श्रेष्ठतमा मता सा ॥६५॥

यौवन में दर्शित विनय, बिनु अर्जन कृत दान।
सचमुच दोनों श्रेष्ठतम, कहते संत महान॥
रखने पर भी भीम बल, कुपित न होकर माफ।
करना सचमुच ही सही, उत्तम माफी साफ ॥६५॥

66 கல்எறிந் தன்ன கயவர்வாய் இன்னாச்சொல்
எல்லாருங் காணப் பொறுத்துய்ப்பர்—ஒல்லே
இடுநீற்றுல் பைஅவிந்த நாகம்போல் தத்தம்
குடிமையான் வாதிக்கப் பட்டு.

Noble instinct restrains.

As stones, the base shower down their bitter words: the noble bear, in sight of all, and let them pass, by sense of noble worth constrained: like serpent's crest at once by touch of sacred ash subdued. 66

व्रताहंवैराग्ययुता महान्तः श्रुत्वापि नीचोक्तवचः कठोरम्।
भवन्ति शान्ताः परिपूतभस्म-स्पर्शात्फणी नैति यथैव रोषम् ॥६६॥

व्रताधिकारी संतजन, विराग के अनुसार।
सुनकर भी खल नीच की, वाणी परुषाकार॥
अभिमंत्रित शुचि भस्म है, छूने से अहिराज।
जैसे प्रशांत है तथा, तजते हैं नाराज ॥६६॥

67. மாற்றராய் நின்றுதம் மாறேற்பார்க் கேலாமை
ஆற்றுமை என்னுர் அறிவுடையார்—ஆற்றுமை
நேர்த்தின்னு மற்றவர் செய்தக்கால் தாம்அவரைப்
பேர்த்தின்னு செய்யாமை நன்று.

Return not evil for evil.

When men stand forth as our enemies, and would begin the conflict, to decline the strife is not, in the language of the wise, lack of power. Even when men have confronted and done us intolerable evils, it is good not to do them evil in return. 67

कृतारिविद्रोहसहिष्णुता न दौर्बल्यहेतुस्त्विति बुद्धिमन्तः।
वदन्ति, कोपादपकारकर्तुः प्रतिक्रिया बुद्धिमता न कार्या ॥६७॥

दुश्मन कृत अपकार का, करना प्रत्युपकार।
उचित नहीं है समझते, बुद्धिमान नर-नार॥
अपकारी पर कोप से, नहि करना अपकार।
विवेकिता का है यही, सचमुच कारोबार ॥६७॥

68. நெடுங்காலம் ஓடினும் நீசர் வெகுளி
கெடுங்காலம் இன்றிப் பரக்கும்—அடுங்காலை
நீர்கொண்ட வெப்பம்போல் தானே தணியுமே
சீர்கொண்ட சான்றோர் சினம்.

The wrath of the base never expends itself.
That of the good of itself dies out.

Long time though base men's wrath run on, it spreads abroad, and knows no time when heat is spent; as the heat of water, when boiled at cooking time, itself grows cool, the ire of perfect men of worth abates. 68

कोपः खलानां बहुकालतोऽपि क्षयं विना वर्धत एव नित्यम्।
सतां तु कोपः स्वयमेति नाशं नश्येत् स्वयं तप्तजले यथौष्ण्यम् ॥६८॥

कोप नीच का काल चिर, बढ़ता ही रह जाय।
कभी नहीं घटता नहीं, अक्षय ही रह जाय॥
कोप संत का आप ही, हो जाता है लुप्त।
तप्त नीर का ताप ज्यों, होता सहज विलुप्त ॥६८॥

69. உபகாரம் செய்தகனை ஓராதே தங்கள்
அபகாரம் ஆற்றச் செயினும்—உபகாரம்
தாஞ்செய்வ தல்லால் தவற்றினல் தீங்கூக்கல்
வான்தோய் குடிப்பிறந்தார்க் கில்.

It is not the way of the noble to do evil to those who injure them.

Though men think not of good received, and do much ill to men of family whose fame has touched the sky, these still do good; nor are they wont provoked by faults, to render evil to the thankless ones. 69

कृतोपकारं त्वविचार्य ये नः कुर्वन्ति विद्रोहमथाऽपि तेषाम्।
कुर्वन्ति साह्यं परमत्र सन्तः क्रोधेन नैवापकृतिं स्मरन्ति ॥६९॥

कृतघ्न होकर नीच जन, करते हैं अपकार।
फिर भी जग में संत जन, भी करते उपकार॥
कोप भाव से ग्रस्त हों, संत न करते काम।
सज्जन का संसार में, सहज यही है काम॥६९॥

70. கூர்த்துகாய் கௌவிக் கொளக்கண்டும் தம்வாயால்
போர்த்துகாய் கௌவினர் ஈங்கில்லை—நீர்த்தன்றிக்
கீழ்மக்கள் கீழாய சொல்லியக்கால் சொல்பவோ
மேன்மக்கள் தம்வாயால் மீட்டு.

Return not railing for railing.

Though a dog, in range, should lay hold of them, there are none in the world who, in return, would lay hold of it with their mouth; and thus, when low men speak, not what is fitting, but low words, will high-minded men, in reply, utter such words with their mouth. 70

श्रुत्वाऽप्यवाच्यं वचनं खलानां न नीचवाक्यं ब्रुवते महान्तः।
दष्टा अपि क्रुद्धशुना मनुष्याः क्रोधाद्यथा तान् न हि दंशयन्ति ॥७०॥

सुनकर भी नित नीच का, कठोर वच अश्लील।
बदले में कटु बोलते, नहि वच संत सुशील॥
श्वान कुपित होकर यदपि, काटे नर का अंग।
फिर भी काटेगा नहि, मनुज श्वान का अंग ॥७०॥

Ch. 8. Patience

८. गृहस्थधर्माध्याय-सहनशीलता

71. கோதை யருவிக் குளிர்வரை நன்னுட!
பேதையோ டியாதும் உரையற்க—பேதை
உரைப்பிற் சிதைத்துரைக்கும் ஒல்லும் வகையான்
வழுக்கிக் கழிதலே நன்று.

Don't argue with the foolish.

Lord of the pleasant land, where down the cool mountains the streams fall as garlands! —With a fool hold no converse. If you speak with him, in replying he will pervert your words. To slip away from him as best you can is well. 71

मूढेन साकं न हि भाषणीयं नोचेदसभ्यं कथयेत् स वाक्यम्।
तस्माद्धि सङ्गं त्यज तेन साकं शीताचलाढ्योन्नतपाण्ड्यराज! ॥७१॥

शीतशैलयुत राज्य का, अधिपति पाण्डयराज।
तुम मूढों के बीच में, न करो भाषण-काज॥
वे तो असभ्य अन्यथा, बोले बचन कठोर।
इसीलिए तजनीय हैं, दुर्जन संगति घोर ॥७१॥

72. நேரல்லார் நீரல்ல சொல்லியக்கால் மற்றது
தாரித்திருத்தல் தகுதிமற்—றேரும்
புகழ்மையாக் கொள்ளாது பொங்குநீர் ஞாலம்
சமழ்மையாக் கொண்டு விடும்.

Insults from inferiors.

When persons not our equals say unfitting things, to bear and to be calm still is worthy conduct. The world girt by foaming waters regards not a contrary course as praise-worthy, but as discreditable. 72

अयुक्तवाक्ये कथितेऽपि नीचैः शान्त्या प्रवृत्तिर्महतां गुणाय।
तद्विपरीत्ये न भवेत् प्रसिद्धिः जायेत निन्देति वदन्ति सन्तः ॥७२॥

सज्जन मत है जगत में, गहरे सागर मुक्त।
सहना है खल नीच का, अनुचित वाक्य अयुक्त॥
विना सहें विपरीत में, अगर कहें वच घोर।
दोष लगेगा और तो, अपयश होगा घोर ॥७२॥

73. காதலார் சொல்லும் கடுஞ்சொல் உவந்துரைக்கும்
ஏதிலார் இன்சொலின் தீதாமோ — போதெலாம்
மாதர்வண் டார்க்கும் மலிகடல் தண்சேர்ப்ப!
ஆவ தறிவார்ப் பெறின்.

Harsh words of those who love are better than complaisant words of foes.

Lord of the swelling sea's cool shore, where bright insects hum around every flower!—Are severe words from loving lips harder to bear, if men can only rightly estimate their result, than pleasant words that strangers courteously speak? 73

स्निग्धस्य वाक्यं कठिनं भवेद्वा क्षेमप्रदं तत्, वचनं तु शत्रोः।
मनोहरं चापि सुखाय न स्यात् शीताब्धितीराधिप! पाण्डचभूप! ॥७३॥

शीत सिन्धु तट भूप ओ, पाण्डचय महाधिराज।
यदपि रहें रिपुवचन मृदु, फिर भी नहि सुख लाज॥
यद्यपि सच्चे मित्र का, वच हो परुषाकार।
फिर भी वह वच श्रेयकर, हो औ योगाधार ॥७३॥

74. அறிவ தறிந்தடங்கி அஞ்சுவ தஞ்சி
உறுவ துலகுவப்பச் செய்து—பெறுவதனால்
இன்புற்று வாழும் இயல்பினர் எஞ்ஞான்றும்
துன்புற்று வாழ்தல் அரிது.

The thoroughly disciplined and contented man is happy.

Those who know what should be known and rule themselves thereby; who fear what should be feared; who use all their faculties to bless the world; and whose nature rejoices in all good gained: are for ever free from woes. 74

बुध्वा तु बोद्धव्यमघात् सुभीतः प्रजानुकूलं सुविधाय कार्यम्।
वसन् नरस्तेन सुखं लभेत तज्जीविते नास्ति विषादवार्ता ॥७४॥

ज्ञेय विषय ही जानकर, अघ से होकर भीत।
जनता हितकर काम तो, करता है सुविनीत॥
वह पाता है चैन सुख, निज जीवन पर्यन्त।
और उसे होता नहीं, दुख जीवन पर्यन्त ॥७४॥

75. வேற்றுமை யின்றிக் கலந்திருவர் நட்டக்கால்
தேற்றா வொழுக்கம் ஒருவன்கண் உண்டாயின்
ஆற்றுந் துணையும் பொறுக்க; பொறானாயின்
தூற்றாதே தூர விடல்.

If a friend act doubtfully, forgive or quietly withdraw.

When two with strict accord unite in friendship's bond, if one betray the other's confidence by unkind act, this latter should endure as best he may. And if he can't endure, he should not divulge it, but withdraw himself. 75

अगाधमैत्रीयुतयोस्तु मध्ये चारित्र्यहानिर्यदि कस्यचित् स्यात्।
सह्यं तदन्येन, न चेत्प्रचारः कार्यो न, मैत्री ननु मास्तु तेन ॥७५॥

परम मित्र के बीच में, इक हो चरित्रहीन।
अपर मित्र को चाहिये, बनना मित्राधीन॥
सहनशील नहि अगर तो, करना नहीं प्रचार।
चाहे मैत्री तोड़ना, कुत्सित नहीं विचार ॥७५॥

76. இன்னா செயினும் இனிய ஒழிகென்று
தன்னையே தானோவின் அல்லது — துன்னிக்
கலந்தாரைக் கைவிடுதல், கானக நாட!
விலங்கிற்கும் விள்ளல் அரிது.

If a friend do evil to you, think it good, refrain from anger and blame yourself: but never forsake him.

Lord of the woodlands! Separation is hard even to beasts; therefore if friends do things that are unpleasant, think them pleasant, bid yourself cease (from wrath), and blame yourself alone; but forsake not those that have been joined to you in the intimacy of friendship. 76

अनिष्टमप्याप्तकृतं निजेष्टं स्यादित्यनुस्मृत्य, स्वपूर्वपापम्।
स्मृत्वा च मा मुञ्च हि तेन मैत्रीं मृगाश्च मैत्रीं न मिथस्त्यजन्ति ॥७६॥

अनिष्ट भी यदि मित्रकृत, निजेष्ट समझा जाय।
पूर्वजन्म कृत पाप यह, या यों सोचा जाय॥
कभी न तजना मित्रता, संघविपिन परिपालष।
आपस में दोस्ती कभी, तजते क्या मृगजाल ॥७६॥

77. பெரியார் பெருநட்புக் கோடல்தாம் செய்த
அரிய பொறுப்பஎன் றன்றோ — அரியரோ
ஒல்லென் அருவி உயர்வரை நன்னாட !
நல்லசெய் வார்க்குத் தமர்.

Forbearance cements friendship.

Is not the reason why the close friendship of the great is sought, that they will bear even with faults hard to endure: Lord of the good land of high mountains with resounding waterfalls !—to good people are intimate friends rare? 77

दोषं सहेरन्निति मानवास्ते मैत्रीं महद्भिर्वृणते हि साकम्।
सत्कार्यकृद्भिः सुलभा हि मैत्री नीराढ्यशैलान्वितदेशपाल। ॥७७॥

निर्झर गिरियुत देश का, शासक पाण्डियराज।
दोष सहेंगे जन वड़े, मैत्री उनके सार्थ॥
सदा निभानी चाहिये, यों लालायित लोग।
सत्कृतिकारी मित्र की, दोस्ती हो निरशोक ॥७७॥

78. வற்றிமற் றற்றப் பசிப்பினும் பண்பிலார்க்
கற்றம் அறிய உரையற்க — அற்றம்
மறைக்குந் துணையார்க் குரைப்பவே தம்மைத்
துறக்குந் துணிவிலா தார்.

Bear want

Though sore wasted with hunger, let not men tell out their destitution to ungracious churls. Those indeed who lack resolution to deny themselves may tell their wants to those who are able and willing to save them from destitution. 78

क्षुधार्दिता शुष्कशरीरिणोऽपि न स्वीयबाधां कृपणे वदेयुः।
क्लेशेऽपि येषां भुवि जीवनेच्छा ब्रूयुस्तु ते साह्यकृतां समीपे ॥७८॥

अति पीडित हो भूख से, वदन शुष्क हो जाय।
फिर भी निज दुख कृपण से, नहीं बताया जाय॥
जीना जो है चाहते, संकट के भी काल।
वे उपकारी मनुज से, कहें सही निज हाल ॥७८॥

79. இன்பம் பயந்தாங் கிழிவு தலைவரினும்
இன்பத்தின் பக்கம் இருந்தைதக்க—இன்பம்
ஒழியாமை சண்டாலும் ஓங்கருவி நாட!
பழியாகா ஆறே தலை.

Forsake pleasure that brings disgrace.
To avoid guilt is the chief matter.

Although shameful things may present themselves as things that yield pleasure, flee from that pleasure's side ! Though thou couldst see pleasures that cease not soon,—Lord of the land of fountains high!—the guiltless way is best. 79

अगौरवं चापि सुखेन साक- मेकस्य कार्यस्य फलं यदि स्यात्।
ग्राह्यं तदा गौरवपूर्वसौख्यं हे निर्झरापूरितदेशपाल! ॥७९॥

निर्झर भूषित भूमि का शासक पाण्डिय नाथ।
ना गौरव हो करम का, फल यदि सुख के साथ॥
तो गौरव युत सौख्य हैं, समझा जाता ग्राह्य।
गौरव विहीन सौख्य भी, कभी नहीं हो ग्राह्य ॥७९॥

80. தான்கெடினும் தக்கார்கே டெண்ணற்க தன்உடம்பின்
ஊன்கெடினும் உண்ணுர்கைத் துண்ணற்க—வான்கவிந்த
வையகம் எல்லாம் பெறினும் உரையற்க
பொய்யோ டிடைபிடைந்த சொல்.

Never desire evil, nor ear with improper persons, nor lie.
Though ruin seize you plan not ruin to the just! Though body's flesh should waste, eat not from hands unfit! Though the whole earth o'er-arched by heaven accrue as gain, never speak word with falsehood mixed! 80

स्वयं विनष्टोऽपि सतां विनाशे मतिर्न कार्या, किमु कायनाशे।
त्याज्यं त्वनर्हार्पितमन्नमात्रं त्रिलोकलाभेऽप्यनृतं न वाच्यम् ॥८०॥

होने पर भी नष्ट खुद, सज्जन का अवसान।
कभी न करना चाहिए, यह जाने इनसान॥
अनर्ह भोजन भूख में, भी न कभी ग्रहणीय।
त्रिलोक मिलता हो तदपि, अनृत नहीं कथनीय ॥८०॥

Ch. 9. The Not Desiring Other Men's Wives

९. परस्त्रीत्याग

81. அச்சம் பெரிதால், அதற்கின்பம் சிற்றளவால்
நிச்சம் நினையுங்காற் கோக்கோலியால்,—நிச்சலும்
கும்பிக்கே கூர்த்த வினையால் பிறன்தாரம்
நம்பற்க நாணுடை யார்.

Against adultery.

The fear it brings is great; its pleasure is brief; each day if it is divulged death threatens by the king's decree; and ever it is a deed that tends to the pains of hell; O shamefast men, desire not your neighbour's wife. 81

भयं महत् स्यात् परदारसंग-सौख्यात्, विमृष्टे परदारसङ्गात्।
स्यान्मृत्युशिक्षा नरकान्तपापं लज्जापरैस्त्याज्यतमाऽन्यनारी ॥८१॥

पर-पतनी-संग के, सुख से भय बलवान।
पर-पतनी संसर्ग से, नर हो पापीयान॥
मरण अन्त इस संग से, विधान के अनुसार।
हो या कुंभीपाक का, नरकमयी स्वीकार ॥८१॥

82. அறம்புகழ் கேண்மை பெருமைஇந் நான்கும்
பிறன் தாரம் நச்சுவார்ச் சேரா—பிறன்தாரம்
நச்சுவார்ச் சேரும் பகைபழி பாவம்என்
றச்சத்தோ டிந்நாற் பொருள்.

The sinner forfeits much, and incurs much.

Virtue, praise, friendship, greatness, all these four draw not anigh the men who covet their neighbour's wife. Hatred, disgrace and guilt, with fear, these four possessions abide with men who covet their neighbour's wife. 82

मैत्रीयशोधर्ममहत्त्वमेते न वै भजन्ते परदारलोलम्।
विरोधनिन्दाभयपापमेते ध्रुवं भजन्ते परदारलोलम् ॥८२॥

मैत्री यशादि छोड़ता, है पर-पतनी लोल।
धर्म कर्म रचता नहीं, औ हो पापविलोल॥
विरोध निन्दा पाप भय, अहितकरी ये चार।
उस पर आश्रित से सदा, जो औ स्त्री का जार ॥८२॥

83. புக்க விடத்தச்சம் போதரும் போதச்சம்
துய்க்கு மிடத்தச்சந் தோன்றாமற் காப்பச்சம்
எக்காலும் அச்சந் தருமால் எவன்கொலோ
உட்கான் பிறனில் புகல்.

Fear on every side.

In entering in there's fear; in home returning fear; during enjoyment is fear; in guarding the secret is fear; it evermore brings fear: why shuns he not with dread the entrance of neighbour's house? 83

भीतिः परस्त्रीगमने, तदीय-गेहान्निवृत्तौ भयमेव भोगे।
भयं स्वकृत्यस्य पिधानकार्ये सदा भयाढ्यं कुरुते कुतस्तत् ॥८३॥

डर ही औ स्त्री गमन में, फिर आने में भीति।
पर-पतनी-संसर्ग में, भी होती तो भीति॥
अपनी कृति की गुप्ति में, होती है अति भीति।
ऐ सी कृति नर क्यों करें, जो देती नित भीति ॥८३॥

84. காணின் குடிப்பழியாம் கையுறின் கால்குறையும்
ஆணின்மை செய்யுங்கால் அச்சமாம்—நீணிரயத்
துன்பம் பயக்குமால்; துச்சாரி! நீ கண்ட
இன்பம் எனக்கெனைத்தால் கூறு.

The way of transgressors is hard.

If anyone see, disgrace lights on the house; if any hand should seize. leg's maimed; in the doing of the shameful deed is dread; it yields as fruit vast hell's affliction: tell me, O profligate, what measure of delight is thine? 84

स्याद्वंशनिन्दा पदभङ्गशिक्षा कृते परस्त्रीगमने, भयं स्यात्।
स्यान्नारकं दुःखमनेन, सौख्यं जाते कियद् ब्रूहि विनष्टशील! ॥८४॥

पर-पतनी संसर्ग से, होता वंश कलंक।
पकड़ा जाता जार यदि, तो होता पदभंग॥
इस कृति से भय दायिनी., नरकयातना और।
इससे कितना सौख्य है, दुख ही दुःख है और ॥८४॥

85. *செம்மையொன் றின்றிச் சிறியா ரினத்தராய்க்
கொம்மை வரிமுலையாள் தோள்மரீஇ—உம்மை
வலியாற் பிறர்மனைமேற் சென்றாரே இம்மை
அலியாகி ஆடியுண் பார்.*

Punishment of ravishers.

Those who, in a former state, without any regard to right, becoming associates of the mean, enjoyed the embraces of beautiful women, and by violence approached their neighbour's wife, in this state will become eunuchs, and dancing shall earn their bread. 85

पापादभीता विगुणैः समेता बृहस्तनीसंगमकांक्षया ये।
जग्मुः परस्त्रीं, भुवि जन्मनीह नृत्येन जीवन्ति नपुंसकास्ते ॥८५॥

अघ से जो है विनु डरे, दुर्गुणजाल समेत।
पर-पतनी कुच संग में, अभिलाष समवेत॥
पर-पतनी नीरत मनुज, इह जन्में है बलहीन।
और नटी बनते सदा, लीलाहेलाधीन ॥८५॥

86. *பல்லார் அறியப் பறையறைந்து நாள்கேட்டுக்
கல்யாணம் செய்து கடிப்புக்க—மெல்லியல்
காதல் மனையாளும் இல்லாளா என்னொருவன்
ஏதில் மனையாளை நோக்கு.*

Why should a man who has his own wife. look at his neighbour's?

While his loving wife dwells in his home, the tender one whom he espoused,—seeking (out an auspicious) day, and sounding the drum, for many folks to know,—and whom he guards as his own,— what means a man's glance at another's wife? 86

शुभे दिने वाद्यरवे बहूनां पुरः समूढां गृहिणीं गुणाढ्याम्।
काम्यां स्वगेहे च विहाय कस्मात् परस्त्रियं वाञ्छति मानवोऽयम् ॥८६॥

शुभ दिन में शुभ नाद में, नर बनता परिणीत।
गृहिणी भी गुण शोभिनी, निज घर पर आनीत॥
ऐसी सुन्दर दार को, तजकर निज भी गेह।
क्यों जाने नर चाहते, अन्य दार का गेह ॥८६॥

87. ஆர்பல் அயல்எடுப்ப அஞ்சித் தமர்பரீஇ
வம்பலன் பெண்பரீஇ மைந்துற்று—நம்பும்
நிலைமையில் நெஞ்சத்தான் துப்புரவு பாம்பின்
தலைநக்கி யன்ன துடைத்து.

Pleasure dearly purchased.

The enjoyment of the man of unstable heart, who under the influence of infatuation approaches his neighbour's wife and sets his affections upon her, while neighbours spread abroad his guilt, and kinsmen dread and mourn, is like (that of the person who takes pleasure in) licking a serpent's head. 87

पराङ्गनाभोगरतं समीक्ष्य निन्दन्ति लोकाः स्वजना भयार्ताः।
अशान्तभोगानुभवस्तु तस्य स्याल्लेहवत् सर्पशिरस्तलस्य ॥८७॥

पर-पतनी के लोल को, लखकर जग के लोग।
दूषित करते हैं तथा, बन्धु भीति अवलोक॥
अशांत मन में भोग सुख, खतरनाक ठहराय।
ज्यों अहि सिर पर लेहना, संकट कर ठहराय ॥८७॥

88. பரவா வெளிப்படா பல்லோர்கண் தங்கா
உரவோர்கண் காமநோய் ஓஒ கொடிதே!
விரவாருள் நாணுப் படல்அஞ்சி யாதும்
உரையாதுள் ஆறி விடும்.

The passions of virtuous men are under control

The disease of lust in men mighty (in wisdom) gains not ascendancy, is not revealed, does not remain fixed on many objects.

O! it is a cruel conflict but fearing to incur shame in the midst of their foes, they say nothing about it, and it is extinguished within them. 88

लज्जाढ्यविद्वज्जनजातकामो न वर्धते संक्रमते न दृश्यः।
स्थित्वैव चान्तर्व्यसनप्रदोऽसौ भवेत् कठोरो नितरामशाम्यः ॥८८॥

कामरोग से ग्रस्त वे, हैं अति लज्जा शील।
इसीलिए यह रोग तो, नहि है प्रकटनशील॥
दबकर दंय के चित्त में, क्लेशकरी यह रोग।
सचमुच में संसार में, भयंकरी यह रोग ॥८८॥

89. அம்பும் அழலும் அவிர்கதிர் ஞாயிறும்
வெம்பிச் சுடினும் புறம்சுடும்—வெம்பிக்
கவற்றி மனத்தைச் சுடுதலாற் காமம்
அவற்றினும் அஞ்சப் படும்.

Lust the most deadly enemy.

Arrow and fire and sun with glistening rays may rage and burn; but these burn the outer man alone. Lust rages and distracts and burns the mind, and is more to be feared than they. 89

गभस्तिमत्सायकवह्नयस्ते दहन्ति वै बाह्यशरीरमात्रम्।
अन्तर्मनोदाहककामवह्नि-स्तेभ्योऽपि तापं नितरां प्रयच्छेत् ॥८९॥

सायक-दिनमणि आग ये, देने वाले ताप।
देह मात्र को बाहरी, नहीं चित्त को ताप॥
कामानल को चित्त का, दाहक अन्तर आप।
सब से कामानल रहे, देने वाला ताप ॥८९॥

90. ஊருள் எழுந்த உருகெழு செந்தீக்கு
நீருள் குளித்தும் உயலாகும்—நீருள்
குளிப்பினும் காமம் சுடுமேகுன் றேறி
ஒளிப்பினும் காமம் சுடும்.

Fire and lust.

From the ruddy fire that fiercely rises in the village you may scape by bathing in water.—Although you bathe in water, lust will burn; and though you climb the hill and hide you there, still lust will burn! 90

ग्रामात् प्रदग्धाद् बहिरेत्य नीरे मग्नः स्वरक्षां कुरुते मनुष्यः।
शैले निलीनं च जलप्रविष्टं नरं दहेत् कामसमाख्यवह्निः ॥९०॥

प्रदग्ध पूर से निकलकर, नर हो जल में मग्न।
उसी तरह निज त्राण में, हो सकता संलग्न॥
लेकिन तनगत कामशिखि, जाती है हर राह।
निमग्न भी गिरिशैल में, तापन करी कराह ॥९०॥

Ch. 10. Liberality

१०. दान

91. இல்லா இடத்தும் இயைந்த அளவினால்
உள்ள இடம்போல் பெரிதுவந்து—மெல்லக்
கொடையொடு பட்ட குணனுடை மாந்தர்க்
கடையாவாம் ஆண்டைக் கதவு.

Unchilled by adversity the good do good:
heaven's gate is open to them.

Even in their adverse hour, up to the measure of their means, as in the prosperous times, with large rejoicing heart to give is their nature still. To such good men heaven's gate is never closed. 91

नष्टेऽपि भाग्ये घनपूर्णकाल-समं यथाशक्ति मुदा समेत्य।
दाने प्रवृत्तस्य तु देवलोक-द्वारं सदा स्याद्विवृतं न बद्धम् ॥९१॥

बदकिस्मत में भाग्य सम, यथाशक्ति मुदयुक्त।
होकर देना चाहिए, नरको वित्तवियुक्त॥
दाता को सुर लोक का, खुला हुआ है द्वार।
जो दानी नहि, बन्द है, उसको स्वर्गद्वार ॥९१॥

92. முன்னரே சாநாள் முனிதக்க மூப்புள
பின்னரும் பீடழிக்கும் நோயுள—கொன்னே
பரவன்மின் பற்றன்மின் பாத்துண்மின் யாதுங்
கரவன்மின் கைத்துண்டாம் போழ்து.

Death, old age, disease stand round. Give!

Before (you) are death's day and age detestable; behind is disease that humbles pride. Discursive thoughts indulge not. Cling not to earth. Eat, sharing food; hide not your powers while wealth is in your hand. 92

व्याधिर्जरा मृत्युरिमे च सिद्धाः स्थिते धने किन्तु वृथाऽटनेन।
त्वं लोभितां मुञ्च, समैः समेत्य भुङ्क्ष्व, वृथा गोपय माऽर्थराशिम् ॥९२॥

जरा-मरण-रुज तीन, हो भावी में उत्पन्न।
वित्ताटन तव हो वृथा, जब हो तुम संपन्न॥
तज लो अपनी कृपणता, खाओ बन्धु समेत।
अर्थ छिपाना तव वृथा, जब हो वित्त-समेत ॥९२॥

93. நடுக்குற்றுத் தற்சேர்ந்தார் துன்பந்துடையார்
கொடுத்துக்தான் துய்ப்பினும் ஈண்டுங்கால் ஈண்டும்
இடுக்குற்றுப் பற்றினும் நில்லாது செல்வம்
விடுக்தும் வினையுலந்தக் கால்.

It is useless saving: fate gives and takes away.

Though dread of want they do not relieve the woes of men who as suppliants draw near! Yet although men enjoy and give, wealth grows in growing time: cling to it, and yet it flies when former deeds that brought wealth have lost their power. 93

दत्वाऽपि भुक्तं न धनं विनश्येत् कालेऽनुकूले सति, वैपरीत्ये।
नश्येद्धनम्, रक्षितमप्यबुध्वा न वारयत्याश्रितमर्त्यखेदान् ॥९३॥

दान भोग से वित्त का, होता तब न विनाश।
नहि नर के सौभाग्य का, होता जबकि विनाश॥
उलटा हो निज भाग्य यदि, तो होगा धन-नाश।
रोका जाता है नहीं, निर्धन तुम हर रोज ॥९३॥

94. இம்மி அரிசித் துணையாஞும் வைகலும்
நும்மில் இயைவ கொடுத்துண்மின்—உம்மைக்
கொடாஅ தவரென்பர் குண்டுநீர் வையத்
தடாஅ அடுப்பி னவர்.

Give according to your power.

Daily having given somewhat, though but the fraction of a grain of rice, according to your ability, eat ye (your own food).
Those who gave not in that world, men say on this earth girt by deep waters are those on whose hearth nothing is cooked. 94

त्वं तण्डुलं स्वल्पमपीह दत्वा दीनाय नित्यं भव शिष्टभोक्ता।
अज्ञातपाका भुवि दीनमर्त्या नो चेद्ददेयुः किल लोभिनं त्वाम् ॥९४॥

चावल थोड़ा दीन को, देकर तुम हर रोज।
सुबह शाम दोनों समय, कर लो बाकि भोज॥
दीन अपाचक अन्यथा, तुम को दिवा व रात।
कृपण कहेंगे जगत में, यह है लौकिक बात ॥९४॥

95. மறுமையும் இம்மையும் நோக்கி ஒருவர்க்
குறுமா றியைவ கொடுத்தல்—வறுமையால்
ஈதல் இசையா தெனினும் இரவாமை
ஈதல் இரட்டி யுறும்.

Do charity for the sake of this world and the future; and beg not.

Regarding the other world and this world, give to any suppliant, in fitting way, according to your ability; and if on account of poverty giving is not possible, yet refraining from begging is twice as meritorious as giving. 95

विमृश्य लोकद्वयलाभहेतुं दीनाय देयं स्थितमल्पवित्तम्।
दाने त्वसाध्ये त्यज याचनां त्व-मयाचनं श्रेष्ठतमं हि दानात् ॥९५॥

उभय लोक-फल लक्ष्य कर, यथा शक्ति कर दान।
विदित अयाचित तो भला, साध्य नहीं यदि दान॥
याचन सबसे नीच है, दान भला है जान।
सदा अयाचन दान से, परम भला है जान ॥९५॥

96. நடுவூருள் வேதிகை சுற்றுக்கோட் புக்க
படுபனை அன்னார் பலர்நச்ச வாழ்வார்
குடிகொழுத்தக்கக் கண்ணும்கொடுத்துண்ணு மாக்கள்
இடுகாட்டுள் ஏற்றைப் பனை.

The fertile and sterile palms.

Those who live desired of many are as fertile palm entered in the altar's enclosure in midmost of the town.. Those who, even when their house grows great, give not before they eat are like the sterile palm in the burning ground. 96

ग्रामान्तरानिर्मितवेदिकास्थ-फलाढ्यतालेन समा महान्तः।
वित्ते स्थिते दानगुणेन हीनाः स्मशानसन्निष्फलतालतुल्याः ॥९६॥

उपकारी जन ग्राम के सचमुच रहें सुजान।
ग्राम मध्यगत वेदि थित, फलयुत ताल समान॥
वित्तयुक्त भी दान से, हीन कृपण इनसान।
मसान थित फललाभ से, विहीन ताल-समान ॥९६॥

97. பெயற்பால் மழைபெய்யாக் கண்ணும் உலகம்
செயற்பால செய்யா விடினும்—கயற்புலால்
புன்னை கடியும் பொருகடல் தண்சேர்ப்ப
என்னை உலகுய்யும் ஆறு.

In troublous time charity must not be omitted.

Even when the rain not in due season, if all the world should fail in virtuous actions that ought to be done,—Lord of the warring sea's cool shore, where acrid fume of fish in *'Punnai's* perfume dies!—how scapes the world? 97

सन्तो न दद्युर्यदि, कालवृष्टि: नो चेत् कथं लोकजनोऽत्र जीवेत्।
कदम्बपुष्पाद्धतमत्स्यगन्ध-जुष्टाब्धिसच्छीतलतीरपाल! ॥९७॥

कदम्ब से हम झष महक, शीतल दधि तट-पाल।
यदि नहीं वरसें समय पर, नभ से नीरद-जाल॥
उचित समय पर संतजन, नहीं करें यदि दान।
तो जनजीवन कठिन औ, होगा सच सुनसान॥९७॥

98. ஏற்றகை மாற்றுமை என்னனும் தாம்வரையார்
ஆற்றுதார்க் கெவதாம் ஆண்கடன்—ஆற்றின்
மலிகடல் தண்சேர்ப்ப மாறிவார்க் கீதல்
பொலிகடன் என்னும் பெயர்த்து.

Give to him who cannot recompense thee.

Denying to no out-stretched hand, to give to needy men as he hath power, is duty of a man.—Lord of the swelling sea's cool shore!—A gift to those that can return, the gift is usury! 98

नास्तीत्यनुक्त्वा स्थितमल्पमर्थं विना स्वलाभं समभावदृष्ट्या।
दाता नरः श्रेष्ठतमः स्वलाभ-दृष्ट्या प्रदानं ऋणदानतुल्यम्॥९८॥

स्वीयलाभ की दृष्टि से, प्रदत्त हो जो दान।
समझा जाता है वही, उधार दान समान॥
स्वलाभ बिनु जो दान है, करता स्वल्पाकार।
उत्तम दानी है वही, यह है सन्तविचार ॥९८॥

99. இறப்பச் சிறிதென்னா தில்லென்னா தென்றும்
அறப்பயன் யார்மாட்டுஞ் செய்க—முறைப்புதவின்
ஐயம் புகூஉந் தவசி கடிஞைபோற்
பைய நிறைத்து விடும்.

Give though you have but little.
The beggar's dish is filled in time.

Say not ''tis passing little,' nor ''tis nought I give;' on all confer thy boon of virtuous charity. Like the dish the mendicant presents from door to door, by frequent doles 'twill be filled full. 99

"अस्त्यल्पमेवे" ति मतिं विहाय नास्तीत्यनुक्त्वा कृतदानपुण्यम्।
क्रमेण पूर्येत यथा यतीनां भिक्षार्थिनां हस्तगतान्नपात्रम् ॥९९॥

थोड़ा ही है धारणा तजलो मन से यार।
नहीं न कहकर और को, करो दान-उपकार॥
दान पुण्य की वृद्धि तो, होती है बहु मात्र।
यतिजन के करगत यथा, भिक्षा भोजन पात्र ॥९९॥

100. கடிப்பிடு கண்முரசம் காதத்தோர் கேட்பர்
இடித்து முழங்கியதோர் யோசனையோர் கேட்பர்
அடுக்கிய மூவுலகும் கேட்குமே சான்றோர்
கொடுத்தா ரெனப்படும் சொல்.

The fame of charitable deeds.

The sound of beaten drum a *katham* of they'll hear; the thunder's voice through a whole *yojanai* will reach men's ears; the three successive worlds will hear the word that says, *'Men excellent their gifts have given.'* 100

तत्क्रोशदूरं मुरजस्य शब्दो मेघस्य शब्दः किल योजनान्तम्।
श्रयेत, 'दाताऽय' मितीह सद्भि-रुक्तं श्रुतं स्याद् भुवनत्रयस्थैः ॥१००॥

कोश दूर तक मुरज का, शब्दित होगा शब्द।
योजन तक ही मेघ का, नादित होगा शब्द॥
कर्णसदृस दाता यही, वाला सज्जन नाद।
नादित होगा जगत भर, इसमें नहीं विवाद॥१००॥

Ch.11. Old Deeds
११. पूर्वजन्म-कृतकर्म

101. பல்லாவுள் உய்த்து விடினும் குழக்கன்று
வல்லதாம் தாய்நாடிக் கோடலைத்—தொல்லைப்
பழவினையும் அன்ன தகைத்தேதற் செய்த
கிழவனை நாடிக் கொளற்கு.

Deeds come home to the doer.

Although you send forth the tender calf amid many cows, it has unerring skill to seek out its own mother. Deeds of old days have even so the power to search him out to whom their fruit pertains. 101.

वत्सः स्वयं धेनुगुणं प्रविश्य प्राप्नोत्यटित्वा निजमातरं सः।
तत्पूर्वकर्म प्रविशज्जनौघं कर्तारमाप्नोति तथा स्वयं तु ॥१०१॥

बछड़ा पशु-समुदाय में, प्रवेश करके आप।
फिर-फिरकर निज मातृ को, पाता है अविलाप॥
पहले जनसमुदाय में, करके आविष्कार।
पूर्वकर्म करतार को, पाता है अविकार ॥१०१॥

102. உருவும் இளமையும் ஒண்பொருளும் உட்கும்
ஒருவழி நில்லாமை கண்டும்—ஒருவழி
ஒன்றேயும் இல்லாதான் வாழ்க்கை உடம்பிட்டு
நின்றுவிழ்ந் தக்க துடைத்து.

A merely animal life.

Beauty and youth, and glittering wealth and reverence abide not in one stay. To him who, though he sees this, does no single virtuous act in this one stage of being, life's joy stands with the body and falls with it. 102.

प्रभावशोभाधनयौवनानि न स्युर्नरेके प्रसमीक्ष्य चैतत्।
अत्यल्पसत्कार्यमसावकुर्वन् अलभ्यदेहं विफलं करोति ॥१०२॥

धनादि सुख इक मनुज में, दुर्लभ समझा जाय।
मर्यादा शोभा तथा, प्रभाव द्रव्य-सहाय॥
थोड़ा भी शुभ कर्म नहि, करके यह नर जीव।
दुर्लभ मानुष देह को, करता विफल अतीव॥१०२॥

103. வளம்பட வேண்டாதார் யார்யாரு மில்லை ;
அளந்தன போகம் அவரவர் ஆற்றல்;
விளங்காய் திரட்டினார் இல்லை ; களங்கனியைக்
காரெனச் செய்தாரும் இல்.

Wishes are inoperative.

Who would not see Prosperity ? All seek her gifts; but as men's ways are, so each men's enjoyments are meted out. Who made the *Vilam's* apple round ? Or who gave its dusky hue to the *Kalam* fruit ? 103.

सर्वेऽपि वाञ्छन्ति सुखं, परन्तु कर्मानुरूपो विहितो हि भोगः।
जम्बूफले केन कृतं हि काष्ण्यं को वर्तुलं वै कृतवान् कपित्थम् ॥१०३॥

सभी चाहते भोगसुख, धनादि के अनुरूप।
किन्तु भोगसुख मनुज को, सुविहित कृत्यनुरूप॥
जम्बू फल की कृष्णता, स्वाभाविक है रूप।
कपित्थ फल है सहज से, धरता वर्तुलरूप ॥१०३॥

104. உறற்பால நீக்க லுறுவர்க்கும் ஆகா
பெறற்பால் அனையவும் அன்னவாம் ; மாரி
வறப்பின் தருவாரு மில்லை ; அதனைச்
சிறப்பின் தணிப்பாரு மில்.

What must be, must be.

No more can effort drive away predestined ills, and all the fated gain must needs accrue. In time of drought who can bestow the rain? Or who can check its rush when it falls? 104.

105. தினைத்துணைய ராகித்தம் தெசுஉள அடக்கிப்
பனைத்துணையார் வைகலும் பாடழிந்து வாழ்வர்
நினைப்பக் கிடந்த தெவனுண்டாம் மேலை
வினைப்பய னல்லாற் பிற.

Vicissitudes of life are fate.

Those who lose like stately palms, when their greatness is gone, become small as the millet seed, hiding their glory within,—and so they pass their days. This is the fruit of deeds of former days: when you think of it, what other cause can there be? 105.

औन्नत्ययुक्ता: पुरुषा: कदाचित् पदच्युता गौरवहानिमाप्य।
जीवन्ति गूढप्रभयाऽत्र पूर्व-कर्मादृते कोऽपि न हेतुरस्ति ॥१०५॥

कभी कभी ऊंचे मनुज, पदवी से हो भ्रष्ट।
और मान की हानि से, होते नष्ट-भ्रष्ट॥
इसका कारण और नहि, पूर्वजन्म है बीज।
पौधा उगता है कहां, बिना लगाये बीज ॥१०५॥

106. பல்லான்ற கேள்விப் பயனுணர்வார் வியவும்
கல்லாதார் வாழ்வ தறிதிரேல்—கல்லாதார்
சேதன மேன்னுமச் சேறகத் தின்மையால்
கோதென்று கொள்ளாதாம் கூற்று.

Why ignorant men live, while the wise die.

Those that know the fruit of varied and profound learning die off, while the unlearned joyously live on. Would you know the cause?—The unlearned possess within no 'sap of sapience';—so death deems them refuse stalks, and takes them not! 106.

बहुश्रुता: सार्थकजीवनाश्च नश्यन्ति शीघ्रं, चिरमत्र मूढा:।
जीवन्त्यहो "ज्ञानरसेन हीन मूढेन किं वे" ति यमोऽत्यजत् किम् ॥१०६॥

जिनका जीवन ज्ञान से, होता है चरितार्थ।
वे चिरजीवित हैं नहीं, मरते हैं अचिरार्थ॥
मूढ लोभ संसार में, रहते हैं चिरकाल।
अनपढ को असार समझ, छोड़ चुका हो काल ॥१०६॥

107. இடும்பைகூர் நெஞ்சத்தார் எல்லாருங் காண
நெடுங்கடை நின்றுழல்வ தெல்லாம்—அடம்பம்பூ
அன்னம் கிழிக்கும் அலைகடல் தண்சேர்ப்ப!
முன்னை வினையாய் விடும்.

Why some beg from door to door.

Lord of the sea's cool shore, where amid the wave swans sport, tearing to shreds the *Adambu* flowers! When those whose hearts are sore with urgent need stand begging, and wander through the long street, in sight of all, this is the fruit of former deeds. 107.

दारिद्र्यसन्तप्तमनाः परेषां गृहं गता भैक्ष्यमटन्ति केचित्।
नूनं विधिः कारणमत्र, हंस-भिन्नप्रसूनाम्बुधितीरपाल! ॥१०७॥

हंस-विदारित सुमनयुत, सिन्धुतीर का पाल।
अभाव पीड़ित लोग कुछ, मिलने भोजन-माल॥
औरों के घर पहुंचकर, लेते भिक्षामात्र।
इसका कारण विदित है, पूर्वकर्म ही मात्र ॥१०७॥

108. அறியாரும் அல்லர் அறிவு தறிந்தும்
பழியோடு பட்டவை செய்தல்—வளியோடி
நெய்தல் நறவுயிர்க்கும் நீள்கடல் தண்சேர்ப்ப
செய்த வினையான் வரும்.

Why even wise men sin.

They are not ignorant; but, though what man should know they know, yet they do deeds that bring guilt to their souls—Lord of the wide sea's pleasant shore, where breezes breathe the lily's fragrance round!—This comes from former deeds. 108.

अज्ञा न ते, ज्ञानवराश्च, किन्तु निषिद्धकार्यं क्रियते यदेतैः।
तत्पूर्वकर्मागतमेव, "नैदळ्' स्रवन्मधुप्राप्तसुतीरराज! ॥१०८॥

"नैदक"- निर्गत शहर से, शीतल दधितटराज।
यद्यपि अबोध वे नहीं, फिर भी निषिद्ध काज॥
करते हैं ज्ञान सहित भी, इसका क्या है बीज।
स्पष्ट रूप से विदित है, पूर्वकर्म ही बीज ॥१०८॥

109. ஈண்டுநீர் வையத்துள் எல்லாரும் எத்துணையும்
வேண்டார்மன் தீய ; விழைபயன் நல்லவை
வேண்டினும் வேண்டா விடினும் உறற்பால
தீண்டா விடுதல் அரிது.

Desires are unavailing.

On the earth begirt by gathering waters no men desire in anywise evil things, but choice fruit of good things. Yet whether they desire, or abhor, it is hard to shun the touch of what fate assigns. 109.

सर्वैस्तु दुःखेन विना प्रमोद-मात्रं सदा तैर्व्रियते, परन्तु।
अप्रार्थितं खेदसुखद्वयं च क्रमेण कर्मानुगुणं लभेत ॥१०९॥

सुखी रहें सब दुख बिना, सदैव आठों जाम।
सब का सहमत है यही, सब का मनोभिराम॥
सुख दुख दोनों ना कभी, इच्छित है तू जान।
पूर्वकर्म से खेदसुख, मिलते हैं तू जान ॥१०९॥

110. சிறுகா பெருகா முறைபிறழ்ந்து வாரா
உறுகாலத் தூற்றுகா ஆமிடத்தே ஆகும்
சிறுகாலைப் பட்ட பொறியும் அதனால்
இறுகாலத் தென்னே பரிவு.

Fate is unalterable. Why grieve?

The early fates diminish not, nor do they increase, they come not in order changed help in troublesome times is none; what haps will happen, there and then; and so, when all things fail, why grieve? 110.

जातस्य शीर्षे लिखितं स्वकर्म न क्षीयते नापि विवर्धते तत्।
क्रमात् फलेत् नोपकरोति दुःखे काले फलेत् मुञ्च वृथा प्रयत्नम् ॥११०॥

नर का अपना कर्म तो, ललाट रेखाधीन।
क्षीयमान वह तो नहीं, नापि विवृद्धिमान॥
सुख में दुखहर वह नहीं, क्रम से है फल देय।
यत्न वृथा है छोड़ दे, पूर्वकर्म ही गेय ॥११०॥

Ch. 12. Truth: Reality

१२. सत्यता

111. இசையா ஒருபொருள் இல்லென்றல் யார்க்கும்
வசையன்று வையத் தியற்கை—நசை அழுங்க
நின்றோடிப் பொய்த்தல் நிரைதொடீஇ! செய்ந்நன்றி
கொன்றாரின் குற்ற முடைத்து.

Broken promises.

O maid with many armlets graced! To answer 'no' disgraces no man, when the boon asked exceeds his means. It is the world's course. But to delay and cheat the soul faint with desire is a sin like his who *'slays'* a benefit conferred. 111.

अभाववदस्तुन्यथ याचिते तु नेति ब्रुवाणो न भवेद्विनिन्द्यः।
आज्ञानुसारागतमीक्ष्य नेति वदन् कृतघ्नादपि पापवान् स्यात् ॥१११॥

अलभ्य चीजें चाहिये, यों यदि मांगी जाय।
"न" कहने में ना कभी, कसूर माना जाय॥
आगत को "ना" बोलना, आज्ञा के अनुसार।
कृतघ्न से भी हो अघी, तथैव कपटाधार ॥१११॥

112. தக்காரும் தக்கவர் அல்லாரும் தம்நீர்மை
எக்காலும் குன்றல் இலராவர்—அக்காரம்
யாவரே தின்னினும் கையாதாம் கைக்குமாம்
தேவரே தின்னினும் வேம்பு.

Natures change not.

Men of worth, and men unworthy too, retain their natures ever unchanged. Whoever they be that eat it, sugar can never grow bitter; and *margosa* is bitter even when eaten by gods. 112.

नीचाश्च सन्तः सततं स्वभाव-गुणेन पूर्णा न ततो च्यवन्ते।
गुड़ो न कस्यापि भवेत् कषायः स्वाद्यो न निम्बः सुरभक्षितोऽपि ॥११२॥

तजते हैं क्या सहज गुण, अधम कोटि के लोग।
वैसे निज गुण हैं नहीं, तजते सज्जन लोग॥
कषाय सम कटुता नहीं, गुड का आस्वाद।
सुर खादित भी नीम तो, कभी नहीं सुस्वाद॥११२॥

113. காலாடு போழ்தில் கழிகிளைஞர் வானத்து
மேலாடு மீனின் பலராவர்—ஏலா
இடர்ஒருவர் உற்றக்கால் ஈர்ங்குன்ற நாட!
தொடர்புடையேம் என்பார் சிலர்.

Friends in adverse and prosperous time.

When a man moves prosperously on, devoted kinsfolk are countless as shining stars that move in the upper heaven. But when grievous affliction haps,-Lord of the dripping hills!-few claim close alliance with him. 113.

वित्तागमे व्योमगतोडुवृन्द-समास्त्वनेके भुवि बान्धवाः स्यु।
तमेव खिन्नं प्रसमीक्ष्य, 'बन्धु-रसाविति प्रोक्तुमिहास्ति को वा? ॥११३॥

प्राप्त वित्त हो मनुज को, तारावृन्द समान।
जन अनेक संसार में, बनते वन्धुसमान॥
वही मनुज यदि खिन्न हो, तो कहता है कौन।
"वह मम रिश्तेदार है", नहि सब होते मौन॥११३॥

114. வடுவிலா வையத்து மன்னிய மூன்றில்
நடுவணை தெய்த இருதலையும் எய்தும்!
நடுவணை தெய்தாதான் எய்தும் உலைப்பெய்
தடுவது போலும் துயர்.

Wealth the essential things.
Virtue, wealth, and pleasure.

Of the three things that endure upon this faultless earth, he who gains the midmost gains the two extremes also. He who gains not the midmost gains the cruel smart that the turtle feels when put into the pot to boil. 114.

प्राप्नोति योऽर्थं पुरुषार्थमध्ये स्याल्लब्धमेतेन ततो द्वयं तत्।
प्राप्नोत्ययोगोलभवाग्नितापं यो मध्यमार्थं न लभेत लोके ॥११४॥

धर्म अर्थ और काम में, जो पाता है अर्थ।
बाकी दोनों सुलभ हो, सर्वोपरि है अर्थ॥
अर्थहीन संसार में सदैव निस्संदेह।
लुहार-ताडित लोहसम, धरता दुखयुत देह ॥११४॥

115. நல்ஆவின் கன்றாயின் நாகும் விலைபெறூஉம்
கல்லாரே ஆயினும் செல்வர்வாய்ச்சொல் செல்லும்
புல்ஈரப் போழ்தின் உழவேபோல் மீதாடிச்
செல்லாவாம் நல்கூர்ந்தார் சொல்.

The words of the rich and of the poor.

A young heifer fetches a good price when it is the calf of a good cow; so the words of rich men though unlearned, pass current. Poor men's words, like the plough when moisture is scanty, merely graze the surface and are of no avail. 115.

निर्विद्यवित्ताढ्यवचः प्रशस्तं यथाऽतिमूल्यः कुलधेनुवत्सः।
दरिद्रवाक्यं न भवेत् प्रशस्त-मल्पार्द्रभूम्यां तु यथा कृषिः स्यात् ॥११५॥

अनपढ़ अमीर के वचन, होंगे आदरणीय।
सुजातियुत बछड़ा यथा, मूल्यवान महनीय॥
साक्षर गरीब के वचन, ना हो आदरणीय।
स्वल्पार्द्रित भू की उपज, यथा न परिगणनीय ॥११५॥

116. இடம்பட மெய்ஞ்ஞானம் கற்பினும் என்றும்
அடங்காதார் என்றும் அடங்கார்—தடங்கண்ணாய்
உப்பொடு நெய்பால் தயிர்காயம் பெய்தடினும்
கைப்பறாப் பேய்ச்சுரையின் காய்.

Wisdom cannot benefit the undisciplined.

O wide-eyed one! though you cook the wild gourd pouring in salt, ghee, milk, curds, and spices, it never loses its bitterness. So those who never discipline themselves, though they may learn extensive works of true wisdom, never become disciplined. 116.

सच्छास्त्रपाठाद्विनयोऽस्य न स्यात् स्वभावतो यो विनयेन हीनः।
पक्त्वापि दध्ना सह हिङ्गुना च कषायहीना न भवेदलाबूः ॥११६॥

पोथी पढ़ने से मनुज, बनता नहीं विनीत।
स्वभाव से कुछ मनुज हैं, रहते नित अविनीत॥
हिंगु-दही पय आदि से, खूब पकाया जाय।
फिर भी लौकी छोड़ती, क्या गुण निजी कषाय ॥११६॥

117. தம்மை இகழ்வாரைத் தாம்அவரின் முன்இகழ்க
என்னே அவரொடு பட்டது?—புன்னை
விறல்பூங் கமழ்கானல் வீங்குநீர்ச் சேர்ப்ப!
உறற்பால யார்க்கும் உறும்.

Scorn the scorners.

When men scorn you, before their faces scorn them too! what has a man to do with them?—Lord of shore where beauteous *Punnai*-flowers perfume the glades that surround the swelling tide,—what's fated comes to all! 117.

यस्त्वां वृथा निन्दति, तस्य निन्दा कार्या त्वया नैव, दया प्रदर्श्या।
सुखं च दुःखं विधिवद्भवेता, कदम्बगन्धान्वितकूलपाल! ॥११७॥

कदम्ब-गन्धित सिन्धु-तट-पालक पाण्डियराज।
तेरी निन्दा जो करें, बिनु ही कारण काज॥
उसकी निन्दा तुम करो, इस में नहीं कसूर।
सुख-दुख दोनों भाग्य से, भोगेंगे भरपूर ॥११७॥

118. ஆவே றுருவின ஆயினும் ஆபயந்த
பால்வே றுருவின அல்லவாம்—பால்போல்
ஒருதன்மைத் தாகும் அறநெறி ஆபோல்
உருவு பலகொளல் ஈங்கு.

Cows of many colours, milk always white.
Virtue one-many sects.

Though cows in form are diverse, the milk they yield is not diverse. The way of virtue, like that milk, is one in nature, though the schools that teach it here are like those cows, of many forms. 118.

अनेकवर्णा भुवि धेनवः स्युः एको हि वर्णः सकलेऽपि दुग्धे।
धर्मस्य तत्त्वं हि सदैकरूपं धर्मस्य मार्गा बहवस्तथैव ॥११८॥

विविध रंग के धेनुगण, दिखते हैं सर्वत्र।
किन्तु दूध का रंग है, श्वेत एक सर्वत्र॥
धर्म-मार्ग संसार में, दिखते सदा अनेक।
किन्तु तत्व तो धर्म का, दिखता है नित एक ॥११८॥

119. யாஅர் உலகத்தோர் சொல்இல்லார் தேருங்கால்
யாஅர் உபாயத்தின் வாழாதார்—யாஅர்
இடையாக இன்னாத தெய்தாதார் யாஅர்
கடைபோகச் செல்வம்உய்த் தார்

Four questions. The common lot.

Look well! of whom hath not the world found word to say?
And who have not by prudence prospered in life's way?
Ah! who in life's mid course no bitter grief have known?
Ah! who to end of life have kept their wealth their own? 119.

अलब्धनिन्दो भुवि कोऽपि नास्ति तन्त्रैर्विना जीवति नात्र कोऽपि।
को वात्र जीवत्यनवाप्तदुःखो न कोऽपि चान्तं धनवान् विभाति ॥११९॥

कोई भी संसार में, नहि है अलब्ध निन्द।
कोई भी छल के बिना, नहि जीता ओ हिन्द॥
कोई भी दुख के बिना, नहि जीवन पर्यन्त।
कोई भी धनवान है, नहि जीवन पर्यन्त ॥११९॥

120. தாம்செய் வினையல்லால் தம்மொடு செல்வது மற்(று)
யாங்கணும் தேரின் பிறிதில்லை—ஆங்குத்தாம்
போற்றிப் புனைந்த உடம்பும் பயம்இன்றே
கூற்றம்கொண் டோடும் பொழுது.

Nothing accompanies in death but deeds.

Save a man's deeds nought goes with him, search where you will. The body which men cherish so, and adorn, is itself profitless indeed when death shall seize and hurry off with it. 120.

स्वकर्मणोन्यन्न हि याति किञ्चित् प्राणेन साकं मरणान्तकाले।
प्राणं तु काले नयति, स्वदेहः प्रेम्णाभिवृद्धश्च न याति साकम् ॥१२०॥

मरण-काल में मनुज के, सहयामी हैं कौन।
सुकर्म कुकर्म उभय हैं, करते प्रयाण मौन॥
मरण-काल में प्राण ही, ले जाता है काल।
पर तन भूषित भी कभी. लेता नहि है काल ॥१२०॥

Ch. 13. Dread of Evil Deeds.
१३. पाप-कर्म से भीति

121. துக்கத்துள் தூங்கித் துறவின்கண் சேர்கலா
மக்கட் பிணத்தச் சுடுகாடு—தொக்க
விலங்கிற்கும் புள்ளிற்கும் காடே புலன்கெட்ட
புல்லறி வாளர் வயிறு.

Men lead lives of self-indulgence.

The burning ground is filled with the corpses of men that will not give themselves up to a self-renouncing life, but oscillate amid sorrows; and the maws of perverted foolish men are a mere burning-ground for beasts and birds. 121.

सन्न्यासमार्गं तु विहाय खिन्न-संसारिणां स्याद् भुवने स्मशानम्।
अल्पज्ञमांसादमनुष्यकुक्षिः भवेत् स्मशानं मृगपक्षिणां तु ॥१२१॥

यतिजन पथ-को छोड़कर, भवदुख में जो लीन।
उनकी दाहक-भूमि है, जगथित दाह-जमीन॥
मृग चिडियों का किन्तु तो, दाहक थान मसान।
मांसाशी अल्पज्ञ का, उदरकोश नहि आन॥१२१॥

122. இரும்பார்க்குங் காலராய் ஏதிலார்க் காளாய்க்
கரும்பார் கழனியுட் சேர்வர்—சுரும்பார்க்கும்
காட்டுளாய் வாழும் சிவலும் குறும்பூழும்
கூட்டுளாய்க் கொண்டுவைப் பார்.

Penalty for imprisoning birds.

Their legs in iron bound, as slaves to alien lords they will till the black and barren soil, who snared and kept in cages partridges and quails, that dwell in wilds where beetles hum amid the flowers. 122.

ये पक्षिवृन्दान् चरतो वनेषु नयन्ति नीडं, परजन्मनीह।
ते सेवकाः श्रृङ्खलयाढ्यपादाः कुर्युर्हि केदारतलेषु सेवाम् ॥१२२॥

वनचारी खग वृन्द को, वश करके जो लोग।
पिंजर में हैं डालते, अन्य जन्म वे लोग॥
सेवक बनकर पैर में, धरते हैं जंजीर।
खेती करने भूमि में, होते भृत्य अधीर ॥१२२॥

123. அக்கேபோல் அங்கை ஒழிய, விரலழுகித்
துக்கத் தொழுநோய் எழுபவே—அக்கால்
அலவனைக் காதலித்துக் கால்முறித்துத் தின்ற
பழவினை வந்தடைந்தக் கால்.

The penalty incurred by crab-eaters.

Like fire their palms shall glow, their fingers rot away, who loved in other times on crabs to feed, and broke their joints, what time the guilt of 'olden deeds' comes home, and leprosy's fierce pangs assail. 123.

छित्वा तु कर्कटिपदं विमोहात् भोक्ता पुरा दुष्कृतिहेतुनैव।
नष्टाङ्गुलीकः पदमात्रशेषः कुष्ठाधिना क्लिश्यति जन्मनीह॥१२३॥

कर्कट-पद संमोह से, खाया हो कर छेद।
पूर्व जन्म, यह पाप हो, अशन दोष का भेद॥
शायद नर उस पाप से, कुष्ठ रोग से ग्रस्त।
नष्टांगुलीक इस जनम, पैर मात्र नहि ग्रस्त ॥१२३॥

124. நெருப்பழல் சேர்ந்தக்கால் நெய்போல் வதூஉம்
எரிப்பச்சுட் டெவ்வநோய் ஆக்கும்—பரப்பக்
கொடுவினைய ராகுவர் கோடாரும் கோடிக்
கடுவினையர் ஆகியார்ச் சார்ந்து.

Bad companions.

Even things (soft and soothing) like *ghee*, when joined with the fierce heat of fire, will blaze and burn, and cause bitter anguish: so even upright men are perverted and give themselves up to deeds of utter evil, when they attach themselves to those whose deeds are evil. 124.

निर्दुष्टसन्तो भुवि घातकानां संगेन कुर्वन्ति कठोर-कर्म।
यथाग्निसंगाद् बलदं घृतं च भूत्वा सुतप्तं तपतीह देहम् ॥१२४॥

दुरजन के सहवास में, सज्जन भी सद् कर्म।
तजकर इस संसार में, करते हैं बद कर्म॥
आग-संग से घी यथा, बलकर भी हो तप्त।
घायल कर देता सदा, तन को कर संतप्त ॥१२४॥

125. பெரியவர் கேண்மை பிறைபோல நாளும்
வரிசை வரிசையா நந்தும்—வரிசையால்
வாரூர் மதியம்போல் வைகலும் தேயுமாம்
தானே சிறியார் தொடர்பு.

Friendships with great and mean.

Great men's intimate regard will daily grow in order due like the crescent moon. Mean men's alliance like the full moon that rides the sky daily by degrees dwindles away of itself. 125.

क्रमेण नित्यं भुवि बालचन्द्र-सम विवर्धेत सतां तु मैत्रम्।
दिनं क्रमान्नश्यति नीचमैत्री स्वयं यथा नश्यति पूर्णचन्द्रः ॥१२५॥

सज्जन की दृढ़ मित्रता, बालेन्दु के समान।
क्रम से नित संसार में, होगी विवर्धमान॥
दुर्जन की तो मित्रता, पूर्ण सुधांशु समान।
क्रम से अपने आप ही, होगी विनाशवान ॥१२५॥

126. சான்றோர் எனமதித்துச் சார்ந்தாய்மன் சார்ந்தாய்க்குச்
சான்றாண்மை சார்ந்தார்கண் இல்லாயின் சார்ந்தாய்கேள்
சாந்தகத் துண்டென்று செப்புத் திறந்தாருவன்
பாம்பகத்துக் கண்ட துடைத்து:

Disappointment and danger from foolish attachments.

Thou didst attach thyself (to unworthy persons), saying, they are men of absolute integrity! If to thee who hast thus attached thyself, integrity in those thine intimates does not appear; hear, O thou who hast so attached thyself, it is as if one opened a casket, thinking it contained an odorous unguent, and saw a snake within. 126.

अयं गुणी चेति विभाव्य मैत्रीं कृत्वाऽत्र पश्येर्यदि निर्गुणत्वम्।
सुगन्धबुध्या विवृते तु पात्रे सर्पस्य साक्षात्कृतिवद् भवेत्तत् ॥१२६॥

यह गुणशाली समझकर, करके मित्रविकास।
फिर इस में गुणहीनता, दर्शित तभी निरास॥
आशा रखकर गंध की, पेटी खोली जाय।
तो उस में से अहि यथा, बाहर निकला जाय ॥१२६॥

127. யாஅர் ஒருவர் ஒருவர்தம் உள்ளத்தைத்
தேருந் துணைமை உடையவர் — சாரல்
கனமணி நின்றிமைக்கும் நாட! கேள்; மக்கள்
மனம்வேறு செய்கையும் வேறு.

Man cannot fathom other men's minds.

what single man has power to search and clearly know the inmost self of other men? Lord of the land where weighty gems glisten on mountain slope, O hear!_Men's minds are otherwise, and otherwise their deeds. 127.

अन्यो हि भावः कृतिरन्यरूपा कृत्यैः समालोच्य मनुष्यचित्तम्।
ज्ञातुं न शक्तो मनुजः शृणु त्वं रत्नप्रभापूर्णमहीधरेश! ॥१२७॥

श्रेष्ठ रत्न से पूर्ण औ, गिरिगणयुत भूमेश।
भावलेश है और कुछ, तथा और कृतिलेश॥
रे नर! कृति के मूल से, भाव बोध नहि साध्य।
सचमुच मानव के लिये, यह है नहीं सुसाध्य ॥१२७॥

128. உள்ளத்தான் நள்ளா துறுதித் தொழிலராய்க்
கள்ளத்தான் நட்டார் கழிகேண்மை — தெள்ளிப்
புனற்செதும்பு நின்றலைக்கும் பூங்குன்ற நாட!
மனத்துக்கண் மாசாய் விடும்.

Friends from self-interest.

Lord of the flowery hilly land where streams wash out and carry hither and thither (precious things) form the marshy land!_The effusive friendship of those who do not attach themselves (to us) in heart, but perform certain friendly acts merely to strengthen their own position, and who form friendships guilefully, will issue in disappointment to the minds (of those who are intimate with them). 128.

अबुद्धिपूर्वं निजलाभबुद्ध्या कुवञ्चनापूर्वकृताऽतिमैत्री।
भवेन्मनःक्षोभकरी, प्रवाह-विनाशिपङ्कामलदेशपाल! ॥१२८॥

निर्झर से गतपंक औ, निर्मल पृथ्वीपाल।
यदि नर की अतिमित्रता, रखती है छलजाल॥
औ निज सुलाभ- बुद्धि से, कृत हो औ अनजान।
तो ऐसी अतिमित्रता, हो क्षय विनाशवान ॥१२८॥

129. ஒக்கிய ஒள்வாள்தன் ஒன்னுர்கைப் பட்டக்கால்
ஊக்கம் அழிப்பதூஉம் மெய்யாகும்—ஆக்கம்
இருமையும் சென்று சுடுதலால் நல்ல
கருமமே கல்லார்கண் தீர்வு.

Ruin from unfitting intimacies.

If the glittering swords a man brandishes (be allowed to) fall into the hands of his foes, it will assuredly come about that he will thus destroy also his own power of action. So wealth(bestowed on the foolish) will go and burn up (merit accruing in) both worlds, and therefore the really good thing is to keep clear of the foolish. 129.

शत्रौ प्रयुक्तासिरवध्यशत्रोः करं गतश्चेद्वचसनं प्रयोक्तुः।
दद्यात्, तथा मूढजनेषु दानं लोकद्वये दुःखकरं प्रदातुः ॥१२९॥

रिपु पर प्रयुक्त खड्ग यदि, अवध्य रिपु के हाथ।
मिल जाता तो क्षेपकर, पाता ही आघात॥
तथा मूढ के प्रति दिया, जाता है जो दान।
दाता को दुखकर सदा, होता घाव समान ॥१२९॥

130. மனைப்பாசம் கைவிடாய் மக்கட்கென் றேங்கி
எனைத்தூழி வாழ்தியோ நெஞ்சே—எனைத்தும்
சிறுவரையே ஆயினும் செய்தஅன் றல்லால்
உறுபயனே இல்லை உயிர்க்கு.

To do good is life's gain.

O mind! thou leavest not the bonds of home. How many cycles, pray, with thou live yearning still for children? Save the good he has done however small; its measure may be, there is no true result to any living soul. 130.

स्वल्पोऽपि धर्मः सुकृतो मनुष्यैः जीवस्य सन्तारणहेतुभूतः।
पाशं स्वपत्न्यामविहाय पुत्र-प्रेम्णा कुतो जीवसि चित्त! मोघम् ॥१३०॥

भवतारण का हेतु है, जग में केवल धर्म।
जीवोद्धारक अल्प भी, कर लो धार्मिक कर्म॥
पतनी तथैव पुत्र पर, नहीं दिखाओ प्यार।
धर्म अलौकिक जगत में, सब का है आधार॥१३०॥

Ch. 14. Learning
१४. राजधर्माध्याय—विद्या

131. குஞ்சி யழகும் கொடுந்தானைக் கோட்டழகும்
மஞ்சள் அழகும் அழகல்ல—நெஞ்சத்து
நல்லம்யாம் என்னும் நடுவு நிலைமையால்
கல்வி யழகே யழகு.

Learning, the only beauty.

Beauty of locks, beauty of circling garments' folds, beauty of saffron tint: these are not beauty true.Integrity of soul that brings the conscience peace is learning's gift: that only is beauty true! 131

लसच्छिखासंस्कृतपट्टवस्त्र-स्रक्चन्दनैर्याति नरो न शोभाम्।
"अहं गुणाढ्य" स्त्विति भावरूप-विद्यैव शोभां तनुते नरस्य ॥१३१॥

नहीं सजाता मनुज को, रंगयुक्त परिधान।
विलसित सुरम्य-केश औ, चन्दनादि सामान॥
सभ्यशीलता चित्र में, वर्द्धक विद्या-मात्र।
नर को सचमुच रातदिन, बनती भूषण-पात्र ॥१३१॥

132. இம்மை பயக்குமால் ஈயக் குறைவின்றால்
தம்மை விளக்குமால் தாமுளராக் கேடின்றால்
எம்மை யுலகத்தும் யாம்காணோம் கல்விபோல்
மம்மர் அறுக்கும் மருந்து

The remedy for bewilderment.

Since in this world it yields fruit; since given it grows not less; since it makes men illustrious; since it perishes not as long as (its possessors) themselves exist; in any world we see not any medicine that, like learning, removes the delusions of sense. 132.

दानाद्विनाशं न हि याति, वृद्धिं ददाति, नित्या भुवि, कीर्तिदात्री।
अज्ञानरोगप्रशमौषधं तु विद्यासमं नो भुवि, सा प्रशस्ता ॥१३२॥

वित्तदान से क्षीय धन, पर विद्या नहीं क्षीय।
विद्या-धन संसार में, मति यश कर कमनीय॥
ज्ञानहीनता-रोगहर, औषध इल्म समान।
कोई और हि जगत में, नहि है प्रशस्तिमान ॥१३२॥

133. களர்நிலத் துப்பிறந்த உப்பினைச் சான்றோர்
விளைநிலத்து நெல்லின் விழுமிதாக் கொள்வர்;
கடைநிலத்தோ ராயினும் கற்றறிந் தோரைத்
தலைநிலத்து வைக்கப் படும்.

The learned, though low-born, are first.

The excellent regard the salt produced in brackish *ground* as choicer than the *Nel* from fertile *soil*. It is fitting to place in the first *rank* the learned-wise, though (sprung)from the lowest *origin*. 133.

कुदेशजातं लवणं वरं स्यात् साराढ्यकेदारसमुत्थधान्यात्।
निषिद्धवंशे जनितोऽप्यधीत-विद्यस्तथा श्रेष्ठपदे निवेश्य ॥१३३॥

सारयुक्त केदार में, पैदा होते धान।
उससे कुदेश जनित भी, होगा नमक महान॥
नीच वंश में जनित भी, यदि हो मनुज अधीत।
तो पद पर आरूढ़ हो, नियम यही निर्णीत ॥१३३॥

134. வைப்புழிக் கோட்படா வாய்த்தீயிற் கேடில்லை
மிக்க சிறப்பின் அரசர் செறின்வவ்வார்
எச்சம் எனஒருவன் மக்கட்குச் செய்வன
விச்சைமற் றல்ல பிற.

Learning, the best legacy.

It cannot be taken from its place of deposit; it does not perish anywhere by fire; if kings of surpassing grandeur are angry they cannot take it away; (and therefore) what any man should provide for his children as a legacy is learning. Other things are not (real wealth). 134.

हर्तुं न शक्या कुपितेन राज्ञा दानादनाश्या न तु चोरहार्या।
विद्या भवेत्, तादृशवित्ततोऽन्यत् सम्पाद्य पित्रा न सुताय रक्ष्यम् ॥१३४॥

कुपित-भूप से शक्य नहि, हरने विद्या-भाल।
दान-कर्म से क्षीय नहि, चोरहार्य नहि माल॥
विद्या-धन सुत के लिए, सदैव तो है रक्ष्य।
जिससे निज संतान को, मिलता होगा भक्ष्य॥१३४॥

135. கல்வி கரையில கற்பவர் நாள்சில
மெல்ல நினைக்கின் பிணிபல—தெள்ளிதின்
ஆராய்ந் தமைவுடைய கற்பவே நீரொழியப்
பாலுண் குருகின் தெரிந்து.

Discriminating study.

Learning hath no bounds, the learners' days are few. If you think calmly, diseases many wait around! With clear discrimination learn what is meet for you, like the swan that leaving the water drinks the milk. 135.

विद्या ह्यनन्ता पठितुस्तु कालः सान्तोऽत्र नानाऽऽमयदुःखजातम्।
विचार्य शास्त्रेष्वतिसारभूत-मधीहि हंसस्तु यथैव दुग्धम् ॥१३५॥

विद्या की सीमा नहीं, पाठक-काल ससीम।
विविध रोग मय शोक भी, होते हैं निस्सीम॥
मनुज हंस सम सार ही, गह लें सोच विचार।
जो ही है अतिसारमय, औ शास्त्रीय विचार॥१३५॥

136. தோணி இயக்குவான் தொல்லை வருணத்துக்
காணின் கடைப்பட்டான் என்றிகழார்—காணுய்
அவன்துணையா ஆறுபோய் அற்றேறூல் கற்ற
மகன்துணையா நல்ல கொளல்.

Never mind the boatman's caste if he take you over!

As none contemn the ferryman, by old caste rule to lowest rank assigned, but cross the stream by help he lends; so take thou teachings good and wise by help of him who is the learned man. 136.

स्यात् पोतनेता कुलतोऽन्तिमस्तत् विस्मृत्य पोतेन नदीं तरन्ति।
अधीतशास्त्रादपि नीचवंश्यात् ग्राह्यास्तथा शास्त्रनिबोधितार्थाः ॥१३६॥

नाविक कुलीन यदपि नहि, तो भी उसको भूल।
कर हम उसकी मदद से, तरते है नद-कूल॥
वैसे ही यदि शास्त्रविद्, मानव नहीं कुलीन।
तो भी उससे सीखना, कृति है नहीं मलीन॥१३६॥

137. தவலருந் தொல்கேள்வித் தன்மை யுடையார்
இகலிலர் எஃகுடையார் தம்முள் குழீஇ
நகலின் இனிதாயின் காண்பாம் அகல்வானத்
தும்பர் உறைவார் பதி.

The supreme enjoyment of the society of learned and amiable men.

We shall see whether any greater bliss is found in the city inhabited by the dwellers in the ample heaven than is felt when men of natures formed by old imperishable lore, from rivalries exempt keen as tempered steel, meet together and laugh. 137

बहुश्रुतानां महतां सुसूक्ष्म-बुद्ध्या युतानां जितशात्रवाणाम्।
समाजवासात्तसुखाद्वरिष्ठ-सुखं न दद्यादमरावतीयम् ॥१३७॥

मेधायुत बहुशास्त्रविद, विरोधभाव-विहीन।
बुद्धिमान अतिसूक्ष्मदृग, पाठक दोषविहीन॥
ऐसे बुध संपर्क से, मिलता जो आनन्द
अमरावतीय हर्ष से, वह है सच्चानंद॥१३७॥

138. கனைகடல் தண்சேர்ப்ப! கற்றறிந்தார் கேண்மை
நுனியின் கரும்புதின் றற்றே—நுனிநீக்கித்
தூரின்தின் றன்ன தகைத்தரோ பண்பிலா
ஈரமிலாளர் தொடர்பு.

The friendship of the learned ever grows sweeter that of the unlearned ever diminishes in sweetness.

Lord of the cool shore of the resounding sea, intimacy with learned people is like eating sugar cane from the (tender, juicy) tip; association with graceless, sapless men is like leaving the (tender) tip and eating it from the (hard, dry)root. 138

इक्ष्वग्रभागात्क्रमभक्षणेन समं रसाढ्यं महतां तु मैत्र्यम्।
मूलेक्षुभागात्क्रमभक्षणेन समाऽज्ञमैत्री रसभङ्गकारी ॥१३८॥

सज्जन मैत्री जगत में, क्रम से विवर्धमान।
अग्र भाग के इक्षु के, रस सम अक्षयमान॥
दुर्जन मैत्री अशन से, क्रम से हो क्षयमान।
मूल भाग के इक्षु के, रसमय असारवान ॥१३८॥

139. கல்லாரே யாயினும் கற்றாரைச் சேர்ந்தொழுகின்
நல்லறிவு நாளும் தலைப்படுவர்—தொல்சிறப்பின்
ஒண்ணிறப் பாதிரிப்பூச் சேர்தலால் புத்தேடு
தண்ணீர்க்குத் தான்பயந் தாங்கு.

The benefits of association with the learned.
The pot impregnated with odour.

Though themselves unlearned, if men live in association with the learned they advance daily in excellent knowledge. The new vessel, by contact with the *Padri*-flower of old renown and lustrous hue, imparts fragrance to the cold water it contains. 139

वुधस्य सङ्गाल्लभते जडोऽपि ज्ञानं, तथा शुद्धसुगन्धिपुष्पम्।
नवं घटं प्राप्य घटान्तरस्थ-नीरेऽपि सौगन्ध्यमिदं ददाति ॥१३९॥

वुधजन के संपर्क से, जडमति पाता ज्ञान।
इसमें अचरज है नहीं, वुधसंगति-परिमाण॥
नव घर में हो रोधयुत, फूलयुक्त घट-नीर।
प्रसून संगति हेतु , से सुराभित सुधा अबीर ॥१३९॥

140. அலகுசால் கற்பின் அறிவுநூல் கல்லா
துலகநூல் ஓதுவ தெல்லாம்—கலகல
கூஉம் துணையல்லால் கொண்டு தடுமாற்றம்
போஒம் துணையறிவார் இல்.

Books of wisdom are the best.
Others cannot remove confusion of mind.

If men leaving works of wisdom, that contain well-weighed instruction, unstudied, devote themselves to the recitation of mere worldly literature, they will acquire a store of empty high-sounding words, but not that wisdom by means of which mental confusion (that treats unreal things as real) is removed. 140

सन्त्येव शास्त्राणि बहूनि तेषु वेदान्तशास्त्राध्ययनं विहाय।
सामान्यशास्त्राध्ययनात् तुवाद-शक्तिर्भवेत्, सिद्धचति नोर्ध्वलोकः ॥१४०॥

जग में अनेक शास्त्र हैं, उनमें विनु वेदान्त।
शेष शास्त्र का अध्ययन, नहि है प्रयोजनान्त॥
तर्क शास्त्र का अध्ययन, विमुक्ति को नहि मूल।
केवल वाद-विवाद का, हो जाता है मूल ॥१४०॥

Ch. 15. High Birth
१५. अच्छे कुल में जन्म

141. *உடுக்கை உலறி உடம்பழிந்தக் கண்ணும்*
குடிப்பிறப் பாளர்தம் கொள்கையிற் குன்றார்
இடுக்கண் தலைவந்தக் கண்ணும் அரிமா
கொடிபபுல் கறிக்குமோ மற்று.

In adversity noble men do not desert their principles.

Though their clothes may be old-and their body worn with want, men of noble birth diminish nothing of their due observances. Will the lion nibble the creeping grass although sorest need should assail him?

141.

विच्छिन्नवस्त्राः क्षुधया कृशाङ्गाः सन्तोऽपि चोत्कृष्टकुले प्रसूताः।
न लक्ष्यमार्गात् सततं च्यवन्ते सिंहः क्षुधार्तो न तृणं यथाऽत्ति ॥१४१॥

कुलीन यद्यपि भूख से, कृशतनु कपड़े शीर्ण।
धरते तो भी वे नहीं, रखते लक्ष्य विदीर्ण॥
यथा विपिन में केसरी, क्षुत् पीडित हो जाय।
फिर भी भूसा-घास को, कभी न खाया जाय ॥१४१॥

142. *சான்றாண்மை சாயல் ஒழுக்கம் இவைமூன்றும்*
வான்தோய் குடிப்பிறந்தார்க் கல்லது—வான்தோயும்
மைதவழ் வெற்ப! படாஅ பெருஞ்செல்வம்
எய்தியக் கண்ணும் பிறர்க்கு.

The high-born only have perfect excellence, greatness, and good manners.

Lord of the hills traversed by clouds that touch the heavens! true excellence, and dignity, and good conduct, these three things belong to men of race that touches heaven, and not others, even though they may have acquired great wealth.

142.

महत्वचारित्र्यगुणत्रिकं तु विख्यातवंशे जनितान् विहाय।
नान्येषु वित्ताढ्यजनेषु तिष्ठेत् मेघालयोर्ध्वंगतपर्वतेश! ॥१४२॥

नभचुंबी घन के सदृश, ऊंचे पर्वतनाथ।
महत्व सद्गुण सभ्यता, ये तीनों इक साथ॥
कुलीन में ही दीखते, औरों में नहि तीन।
चाहे रख लें अधिक धन, वैभव ही अकुलीन॥१४२॥

143. இருக்கை எழலும் எதிர்செலவும் ஏனை
விடுப்ப ஒழிதலோ டின்ன—குடிப்பிறந்தார்
குன்று ஒழுக்கமாக் கொண்டார்; கயவரோ
டொன்று உணரற்பாற் றன்று.

The noble only have an instinctive sense of propriety.

Rising from their seat (at the approach of worshipful persons), going forth to meet them, departing when they dismiss, and such-like things, the well born maintain as invariable decorum. The low understand not one of these things. 143.

सद्दर्शने चोत्थितिरासनात्त-त्प्रत्युद्गमस्तद्गमनेऽनुयानम्।
इमे गुणाः सत्कुलजेषु सन्ति नैते मता मूढजनैः समानाः ॥१४३॥

सज्जन को जब देख लें, तब न रहें आसीन।
आसन से होना खड़ा, अनुनय नहीं नवीन॥
ये सब शील कुलीन में, सम्यक हैं मौजूद।
किन्तु मूढ में ये सभी, कभी नहीं मौजूद ॥१४३॥

144. நல்லவை செய்யின் இயல்பாகும் தீயவை
பல்லவர் தூற்றும் பழியாகும்—எல்லாம்
உணருங் குடிப்பிறப்பின் ஊதியம் என்னே
புணரும் ஒருவர்க் கெனின்.

Noble birth makes duty easy.

If men (of noble birth) do good things it is natural to them. As to evil things (to commit these is impossible to them); for this would be guilt which many would bruit abroad. What greater good then can accrue to men than high-birth, if it be their lot, to which the perception of all (these things) belongs! 144.

सत्कर्म लोके तु कृतं कुलीनै-स्तेषां स्वभावोऽयमितीरयेयुः।
कृतं तु दुष्कर्म जनो विनिन्देत् कुलीनता लाभकारी न भाति ॥१४४॥

कुलीनकृत सत्कर्म का, हेतु सहज, नान्यैव।
इसीलिये तारीफ की, गुंजाइश ही नैव॥
कुलीन-कृत दुष्कर्म की, निन्दा हो अनिवार्य।
कुलीनता लाभद नहीं, शेष वृथा श्रमकार्य ॥१४४॥

145. கல்லாமை அச்சம் கயவர் தொழிலச்சம்
சொல்லாமை யுள்ளுமோர் சோர்வச்சம்—எல்லாம்
இரப்பார்க்கொன் றீயாமை அச்சம் மரத்தாரிம்
மாணாக் குடிப்பிறந் தார்.

These four pious fears exist only among the really worthy.
Dread of unlearned ignorance; dread of the work that base men do; dread of forgetful slip in words which one must not utter; dread of not giving to those that ask: those who are born of a race not so distinguished by conscientious fears are as wood. 145.

अधीत्यभावाद्विनिषिद्धकार्या-दसत्यपैशुन्यनिरर्थवाक्यात्।
अदानतो बिभ्यति वै कुलीनाः परे त्वभीताः किल काष्ठतुल्याः ॥१४५॥

अनध्ययन पैशुन्य औ, निषिद्ध कार्यकलाप।
झूठ बोलना, दान का, अभाव नीचालाप॥
इन से तो भयभीत हैं, जग में सदा कुलीन।
किन्तु नहीं भयभीत हैं, काष्ठतुल्य अकुलीन ॥१४५॥

146. இனநன்மை இன்சொலொன் றீதல்மற் றேனை
மனநன்மை என்றிவை யெல்லாம்—கனமணி
முத்தோ டிமைக்கு முழங்குவரித் தண்சேர்ப்ப
இற்பிறந்தார் கண்ணே யுள.

The fine qualities of the high-born.
Lord of the roaring salt-sea's cool shore, where gleam rare gems with pearls! Association with the good, pleasant speech, a liberal hand, and purity of mind,_all these are only found among the nobly born.
146.

प्रशस्तमैत्र्यं मधुरं च वाक्यं दीनेषु दानं हृदि पूतता च।
इमे गुणाः सन्ति कुलीनमर्त्ये मुक्तामणिभ्यां युतसिन्धुपाल! ॥१४६॥

मोती लालों से सहित, शीत सिन्धुतट-पाल।
सच्ची अच्छी मित्रता, मधुर वाक्य का जाल॥
देना दान गरीब को, दिल का निर्मल भाव।
ये सब शील कुलीन में, दर्शित निसर्गभाव ॥१४६॥

147. செய்கை யழிந்து சிதல்மண்டிற் றாயினும்
பெய்யா ஒருசிறை பேரில் உடைத்தாகும்;
எவ்வம் உழந்தக் கடைத்தும் குடிப்பிறந்தார்
செய்வர் செயற்பா லவை.

High-born men do their duty always.

Though its frame-work has perished, and thronging white ants infest it, in a spacious mansion some room will still afford shelter from the rain. Thus, although want annoys them, the nobly born even yet will do what should be done. 147.

दारिद्र्यकालेऽपि कुलीनमर्त्याः कुर्वन्ति नूनं विहितं स्वकार्यम्।
विशीर्णभिन्ने तु गृहे स्थलैक-भागो न वर्षाजलपातसिक्तः ॥१४७॥

दारिद्र-विपन्न-समय में, भी कुलीन नर लोग।
फरज निभाते हैं सदा, औ रहते निरशोक॥
भग्नावशेष यदपि हो, घर का सच्चा हाल।
फिर भी दार्शित एक थल, जहां न वर्षाजाल ॥१४७॥

148. ஒருபுடை பாம்பு கொளினும் ஒருபுடை
அங்கண்மா ஞாலம் விளக்குறூஉம்—திங்கள்போல்
செல்லாமை செவ்வன்றேர் கிற்பினும் ஒப்புரவிற்
கொல்காக் குடிப்பிறந் தார்.

The moon when half in the serpent's mouth still gives light.

Like the moon which affords light to the fair and spacious earth with one side, while the dragon holds the other, the nobly born do not become remiss in works of seemly benevolence, though poverty(inability) stand fronting them. 148.

दारिद्र्यकालेऽपि कुलीनमर्त्याः परोपकाराद्विरमन्ति नैव।
सर्पेण चन्द्रः पिहितैकभागः प्रकाशयेद्गां परभागभासा ॥१४८॥

दारिद-विपन्न समय में, भी कुलीन नर-नार।
अपनाते हैं रोज ही, व्रत नित परोपकार॥
राहु सर्प से चांद का, आच्छादित इक भाग।
भासित करता भूमि को, तो भी बांकी भाग॥१४८॥

149. செல்லா விடத்தும் குடிப்பிறந்தார் செய்வன
செல்லிடத்தும் செய்யார் சிறியவர் —புல்வாய்
பருமம் பொறுப்பினும் பாய்பரி மாதிபால்
பொருமுரண் ஆற்றுதல் இன்று.

The deer becomes not a charger.

Men of mean descent, even when all goes well with them, will not perform the good deeds that the well-born will do, even when things do not go well with them.

Though the antelope should bear a pillion, it rushes not to war like the prancing charger. 149.

क्लेशेऽपि सत्कर्म कृतं कुलीनैः नीचैर्धने सत्यपि न क्रियेत।
सवीरवेषोऽपि मृगस्तु युद्धे न वीरकार्यं कुरुते यथाऽश्वः ॥१४९॥

दुख में कुलीन मनुज, करते हैं सद्कर्म।
धनवत्ता में भी अधम, नहि करते सद्कर्म॥
जैसा घोड़ा युद्ध में, आ जाता है काम।
वैसा सवीरवेष मृग, नहि करता धृति-काम ॥१४९॥

150. எற்றென்றும் இல்லா விடத்தும் குடிப்பிறந்தார்
அற்றுக்கற் சேர்ந்தார்க் கசைவிடத்து ஊற்றுவர்
அற்றக் கடைத்தும் அகல்யா றகழ்ந்தக்கால்
தெற்றெனத் தெண்ணீர் படும்.

The noble even in poverty afford aid do those who seek it.

The nobly born, even when destitute, are props in time of feebleness to the needy ones that draw nigh to them. So, when the river is dry, if you dig in its bed, forthwith clear waters gush out. 150.

धनेन हीना अपि सत्कुलीनाः प्राप्ताय दीनाय सहायभूताः।
यथा नदीयं खननेन नीरं ददाति शुष्काऽपि निदाघकाले ॥१५०॥

धनयुत कुलीन और का, करते हैं उपकार।
निर्धन हो भी दीन का, करते हैं उपकार॥
सरिता प्रवाह-समय में, देती है जलदान।
गर्मी में भी खनन से, वह देती जलदान॥१५०॥

Ch.16. Great Men
१६. ऊँचे लोग

151. அங்கண் விசும்பின் அகல்நிலாப் பாரிக்கும்
திங்களும் சான்றோரும் ஒப்பர்மன்—திங்கள்
மறுவாற்றும் சான்றோர்அஃ தாற்றார் தெருமந்து
தேய்வர் ஒருமா சுறின்.

The good cannot endure a stain.

The moon that diffuses light through heaven's fair realms, and truly worthy men are alike: yet that endures a spot, while the truly worthy endure it not;—perplexed and sad they pine away if but one stain appear. 151.

बाह्यं तमो हन्ति विधुः स्वभासा ह्यान्तं तमो घ्नन्ति तथा महान्तः।
समाविमौ; किन्तु विधुः कलङ्कं सहेत, सन्तो न तथा सहेरन् ॥१५१॥

करता है विधु कान्ति से, बाह्य तमस का नाश।
उत्तम नर करता तथा, आन्त तमस का नाश॥
उभय सदृश है किन्तु विधु, सहता निजी कलंक।
उत्तम सहता ही नहीं, सदैव निजी कलंक ॥१५१॥

152. இசையும் எனினும் இசையா தெனினும்
வசைதீர எண்ணுவர் சான்றோர்—விசையின்
நரிமா வளங்கிழித்த அம்பினில் தீதா
அரிமாப் பிழைப்பெய்த கோல்.

Aim high! Better miss a lion, than hit a jackal.

Whether success attend, or do not attend the work, the excellent will even ponder blameless ends.—Is the shaft that missed the lion worse than the arrow sent forth, that with its impulse pierced the jackal's heart? 152.

साध्यं क्वचित् स्यात् क्वचिदप्यसाध्यं कार्ये महत्येव विशन्ति सन्तः।
मोघोऽपि सिंहे प्रहितस्तु बाणः सृगालघातान्नितरां प्रशस्तः ॥१५२॥

कहीं साध्य है औ कहीं, साध्य नहीं है कार्य।
फिर भी उत्तम हाथ में, लेते महान कार्य॥
प्रयुक्त बाण मृगेन्द्र पर, यदि होता है मोघ।
सियारघातक बाण से, प्रशस्त रहें अमोघ ॥१५२॥

153. நரம்பெழுந்து நல்கூர்ந்தா ராயினும் சான்றோர்
குரம்பெழுந்து குற்றங்கொண் டேறார்—உரம்கவரு
உள்ளமெனும் நாரினுற் கட்டி உளவரையால்
செய்வர் செயற்பா லவை.

The excellent are not led by want to commit evil.

The excellent though emaciated and and poor, do not transgress the limits of virtue and commit evil. With wisdom for the pillar, with perseverance as the band, they bind (the mind); and as long as they live they do what it behoves them to do. 153.

दारिद्र्यहेतोः कृशदेहवन्तः सन्तः कुकार्याण्यविधाय धीराः।
प्रयत्नरज्ज्वा स्वमनो निबध्य कुर्वन्ति सत्कर्म यथा स्वशक्तिः ॥१५३॥

दारिद-कारण कृशतनूं, हो जाते हैं संत।
फिर भी वे करते नहीं, कुत्सित कर्म अनंत॥
तथा यत्न के रज्जु से, चित्र बांधकर आप।
ताकत के अनुसार ही, करते सुकृति-कलाप ॥१५३॥

154. செல்வுழிக் கண்ஒருநாள் காணினும் சான்றவர்
தொல்வழிக் கேண்மையின் தோன்றப் புரிந்தியாப்பர்
நல்வரை நாட! சிலநாள் அடிப்படின்
கல்வரையும் உண்டாம் நெறி.

The good never forget even a casual acquaintance.

Lord of the land of goodly hills!—If trodden for a few days a path is formed over even the craggy hill; so excellent persons, though they have seen (worthy) men only for one day, as they were travelling, will bind them to their soul, exhibiting all the makes of an ancient friendship. 154.

दृष्ट्वैकवारं तु यदृच्छयैकं तमाप्तमित्रं समुदीक्ष्य सन्तः।
कुर्वन्ति मैत्रीं, असकृत्प्रयाणात् स्यात् क्षुण्णमार्गस्तु शिलातलेऽपि ॥१५४॥

गिरि से वलयित देश का, नायक जनताधार।
एक बार संयोग से, अगर दृष्ट हो यार॥
तो उसकी नित मित्रता, करते संत महान।
असकृत गिरि पर गमन से, होगी राह महान ॥१५४॥

155. *புல்லா எழுத்தின் பொருளில் வறுங்கோட்டி*
கல்லா ஒருவன் உரைப்பவும், கண்ணோடி
நல்லார் வருந்தியுங் கேட்பரே ; மற்றவன்
பல்லாருள் நாணல் பரிந்து.

The good listen with patient courtesy to the orations of the ignorant.

Even when one speaks who has an ungrammatical knowledge of the letter, but not of the meaning who is of a low(empty)school, and is unlearned the good with kindly compassion will listen, though it is pain to them, being grieved that he should be put to shame in the presence of many. 155.

अशब्दशास्त्रार्थविदज्ञसंघे ब्रूयाज्जडः किंचिदिदं महान्तः।
दाक्षिण्यबुद्ध्या दयया च सोढ्वा तज्जल्पनं च श्रृंणुयुः कथञ्चित् ॥१५५॥

शब्द शास्त्र से अपरिचित, अनपढ़ जनता बीच।
असंबद्ध की बात है, कहता विमूढ नीच॥
मेहरबानी से तथा, करुणा से बकवाद।
सुनते हैं उत्तम पुरुष, सहते विरोध-वाद ॥१५५॥

156. *கடித்துக் கரும்பினைக் கண்தகர நூறி*
பிடித்துநீர் கொள்ளினும் இன்சுவைத்தே ஆகும் :
வடுப்பட வைதுநிறந்தக் கண்ணும் குடிப்பிறந்தார்
கூறுதம் வாயிற் சிதைந்து.

Sugar-cane, crush it is as you will, is ever sweet.

Although you bite the sugar-cane, crush it till its joints are broken, grind it, and express its juice, it still will be sweet. The highly born, even when men have passed by abusing them so as to wound, never lose their self-respect so as to utter from their mouth (words of abuse). 156.

दन्तैश्च यन्त्रैर्मुसलैस्तदाऽन्यैः पिष्टेक्षुसारे रुचिरैकरूपा।
विनिन्दिताश्चापि परैर्महान्तः स्वख्यातिभङ्गं न वदन्ति वाक्यम् ॥१५६॥

दांतों से या यंत्र से, अथवा औ से पिष्ट।
इक्षुसार तो रुचिकरी, रुचिरैकरूप इष्ट॥
सम्यक् निन्दित और से, सदैव संत महान।
ख्याति भंग कर वाक्य तो, कहते नहि असमान ॥१५६॥

157. கள்ளார்கள் உண்ணார் கடிவ கடிந்தொரீஇ
எள்ளிப் பிறரை இகழ்ந்துரையார்—தள்ளியும்
வாயின்பொய் கூறார் வடுவறு காட்சியார்
சாயின் பரிவ திலர்.

The wise free from gross evils.

They defraud not, drink not palm-wine, shun what is frobidden, never despise and speak contemptuously of their neighbours, nor even forgetfully do they utter anything untrue with their mouth: these men of faultless vision grieve not though they fall into distress. 157.

चौर्यं न कुर्वन्ति न वा निषिद्धं पिबन्ति मद्यं न विशिष्टसत्त्वा:।
परान्न निन्दन्ति कदाऽयसत्यं ब्रूयुर्न खिन्ना व्यसनागमेऽपि ॥१५७॥

चोरी करते हैं नहीं, नापि विदूषित काम।
संत न पीते मधु-सुरा, दुख में भी न हराम॥
करते नहि पर-निन्दना, जो नहि है अयथार्थ।
सो जीवन्त पर्यन्त ही, कहते हैं सत्यार्थ ॥१५७॥

158. பிறர்மறை யின்கண் செவிடாய்த் தீய
ஏதிலார் இல்கண் குருடனாய்த் திறனறிந்து
புறங்கூற்றின் மூகையாய் நிற்பானேல் யாதும்
அறங்கூற வேண்டா அவற்கு.

When a man should be deaf, blind, and dumb.

Deaf to others; secrets, blinds to his neighbour's wife, dumb to evil backbiting—if, knowing what is befitting, a man thus abides,it is not necessary to teach him any virtuous precepts. 158.

यो वान्धवत्पश्यति नान्यनारीं यो वान्यदोषे बधिरायते च।
यो वान्यनिन्दाकथनेऽपि मूको धर्मोपदेशस्तु वृथैव तस्य ॥१५८॥

पर-पतनी को जो नहीं, लखता अंध-समान।
पर-रहस्य को जो नहीं, सुनता बधिर-समान।
पर-निन्दा भी जो नहीं, करता मूक-समान।
हो धार्मिक उपदेश तो, उसे व्यर्थ तू जान ॥१५८

159. பன்னாளும் சென்றக்கால் பண்பிலார் தம்உழை
என்னானும் வேண்டுப என்றிகழ்ப—என்னானும்
வேண்டினும் நன்றுமற் றென்று விழுமியோர்
காண்டொறும் செய்வர் சிறப்பு.

Seek the good they are always kind.

They who are destitute of kindly courtesy, even after the lapse of many days, will contemn (those that visit them), saying, 'they will ask something of us'. The excellent will treat them with distinction whenever they see them, saying, 'if they ask something of us, it is well'. 159.

निजान्तिकं नित्यमुपागमेद्यो याच्ञाभिया निन्दति निर्गुणी तम्।
"याचत्वयं किञ्चि" दिति स्वयं च तं मानयेयुस्सुतरां कुलीनाः ॥१५९॥

जो आता है रोज़ घर, तो असभ्य वर-भीत।
दूषित करता है उसे, मैत्री से भी भीत॥
याचक-गुण को जानकर, कभी नहीं हैं भीत।
कुलीन याचक की मदद, करता सदा विनीत ॥१५९॥

160. உடையார் இவர்என் றொருதலையாப் பற்றிக்
கடையாயர் பின்சென்று வாழ்வர்—உடைய
பிலம்தலைப் பட்டது போலாதே, நல்ல
குலம்தலைப் பட்ட இடத்து.

The treasure cave.

The lowest sort of men say, 'these are men of property,'_cling to them steadily, follow them, and so flourish. Is it not as when a mine of treasure has been found, when men of good lineage have become our friends. 160.

कुलीनसंगः सकलार्थदातृ-निध्याप्तितुल्यस्तदितं विहाय।
सम्पत्तिहेतोः सुदृढं तु केचित् नीचानुपाश्रित्य नयन्ति कालम् ॥१६०॥

कुलीन-संग सुरंग सम क्षीयमाण नहि रोज।
सर्वलाभकर जगत में, उत्तम यह है खोज॥
तजकर ऐसे संग को, वित्त हेतु कुछ लोग।
नीचाश्रित हो समय का, करते दुरुपयोग ॥१६०॥

Ch. 17. Avoidance of Offence to the Great
१७. निन्दा का परित्याग

161. பொறுப்பரென் றெண்ணிப் புரைதீர்ந்தார் மாட்டும்
வெறுப்பன செய்யாமை வேண்டும்—வெறுத்தபின்
ஆர்க்கும் அருவி அணிமலை நல்நாட!
பேர்க்குதல் யார்க்கும் அரிது.

It is difficult to regain the forfeited favour of good men.

Lord of the pleasant land whose hills resounding water-falls adorn!—You may not even to faultless men do things that enkindle wrath; for when their wrath is once kindled,it is hard for any one to change their mood. 161

महात्मनां दोषसहिष्णुता तु बुध्वाऽपि तेषामहितं न कार्यम्।
कृते तु तज्जन्यमनर्थजातं शक्तो भवेद्वारयितुं न कोऽपि ॥१६१॥

दोष सह्यता सुजन को, अवगत कर उपकार।
कभी न करना चाहिये, उनका पर उपकार॥
सज्जन के प्रति अहित यदि, कर्म किया ही जाय।
तो उसकी फलहीनता, किससे रोकी जाय ॥१६१॥

162. பொன்னே கொடுத்தும் புணர்தற் கரியாரைக்
கொன்னே தகைக்கூடப் பெற்றிருந்தும்—அன்னே
பயனில் பொழுதாக் கழிப்பரே நல்ல
நயமில் அறிவி னவர்.

Waste of golden opportunities.

Although those whose(pretended)wisdom is with-out moral excellence have gained access to men to whom approach is difficult even by gifts of gold alas! they pass away (the precious moments) as mere waste time. 162

सुवर्णदानेऽप्यनवाप्य मैत्र्यं विना श्रमं तत्स्वयमागतं चेत्।
तथाविधां लाभकरीं च मैत्रीं ज्ञानेन शून्यास्तु कदर्थयन्ति ॥१६२॥

हेमदान से लभ्य नहि, कुछ का मैत्री-भाव।
श्रम बिनु यदि मिल जाय वह, ऐसा मैत्री-भाव॥
लाभकरी संसार में, और न कोई चीज़।
केवल विमूढ छोड़ते, ऐसी मैत्री-चीज़ ॥१६२॥

163. அவமதிப்பும் ஆன்ற மதிப்பும் இரண்டும்
மிகைமக்க ளான்மதிக்கற் பால—நயமுணராக்
கையறியா மாக்கள் இழிப்பும் எடுத்தேத்தும்
வையார் வடித்த நூலார்.

Praise and dispraise of noble persons only of importance. Both disesteem and thorough esteem are in the class of things that depend on the estimation of the great. Those who have a discriminating knowledge of true science, lay no stress on either the abuse or the fulsome praise of men who comprehend not moral principles, and know not the rules of propriety. 163.

सद्गौरवं तद्वदगौरवं च मान्ये महद्भिः सततं, तथाऽपि।
निन्दां स्तुतिं वा रचितां जडेन विज्ञातशास्त्रा न तु मानयन्ति ॥१६३॥

सज्जन समान मानते, मान तथा अपमान।
रखते हैं सम दृष्टि वे, कभी कभी असमान॥
असभ्य निन्दा यदि करें, या कर लें तारीफ़।
दोनों की नहि मानते, पोथी पढ़े शरीफ॥१६३॥

164. வெறிநிலை நாகம் விடருள தேனும்
உருமின் கடுஞ்சினம் சேணின்றும் உட்கும்
அருமை உடைய அரண்சேர்ந்தும் உய்யார்
பெருமை உடையார் செறின்.

None safe from the wrath of the great.
The serpent rich of hue, though it dwell in the mountain-cleft, from far is frighted by the thunderbolt's fierce wrath; so men escape not though hid in strongholds hard to reach, when those great in virtue are wroth. 164.

भूगर्तमध्ये पिहितोऽपि सर्पो दूरागतेनाशनिना बिभेति।
सत्कोपपात्रास्तु सुरक्ष्यगुप्त-स्थलं प्रविश्याऽपि न रक्षिताः स्युः॥१६४॥

क्षेत्र-गर्त के बीच में, यथा पिहित भी सांप।
दूरागत घन-नाद से, डरता उठकर कांप॥
सज्जन-रिस के पात्र जन, घुसकर रक्ष्य स्थान।
पालित होते भी नहीं, सज्जन-कोप महान॥१६४॥

165. எம்மை அறிந்திலிர் எம்போல்வர் இல்லென்று
தம்மைத்தாம் கொள்வது கோளன்று—தம்மை
அரியரா நோக்கி அரன்அறியுஞ் சான்றோர்
பெரியராக் கொள்வது கோள்.

Self-praise is no commendation.

'You know not all our worth, for equals have we none:' when self thus estimates itself, this is not '*esteem*'! When perfect men, proficients it virtue, regard any as dear, and esteem them as great, this is *esteem*'!'

165.

"मां त्वं न जानासि" "न मत्समोऽस्ती"-त्यात्मस्तुतिर्नैव महत्वहेतुः।
सुधार्मिकैः स्वीयगुणानुदीक्ष्य सभाजनं तात्त्विकगौरवं स्यात् ॥१६५॥

"मुझे न तुम हो जानते" "मेरे सदृश न और"।
यों आत्मस्तुति ना कभी, महत्वकर नहि गौर॥
स्वीय शील को देखकर, सज्जन दें सम्मान।
महत्वकर है सच वही, बाकी नहि सम्मान ॥१६५॥

166. கனிகடல் தண்சேர்ப்ப! நாள்நிழல் போல
வினியும் சிறியவர் கேண்மை—வினிவீழ்ந்தி
அல்கு நிழல்போல் அகன்றகன் றோடுமே
தொல்புக ழாளர் தொடர்பு.

Morning and evening shadows.

Lord of the great sea's cool margin!—Friendships formed with mean men dwindling die like shadows of the morn; friendship of men of old renown as shadows of the after-day will lengthen out and grow.

166.

नीचस्य मैत्री क्रमशो विनश्येत् छाया यथा प्रातरुदीक्ष्यमाणा।
छायेव सायं महतां तु मैत्री वर्धेत् शीताब्धिसुतीरपाल! ॥१६६॥

क्रम से मैत्री नीच की, हो जाती है नास।
जैसी छाया सुबह की, क्षीयमाण अविकास॥
शाम-छाँहसम सुजन की, मैत्री विवर्धमान।
शीत सिन्धु तट देश का, नायक अहो महान॥१६६॥

167. மன்னர் திருவும் மகளிர் எழில்நலமும்
துன்னியார் துய்ப்பர் தகல்வேண்டா—துன்னிக்
குழைகொண்டு தாழ்ந்த குளிர்மர மெல்லாம்
உழைதங்கட் சென்றார்க் கொருங்கு.

To those who cultivate them fruits accrue.

Those who press their suit, fitness apart, enjoy the wealth of kings, and the charms of maidens fair; so all the cool (shady) trees that droop earthward with thick foliage, give room to those that thronging seek their shelter. 167.

राज्ञां धनं, स्त्रीगतसुन्दरत्वं निजान्तिकस्थैरनुभूयते हि।
शीतो विनम्रस्तरुरागतानां स्थलं यथा यच्छति निर्विशेषम् ॥१६७॥

नारीगत सौन्दर्य औ, भूपों का धनमाल।
निज समीपगत मनुज के, होते इस्तेमाल॥
शीत-नम्र-तरुगत यथा, पाता है दृढ़ छाँह।
समीपवर्ती मनुज से, भोग्य निकट की राह॥१६७॥

168. தெரியத் தெரியுந் தெரிவிலார் கண்ணும்
பிரியப் பெரும்படர்நோய் செய்யும்—பெரிய
உலவா இருங்கழிச் சேர்ப்ப !யார் மாட்டுங்
கலவாமை கோடி உறும்.

Friendship brings pangs of severance.

Severance from even those who have no under standing [lit. no understanding that understands (so as) to understand] causes great and spreading sorrow.—Lord of the shore of the great,unfailing, swelling bay!—To be intimate with none is ten million times the best. 168.

विमर्शबुध्या रहितैश्च मैत्री कृताऽथ नष्टा व्यसनं ददाति।
तस्मान्न केनापि विधेहि मैत्री-मेतद्वरं, ह्यम्बुधितीरनेतः! ॥१६८॥

सिन्धु तीर तट देश का, नायक! ओ दृढकाय।
विमर्श-विहीन मनुज की, मैत्री यदि की जाय॥
तो उसका भी विरह नित, देता है संताप।
इसलिये ही ना मित्रता, रहता है निस्ताप ॥१६८॥

169. கல்லாது போகிய நாளும் பெரியவர்கட்
செல்லாது வைகிய வைகலும்—ஒல்வ
கொடாஅது தொழிந்த பகலும் உரைப்பிற்
படாஅவாம் பண்புடையார் கண்.

No day unimproved.

Days gone by without learning, those passed without any intercourse with the great, those spent without giving what is fitting;—in the case of the excellent,if you tell them over, none such occur. 169.

अधीतिवर्जो विफलस्तु कालो महात्मसद्मागमवर्जकालः।
दानं ह्यकृत्वा गमितं दिनं च न सन्ति नूनं गुणवन्नराणाम् ॥१६९॥

सद्गुणशाली सभ्य जन, अच्छे ग्रंथसमूह।
प्रतिदिन पढ़कर जानते, है ही विषय दुरूह॥
और सुजन से सद्विषय, श्रावित है दिन-रात।
औ वे देते दान सब, औरों को दिन-रात ॥१६९॥

170. பெரியார் பெருமை சிறுதகைமை ஒன்றிற்
குரியார் உரிமை அடக்கம்—தெரியுங்கால்
செல்வ முடையாரும் செல்வரே தற்சேர்ந்தார்
அல்லல் களைப வெனின்.

Humility. Self-restraint. Charity.

The greatness of the great is [the quality of littleness (in their own sight), i.e.] humility; the (real) acquisition of those who have acquired (any) one (science) is modest self-restraint. If you rightly understand things, those possessors of wealth only are really wealthy who relieve the wants of those that approach them (as suppliants). 170.

महात्मनां स्याद्विनयो गुणाय विद्यावतां स्याद्विनयो गुणाय।
स्थिते धने स्वाश्रितदुःखनाश-करा मतास्तात्त्विकवित्तवन्तः ।१७०॥

सच्चा अमीर है वही, जो आश्रित का शोक।
हर लेता है वित्त के, प्रदान से इह लोक॥
महत्त्व-दायक विनय है, पटु को आठों जाम।
पढ़े-लिखे को विनय है, महत्त्वकर. अविराम ॥१७०॥

Ch. 18. Association with the Good

१८. सत्समागम

171. அறியாப் பருவத் தடங்கரோ டொன்றி
நெறியல்ல செய்தொழுகி யவ்வும்—நெறியறிந்த
நற்சார்வு சாரக் கெடுமே வெயில்முறுகப்
புற்பனிப் பற்றுவிட் டாங்கு.

Good companionship cures the follies of youth.

In youth unwise,though men consort with haughty ones and walk in lawless ways;yet, when they join with those that know the righteous path, their faults shall melt away as dew from off the grass when sunbeams scorch. 171.

बाल्ये खलानां सहवासहेतो-रकृत्यकार्याचरणोत्थदोषः।
धर्मज्ञसंगाद्विलयं प्रयाति यथार्कसंगेन हिमं तृणस्थम् ॥१७१॥

खल जन के सहवास से, शैशव में अनजान।
अकृत्य कार्याचरण से, उत्थित दोष महान॥
धार्मिक नर के संग से, होता अन्तरधान।
ज्यों तृणस्थ हिम धूप से, होता अन्तरधान॥१७१॥

172. அறிமின் அறநெறி அஞ்சுமின் கூற்றம்
பொறுமின் பிறர்கடுஞ்சொல் போற்றுமின் வஞ்சம்
வெறுமின் வினைதீயார் கேண்மையெஞ் ஞான்றும்
பெறுமின் பெரியார்வாய்ச் சொல்.

Six precepts.

Know virtue's path! Dread death! Bear others' words severe! Beware ye practise no deceit! Friendship detest with men of evil deeds! Daily get gain of words that fall from great men's lips! 172.

अवेहि धर्मं भव कालभीतः परेरितं मा श्रृणु घोरवाक्यम्।
त्वं वञ्चनां मुञ्च, कुमार्गगन्त्रा मा याहि, वाक्यं महतां श्रृणु त्वम्॥१७२॥

धर्म जानना चाहिये, काल-भीत रह जाय।
पर से निगदित वाक्य कटु, नहीं सुनाया जाय॥
कपट छोड़ना चाहिए, खल से तज सहवास।
सज्जन के उपदेश सुन, पाता क्रमिक विकास ॥१७२॥

173. அடைந்தார்ப் பிரிவும் அரும்பிணியும் கேடும்
உடங்குடம்பு கொண்டார்க் குறலால்—தொடங்கிப்
பிறப்பின்னா தென்றுணரும் பேரறிவி னாரை
உறப்புணர்க அம்மாஎன் னெஞ்சு.

Life has many evils.
Attach your self to the wise.

Severance of close-joined friends and sore, disease and death, all these combined hap to those that have assumed a human body: so the truly wise have felt that birth, form the very first, is bitterness. Ah! soul, cleave close to these! 173.

अवार्यरोग-स्वक-विप्रयोग-खेदा मिलित्वा प्रभवन्ति मर्त्ये।
मोदप्रदं जन्म न चेति बोद्धुः सतोऽन्तिकं गच्छतु मानसं मे ॥१७३॥

वन्धु-विरह दुख रोग सव, नर में होते रोज़।
सुजन जन्म-साफल्य की, करते ही हैं खोज॥
भवदुख हरने के लिए, मेरा सदैव चित्त।
सज्जन-संगति चाहता, बिलकुल एक निमित्त ॥१७३॥

174. இறப்ப நினையுங்கால் இன்னா தெனினும்
பிறப்பினை யாரும் முனியார்—பிறப்பினுட்
பண்பாற்று நெஞ்சத் தவர்களோ டெஞ்ஞான்றும்
நண்பாற்றி நட்கப் பெறின்.

Friendship makes life endurable.

Though when you ponder it, it is surpassing bitterness, none hate (this mortal) birth, if in (this mortal) birth they ever perform friendly acts to men whose hearts are set on noble excellence, and gain their friendship. 174.

सत्कर्म कर्तुं कृतनिश्चयानां सतां तु सङ्गो यदि जीविते स्यात्।
विचार्यमाणे व्यसनप्रदं च जन्माऽत्र मर्त्यो न हि वारयेत् तत् ॥१७४॥

जन्म दुखद है हृदय में, सम्यक् सोचा जाय।
फिर भी सज्जन-संग यदि, जीवन में मिल जाय॥
तो कोई संसार में, घृणित न कहकर जन्म।
मानेगा नहि भी कभी, शोककरी नर-जन्म ॥१७४॥

175. ஊரங் கணநீர் உரவுநீர் சேர்ந்தக்கால்
பேரும் பிறிதாகித் தீர்த்தமாம்—ஒருங்
குலமாட்சி யில்லாரும் குன்றுபோல் நிற்பர்
நலமாட்சி நல்லாரைச் சார்ந்து.

The water from the sewer becomes a sacred stream.

When water from the town-sewers has joined the great river its very name is changed, and it becomes a 'sacred stream,' Ponder well! Even those who have no greatness of clan, if they ally themselves with good men of goodly fame, shall stand firm as a hill. 175.

वीथीस्थनीरं च नदीं प्रविश्य स्यात्पुण्यतीर्थं किल नूत्ननाम्ना।
असत्कुलीनाञ्च कुलीनसङ्घैः समेत्य माहात्म्यसमन्विताः स्युः ॥१७५॥

औ-नाला जल सिन्धु में, खुद करके परवेश।
नये नाम से ख्यात हो, अति पावन तीर्थेश॥
अधम वंश के लोग भी, पाकर कुलीन-संग।
महत्व विगरि सम जगत में, पाते हैं निश्शंक ॥१७५॥

176. ஒண்கதிர் வாள்மதியம் சேர்தலால் ஓங்கிய
அங்கண் விசும்பின் முயலும் தொழப்படும்
குன்றிய சீர்மைய ராயினும் சீர்பெறுவர்
குன்றன்னார் கேண்மை கொளின்.

The hare in the moon is worshipped.

Because it is in the bright-beamed moon the very hare in heaven's lofty fair expanse is worshipped. Though scant their worthiness, men obtain worth who share friendship with those firm as a hill. 176.

वियद्गतप्रज्वलदोषधीश-संगाद्भवेद्वन्द्यतमः शशोऽपि।
प्रभावहीनाञ्च महीधरोर्ध्व-महात्मसंगात् प्रथिता भवन्ति ॥१७६॥

शश भी नभस्थ सोम का, पाकर घनिष्ठ संग।
शशांक सम महनीय हो, नहि विख्यात कलंक॥
यद्यपि प्रभावहीन हैं, फिर भी शैलसमान।
सज्जन के संयोग से, होते पूज्य महान॥१७६॥

177. பாலோ டளாயநீர் பாலாகும் அல்லது
நீராய் நிறந்தெரிந்து தோன்றாதாம்—தேரின்
சிறியார் சிறுமையும் தோன்றாதாம் நல்ல
பெரியார் பெருமையைச் சார்ந்து.

Water with milk seem milk.

Commingled with milk water becomes milk; at least, it shows no more as water by its hue. Look close,the mean men's meanness shows not if they join themselves to greatness of the good and great. 177.

दुग्धेन मिश्रं सलिलं च दुग्ध-स्वरूपतामेति पृथङ् न दृश्येत्।
महात्मना शीलवता तु संगात् न दृश्यते हेयगुणोऽधमस्य ॥१७७॥

पानी मिश्रित दूध से, वनता क्षीर-सरूप।
मिश्रित होकर तोय क्या, ठहरा नीर-सरूप॥
सुशील सज्जन-संग से, जग में भी दुश्शील।
सुशील वन जाते तथा, तजकर गर्हित शील॥१७७॥

178. கொல்லை யிரும்புனத்துக் குற்றி யடைந்தபுல்
ஒல்காவே யாகும் உழவர் உழுபடைக்கு
மெல்லியரே யாயினும் நற்சார்வு சார்ந்தார்மேல்
செல்லாவாம் செற்றார் சினம்.

The society of the good a protection.

Grass close around the stump in the field adjoining the house will not be destroyed by the ploughshare of the farmer; [thus] though men are weak, if they get under safe protection, the wrath of their foes will not reach them. 178.

केदारभूमिगतकाष्ठरूढ-तृणं तु भेत्तुं न हलेन शक्यम्।
बलेन हीनं महदाश्रितं च हन्तुं न शक्तस्तु तथाऽरिकोपः ॥१७८॥

यद्यपि हल से क्षेत्रगत, तृण है सम्यक् भेद्य।
फिर भी काष्ठारूढ तृण, उससे नहिं है भेद्य॥
बल-विहीन नर सुजन का, आश्रित यदि हो जाय।
अरि-रिस उस को मारने, तो पटु नहिं हो जाय॥१७८॥

179. நிலநலத்தால் நந்திய நெல்லேபோல் தத்தம்
குலநலத்தால் ஆகுவர் சான்றோர்—கலநலத்தைத்
தீவளி சென்று சிதைத்தாங்குச் சான்றாண்மை
தீயினம் சேரக் கெடும்.

Good tribal associations maintain excellence, and evil ones wreck it.

As *Nel* that flourishes through the goodness of the soil, good men become illustrious by the excellence of their respective clanships. Goodness perishes when it comes near evil associates,as the tornado advances and destroys the excellence of the ship. 179.

प्रशस्तभूमिंगतधान्यतुल्यं सत्सङ्गयुक्तः किल वृद्धिमेति।
प्रचण्डवाताहतनौकयेव दुस्सङ्गयुक्तो मनुजो विनश्येत् ॥१७९॥

उपजाऊ शुभ क्षेत्र में, उपजें धान समान।
सज्जन के सहवास से, समृद्ध हो इनसान॥
प्रचण्ड झंझावात से, विनष्ट नाव समान।
दुर्जन के सहवास से, विनष्ट हो इनसान ॥१७९॥

180. மனத்தான் மறுவில ரேனுந்தாஞ் சேர்ந்த
இனத்தால் இகழப் படுவர்—புனத்து
வெறிகமழ் சந்தனமும் வேங்கையும் வேமே
எறிபுனந் தீப்பட்டக் கால்.

Evil association brings ruin.

Though themselves pure in mind, even good men incur contempt because of their associations. So in the woodland glade when a conflagration takes palce(not the worthless brushwood only, but) the fragrant *sandal* and *Vengai* too are consumed 180.

विशुद्धचित्ता अपि दुष्टसङ्ग-योगाज्जनैर्निन्द्यतमा भवन्ति।
वह्निर्यथा छिन्नतरुं प्रविष्टो वन्यान् दहेच्चन्दनपादपांश्च ॥१८०॥

दुर्जन के संपर्क से, शुद्ध-चित्त भी लोग।
पाते हैं संसार में, अपयश-निन्दा-योग॥
छिन्न वृक्ष शत आग तो, चन्दनादि तरु-जाल।
वन्य जला देती सभी, व्यापित हो तत्काल ॥१८०॥

Ch. 19. (Moral) Greatness

१९. महत्त्व

181. ஈத லிசையா இளமைசேண் நீங்குதலால்
காத லவருங் கருத்தல்லர்—காதலித்
தாதும்நாம் என்னும் அவாவினைக் கைவிட்டுப்
போவதே போலும் பொருள்.

Renunciation of desire is 'greatness.'

To give is no longer ours; and youth is gone far off; our once beloved ones think of us no more. To depart,having abandoned 'desire' that bids us love and hope for future joys, appears the thing that's meet. 181.

करे न वित्तं न च यौवनं मे प्रीता: स्त्रियो मां न हि लक्षयन्ति।
प्रेम्णाऽङ्गनाभि: सह जीवनेच्छां त्यक्त्वा वरा सन्न्यसने प्रवृत्ति: ॥१८१॥

देने धन नहिं हाथ में, यौवन बीता जाय।
प्यारी स्त्री से प्रेम अब, नहीं दिखाया जाय॥
प्यार-सहित स्त्री-जाति से, जीने की उम्मीद।
तजकर नर संन्यास पर, रख लें दृढ उम्मीद॥१८१॥

182. இற்சார்வின் ஏமாந்தேம் ஈங்கமைந்தேம் என்றெண்ணிப்
பொச்சாந் தொழுகுவர் பேதையார்—அச்சார்வு
நின்றன போன்று நிலையா எனவுணர்ந்தார்
என்றும் பரிவ திலர்.

Fools make their home in a changing world.

Fools thinking 'we have found joy in the *refuge* of home,' and 'we are here in perfect repose, forgetful (of the instability of all things), go on their way. Those who have felt that 'refuge' is unstable, while it seems to stand fast,never fix their fond desire (on it). 182.

"पूर्णा: स्म तृप्ता: किल जीविते" ति न वेत्ति मूढो निजभाविदुःखम्।
तज्जीवितं नित्यवदत्र भाती-त्यालक्ष्य विद्वान्न भवेद्विषण्ण: ॥१८२॥

गृहस्थ-जीवन सुखद औ, पूर्ण तृप्त हैं मूढ।
यों अवगत कर अपरिचित, भावि-शोक से गूढ॥
गृहस्थ-जीवन नित्य सम, प्रतीत होता जाय।
फिर भी वह शाश्वत नहीं, यह है बुध की राय ॥१८२॥

183. மறுமைக்கு வித்து மயலின்றிச் செய்து
சிறுமைப் படாதேநீர் வாழ்மின்— அறிஞராய்
நின்றுழி நின்றே நிறம்வேறுங் காரணம்
இன்றிப் பலவும் உள.

Seek the unchanging. All things here change.

See that ye sow seed that in other world may germinate; free your lives from earth's bewilderment and meanness; stand in your lot as wise men; the changing hue of things shall without cause fade and many things be new. 183.

ते यौवनं नश्यति पश्यतस्ते हेतुं विना स्युर्विविधाश्च रोगाः।
तद्भाविलोकप्रदधर्ममत्र कृत्वा विशङ्कं वस शेमुपीक! ॥१८३॥

तेरा यौवन सामने, पाता है अवसान।
हेतु विना ही रोग वहु, होते हैं अनजान॥
आमुष्मिक फल सोचकर, पुण्य करें इह लोक।
बिनु शक मानव जिन्दगी, बिता रहे निश्शोक ॥१८३॥

184. உறைப்பருங் காலத்தும் ஊற்றுநீர்க் கேணி
இறைத்துணினும் ஊராற்றும் என்பர் கொடைக்கடனுஞ்
சாஅயக் கண்ணும் பெரியார்போன் மற்றையார்
ஆஅயக் கண்ணும் அரிது.

Good men are unfailing fountains of beneficence.

The well of springing water serves the town that draws and drinks, even in time when rains are scant; so great men in adverse hour dispense due gifts that others give not even in their best estate.184.

वर्षाविहीनेऽपि यथा तटाकः स्रवज्जलं यच्छति याचकेभ्यः।
रिक्ताश्च सन्तः किल दानशीलाः यच्छन्ति, तद्वन्न ददाति चाढ्यः ॥१८४॥

तटाक वृष्टिविहीन भी, यथा स्रोत का नीर।
दे जाता है दान में, याचक को गत तीर॥
दानशील-जन भी तथा, अगर रिक्त हो जाय।
फिर भी भरसक दान की, कृति नहि छोड़ी जाय॥१८४॥

185. உறுபுனல் தந்துல கூட்டி அறுமிடத்தும்
கல்லூற் றுழியூறும் ஆறேபோற்—செல்வம்
பலர்க்காற்றிக் கெட்டுலந்தக் கண்ணுஞ் சிலர்க்காற்றிச்
செய்வர் செயற்பா லவை.

Great men do not neglect duties because of poverty.

The river pours forth a mighty stream and feeds the world; and when it is dried up, if men dig in its bed, streams gush out! So good men when rich, give to many; and, when ruined, give still at least to some, and do what should be done. 185.

यच्छेत्पय: पूर्णनदी यथेष्टं शुष्कापि सा यच्छति नीरमल्पम्।
येऽत्यन्तदानादभवन् दरिद्रा दद्युस्तु केषांचिदपीह तेऽर्थम् ॥१८५॥

पूर्ण नदी निस्सीम है, देती यथेष्ट नीर।
सूखी भी वह सर्वदा, कम देती है नीर॥
जो सज्जन अति दान से, होते हैं धनहीन।
तब भी वे जन दान कम, देते कभी न हीन ॥१८५॥

186. பெருவரை நாட பெரியார்கண் தீமை
கருநரைமேற் குடேபோல் தோன்றும்-கருநரையைக்
கொன்றன்ன இன்னசெயினும் சிறியார்மேல்
ஒன்றனும் தோன்று கெடும்.

Faults are conspicuous in great persons.

Lord of the lofty hills! Any evil in men of moral greatness shows like a brand on a mighty bull; but although mean men do painful deeds, like the slaughter of what same mighty bull, none of these attracts attention. 186.

स्फुटं प्रदृश्येत महत्सु दोषो यद्दग्धचिह्नं वृषभेऽतिशुक्ले।
हत्यादिदोष: सुमहाश्च नीचै: कृतोऽप्यदृश्यो लयमेति राजन्! ॥१८६॥

अति सफेदयुत वृषभ पर, ज्यों कृत दग्ध-निशान।
सज्जन-कृत लघु दोष त्यों, दिखता साफ महान॥
खल-कृत वधादि दोष भी, यद्यपि ही सुमहान।
फिर भी वह है प्रकट नहि, पाण्डिय भूप! महान ॥१८६॥

187. இசைந்த சிறுமை இயல்பிலா தார்கட்
பசைந்த துணையும் பரிவாம்—அசைந்த
நகையேயும் வேண்டாத நல்லறிவி னார்கட்
பகையேயும் பாடு பெறும்.

Enmity of the wise better than friendship of the mean.

In proportion to the degree of one's intimacy with men essentially mean and without good qualities sorrow accrues; but even the hostility of those who do not desire forbidden things even in jest will confer dignity. 187.

दोषान्वितैर्हीनगुणैः समं तु कृताऽपि मैत्री व्यसनप्रदा स्यात्।
अस्पृष्टदोषैः सह हास्यहेतोः कृतो विरोधोऽपि महत्वहेतुः ॥१८७॥

दोषयुक्त गुणहीन की, मैत्री यदि की जाय।
तो वह दोस्ती खेद कर, सदैव समझी जाय॥
अकृतदोष नित मनुज का, विरोध यदि हो जाय।
तो भी महत्व भाव से, वह पूरित हो जाय॥१८७॥

188. மெல்லிய நல்லாருள் மென்மை அதுவிறந்து
ஒன்னாருட் கூற்றுட்கும் உட்குடைமை எல்லாஞ்
சலவருட் சாலச் சலமே நலவருள்
நன்மை வரம்பாய் விடல்.

Be all things to all men.

With gentle fair ones use gentleness surpassing their; with foes display a wrath that death's self might dread; with persistent men show a persistency to match; amongst men of good do good; let the law of life be thus laid down. 188.

क्षान्त्या प्रवृत्तिः सह शान्तसद्भिः शत्रौ तु कोपाद्यमवत् प्रवृत्तिः।
मिथ्यापरैः साकमसत्यवार्ता गुणा गुणज्ञैरिति धर्म एषः ॥१८८॥

क्षमाशील के साथ ही, क्षमा मूल लो काम।
यम-सम रिस से शत्रु से, लेना है निज काम॥
मिथ्याभाषी से सदा, कर असत्य व्यवहार।
गुणविद जन के साथ ही, कर अच्छा व्यवहार॥१८८॥

189. கடுக்கி ஒருவன் கடுங்குறளை பேசி
மயக்கி விடினும் மனப்பிரிப்பொன் றின்றித்
துளக்க மிலாதவர் தூய மனத்தார்
விளக்கினுள் ஒண்சுடர் போன்று.

The great man is unmoved amid insults.

These are the pure in heart who though any vex, and with use of slanderous words would fain perplex them, with calm unruffled mind abide unwavering, like the bright flame within the lamp. 189.

श्रुत्वाऽपि पैशुन्यवचः परेषां क्रोधात्मकानां भुवि शुद्धचित्ताः।
विना कलङ्कं परिपूतभावा-स्तिष्ठन्ति दीपप्रतिभासमानाः ॥१८९॥

शुद्ध-चित्त जन जगत में, सुनते वह वच जाल।
पिशुन भाव से युक्त जो, औ रिस युत विकराल॥
सुनकर कोपविहीन वे, चिराग-दीप्तिमान।
बिनु कलंक परिपूत हो, सम्यक् विभा समान ॥१८९॥

190. முற்றுற்றுந் துற்றினே நாளும் அறஞ்செய்து
பிற்றுற்றுத் துற்றுவர் சான்றவர்—அத்துற்று
முக்குற்றம் நீக்கி முடியும் அளவெல்லாம்
துக்கத்துள் நீக்கி விடும்.

Feeding the hungry.

The excellent will daily give to the needy in charity their first-served food; they themselves will eat what is served after: such good conduct removes the three faults, and from sorrow sets men free, through all the days, till comes the end. 190.

भोक्तव्यमन्नं प्रथमं परेषां दत्त्वा दिनं सत्पुरुषास्त्वदन्ति।
अपोह्य तेषां भुवि वै त्रिदोषान् तान् मुक्तदुःखान् कुरुते तदन्नम् ॥१९०॥

सब से पहले और को, देकर सुखाद्य अन्न।
प्रतिदिन खाता सन्तजन, अतिथि-शेष का अन्न॥
मोहादि दोष तीन का, अपहर्ता वह अन्न।
और सुजन को खेद से, विमुक्तिकर वह अन्न ॥१९०॥

Ch.20. Persevering Energy

२०. प्रयत्नशीलता

191. கோளாற்றக் கொள்ளாக் குளத்தில்கீற்ப் பைங்கூம்போல்
கேள்ஈவ துண்டு கிளைகளோ துஞ்சுப
வாளாடு கூத்தியர் கண்போல் கடுமாறும்
தாளாளர்க் குண்டோ கவறு.

Active independence.

As for kindred that feed upon what relatives give them they will die off like green grain below a tank, which does not hold a sufficient supply (of water).
Is failure possible to men of energy that are quick in movement as the eyes of those who perform the sword-dance? 191.

अपूर्णकूपान्तिकसस्यतुल्यः पराश्रितो नैति परां समृद्धिम्।
कृपाणभृन्नारिसुनेत्रवद्ये प्रयत्नशीलाः कृतिनो भवन्ति ॥१९१॥

अपूर्ण कूपान्तिक फसल, जैसी नहीं समृद्ध।
वैसा अन्याश्रित मनुज, कभी नहीं सुसमृद्ध॥
खड्गधरी स्त्री-नयन सम, है जो प्रयत्नशील।
वे बनते हैं जगत में, अविनाशी सुखशील ॥१९१॥

192. ஆடுகோ டாகி அதரிடை நின்றதூஉம்
காழ்கொண்ட கண்ணே களிறணைக்குங் கந்தாகும்;
வாழ்கலும் அன்னதகைத்தே ஒருவன்ருன்
தாழ்வின்றித் தன்னைச் செயின்.

By energy a man makes himself.

What once stood by the wayside, a twig that bent to every touch, when its core is developed within, may become a stake to which they tie an elephant. Life too is thus, if man himself, unfailing make himself! 192.

बालोऽपि वृक्षो यदि वज्रसारः स्यात् स्थाणुरेषो गजबन्धनाय।
स्थाने स्थितो यः कुरुते प्रयत्नं तज्जीवितं गौरवदायकं स्यात् ॥१९२॥

वज्रसारयुत तरु अगर, अभिवन भी रह जाय।
तो भी गज को बांधने, यही स्तंभ हो जाय॥
जो अपने ही स्थान में, रहकर करें प्रयास।
उसका जीवन सफल हो, तथैव मानविकास ॥१९२॥

193. உறுபுலி ஊனிரை இன்றி ஒருநாள்
சிறுதேரை பற்றியும் தின்னும்—அறிவினுல்
கால்தொழில் என்.று கருதற்க கையினுல்
மேல்தொழிலும் ஆங்கே மிகும்.

Stoop to conquer.

The huge tiger, when lacking flesh for food one day, may even seize a little frog and eat it. Think not 'By (all my) knowledge I only gain menial tasks;' to the skilful, hand nobler employments shall even there abound. 193.

अल्पं च कार्यं कुरु यद्धि लभ्यं लभ्येत पश्चान्महदेव कार्यम्।
प्रशस्तमांसं त्वनवाप्य यद्वत् व्याघ्रस्तदा भेकमपीह भुङ्क्ते ॥१९३॥

अगर लभ्य हो काम लघु, तो कर लो वह काम।
कालान्तर में लभ्य हो, जरूर महान काम॥
प्रशस्त आमिष नहि मिलें, तो बलशाली व्याल।
ओछे मेंढक जन्तु को, खाता है तत्काल ॥१९३॥

194. இசையா தெனினும் இயற்றியோர் ஆற்றல்
அசையாது நிற்பதாம் ஆண்மை—இசையுங்கால்
கண்டல் திரையலைக்கும் கானலம் தண்சேர்ப்ப
பெண்டிரும் வாழாரோ மற்று.

Manliness is perseverance in spite of failure.

Manliness is working one,in no wise faltering, remaining stedfast though the matter succeed not. When all is successful,—Lord of the cool lovely shore,in whose groves the waves agitate the scented thorn,—will not even women live and flourish? 194.

असाध्यकार्यं च विधाय यत्नात् धैर्येण वृत्तिः पुरुषस्य धर्मः।
अयत्नतः सिद्धचति चेत् तु कार्यं नार्योऽपि माहात्म्यमवाप्नुयुर्हि ॥१९४॥

जो कृति असाध्य यत्न से, धृति से भी की जाय।
तो पौरुष के नाम से, वही कहाया जाय॥
अगर बिना ही यत्न के, कार्य-सिद्धि हो जाय।
तो अयत्न स्त्री को सदा, महत्व ही मिल जाय॥१९४॥

195 நல்ல குலமென்றும் தீய குலமென்றும்
சொல்லள வல்லால் பொருளில்லை—தொல்சிறப்பின்
ஒண்பொருள் ஒன்றிரு தவம்கல்வி ஆள்வினை
என்றிவற்றுன் ஆகுங் குலம்.

What is good or bad caste?

When men speak of 'good *caste*' and 'bad *caste*' it is a mere form of speech, and has no real meaning. Not even by possessions, made splendid by ancient Glories, but by self-denial, learning, and energy is *Caste* determined. 195.

श्रेष्ठं कुलं, नीचकुलं त्वितीमे नाम्नैव भिन्ने, न हि भावभेदः।
विद्यातपोयत्नधनान्वितस्तु भवेत् कुलीनस्त्ववरस्तदन्यः ॥१९५॥

ऊंचा कुल औ नीच कुल, नामों से हैं भिन्न।
इनका कोई अर्थ नहि, नापि भाव से भिन्न॥
विद्या-तप धन यत्नयुत, जो है वही कुलीन।
बाकी तो संसार में, माना है अकुलीन॥१९५॥

196. ஆற்றுங் துணையும் அறிவினை உள்ளடக்கி
ஊக்கம் உரையார் உணர்வுடையார்—ஊக்கம்
உறுப்பினுல் ஆராயும் ஒண்மை யுடையார்
குறிப்பின்கீழ்ப் பட்டது உலகு.

Reserve as to your own plans, and skill in detecting those of others.
Till the time for action comes men of understanding keep close within themselves their wisdom and speak not of their designs (=What they are labouring, to effect).
The world is subject to the nod of the brilliant(diplomatists) who search out(and know) men's designs from outward indications (lit.*from*) *their members*, i.e. from eye, gesture tone. expression etc.). 196.

आकार्यसिद्धचात्मकृतप्रयत्नं प्राज्ञा बहिर्नैव वदन्ति नूनम्।
किन्त्वङ्गचिह्नैः परकीयभावं जानन्ति, तेषां वशगा धरित्री ॥१९६॥

कार्य-सिद्धि तक बुध सदा, रहता प्रयत्नशील।
और यत्न के विषय में, नहि है प्रकटनशील॥
लेकिन तन संकेत से, औरों को पहचान।
लेता है वह, जगत भी, उसका वशी महान ॥१९६॥

197. சிதலை தினப்பட்ட ஆல மரத்தை
மதலையாய் மற்றதன் வீழூன்றி யாங்குக்
குதலைமை தந்தைகண் தோன்றில்தான் பெற்ற
புதல்வன் மறைப்பக் கெடும்.

The worthy son Conceals his sire's defects, and sustains his weakness.

If the *banyan's* trunk be eaten by the gnawing ant, its '*branch root*
bears it up, like a buttress; even so, when decay appears in the sire, the
son he has begotten shall hide it, and weakness is no more. 197.

वटद्रुमं श्वेतपिपीलिकाभि-र्भुक्तं द्रुमोद्भूतजटा: समन्तात्।
स्थूणायिता: सन्ति, तथा स्वयत्नात् पात्येव पुत्र: पितरं विसत्त्वम् ॥१९७॥

सित पीपल से भुक्त वट, तरु की स्तंभी भूत।
होते वृक्षज जट सभी, जैसे सुदृढ़ी भूत॥
वैसे विपन्न जनक को, दुनिया में संतान।
निजी यत्न से पालती , नहीं और संतान ॥१९७॥

198. ஈனமாய் இல்லிருந் தின்றி விளியினும்
மானந் தலைவருவ செய்பவோ—யானை
வரிமுகம் புண்படுக்கும் வள்ளுகிர் நோன்றாள்
அரிமா மதுகை யவர்.

Poverty but not dishonour.

The lion's pointed claw and mighty foot will wound the spotted face
of an elephant; those who have power like his,—though bereft of all,
they die in want within their home,—will they do deeds that bring
disgrace? 198.

द्विपास्यविच्छेदनखैश्च पादै: युक्तेन सिंहेन समानसत्वा: ।
दारिद्र्यहेतोरपि नाशमेत्य कुर्वन्ति कार्यं न तु मानहीनम् ॥१९८॥

गजमुख-छेदक पैरनख- धारक शेर समान।
होते हैं संसार में, भीषणकर बलवान॥
जो जन दरिद्र हेतु से, पाते हैं अवसान।
फिर भी वे करते नहीं, गौरव का अवसान ॥१९८॥

199. இருங்கரும்பீன்ற திரள்கால் உளையலரி
தேங்கமழ் நாற்றம் இழந்தா அங்கு—ஓங்கும்
உயர்குடியுட் பிறப்பி னென்னாம் பெயர்பொறிக்கும்
பேராண்மை யில்லாக் கடை.

High birth useless without lofty energies.

Like the flowers on a rounded stalk, with hair like filaments that sweet cane bare, when the sweet fragrance they breathed is lost, what gain accrues from birth in a lofty noble house when energy that makes the name noteworthy, is wanting. 199.

सद्वंश्यता तस्य वृथैव यस्तु स्थितं यश: पालयितुं न शक्त:।
स्वाद्येक्षुदण्डाग्रलसत्प्रसूने मध्वाढ्यसौगन्ध्यविहीनतेव ॥१९९॥

रसद ईख के दण्ड में, शोभित गंधविहीन।
प्रसून जैसा विश्व में, ठहरा लाभविहीन॥
त्यों जो जन अर्जित नहीं, करता ही संमान।
उसका कुलीन भाव भी, नहि है गौरववान॥१९९॥

200. பெருமுத தரையர் பெரிதுவந் தியுங்
கருனைச்சோ றார்வர் கயவர்—கருனையைப்
பேரும் அறியார் நனிவிரும்பு தாளாண்மை
நீரும் அமிழ்தாய் விடும்.

The scant fare of the laborious is the diet of the gods.

The base feed full of rice and savoury food, that men, great lords of the triple lands, with generous gladness give; but water won with willing strenuous toil by those who know not savoury food by name even, will turn to nectar. 200.

शाकादिहीनं जलमिश्रमन्नं यत्नार्जितं चेदमृतोपमं तत्।
शाकादियुक्तं धनिकेन दत्तं ते भुञ्जतेऽन्नं त्वलसास्तु येऽत्र ॥२००॥

शाकादिहीन नीरयुत, जग में यदि जो खान।
अर्जित होता यत्न से, सो तो अमृत समान॥
शाकादियुक्त धनिक से, दीयमान आहार।
लेते हैं नर आलसी, सब से प्रयन्न सार ॥२००॥

Ch.21. The Support of Kindred

२१. बन्धु-परिपालन

*201. வயாவும் வருத்தமும் ஈன்றக்கால் நோவும்
கவாஅன் மகற்கண்டு தாய்மறந் தாஅங்கு
அசாஅத்தான் உற்ற வருத்தம் உசாஅத்தன்
கேளிரைக் காணக் கெடும்.*

Comfort from sympathy of kinsmen.

As a mother when she sees her son upon her lap forgets the languors, the pains, and the throes of birth; so trouble arising form weakness will die when a man sees his sympathizing kinsmen around him. 201.

अङ्कस्थपुत्रेक्षणतोऽङ्गनानां गर्भप्रसूतिव्यसनं विनश्येत्।
शैथिल्यजातव्यसनं तथैव बन्धवीक्षणान्नश्यति मानवानाम् ॥२०१॥

स्त्री की प्रसूति-वेदना, गर्भधारण का क्लेष।
सुतदर्शन से अंकशत, नहि रहते लवलेश॥
शरीरवात शैथिल्य से, उत्थित नर के क्लेश।
अवलोकन से बंधु के, रहते नहि लवलेश ॥२०१॥

*202. அழல்மண்டு போழ்தின் அடைந்தவர்கட் கெல்லாம்
நிழல்மரம்போல் நேரொப்பத் தாங்கிப்—பழுமரம்போல்
பல்லார் பயன்துய்ப்பத் தான்வருந்தி வாழ்வதே
நல்லாண் மகற்குக் கடன்.*

Good friends like trees that afford both shade and fruit.

To yield ready protection alike to all, as a tree affords shade to those that seek its shelter when the heat grows fierce; and to live toiling so that many may enjoy the gain, resembling thus a fruit producing tree, is the duty of the manly man. 202.

निदाघतप्ताश्रयवृक्षतुल्या रक्षन्ति साम्येन परान् स्वकान् ये।
वृक्षः फलानीव स्वयं तु दत्वा क्लेशेन जीवन्ति नरोत्तमास्ते ॥२०२॥

निदाघ पीडित मनुज को, आश्रयदाता आम।
छाया देकर साम्य से, पहुंचाता आराम॥
तरु फल खुद खाता नहीं, वैसे उत्तम लोग।
सब कुछ देकर भोगते, बंधु पालने शोक ॥२०२॥

203. அடுக்கல் மலைநாட தற்சேர்ந் தவரை
எடுக்கலம் என்னார் பெரியோர்—அடுத்தடுத்து
வன்காய் பலபல காய்ப்பினும் இல்லையே
தன்காய் பொறுக்கலாக் கொம்பு.

The magnanimous never refuse to support their kindred. The bough sustains all its fruits.

Lord of the land where mountains piled on mountains rise! the great demur not to support their kith and kin;_there is no bough but will support the fruit it bears, though clustered thick great fruits and many cling thereon. 203.

प्ररूढनानासुमहच्छलाटून् शाखा तु वोढुं न निराकरोति।
सन्तस्तथा स्वाश्रितबन्धुवृन्द-रक्षां निराकुर्युरिमे न राजन्! ॥२०३॥

भारी फलयुत बोझ को, ढोने में तरु-डाल।
कभी नहीं इनकार तो, करती ओ भूपाल॥
स्वाश्रित रिश्तेदार के, पालन का इनकार।
ना करते हैं संतजन, करते नित उपकार ॥२०३॥

204. உலகறியத் தீரக் கலப்பினும் நில்லா
சிலபகலாஞ் சிற்றினத்தார் கேண்மை—நிலைதிரியா
நிற்கும் பெரியோர் நெறியடைய நின்றனைத்தால்
ஒற்க மிலாளர் தொடர்பு.

The friendship of the great alone is lasting.

Though mingled in a complete intimacy so that all the world knows of it, the friendship of the little will last but little time. Connection with the firm unyielding men endures till the great one's path, who never swerve, is reached. 204.

मैत्री प्रजानां पुरतोऽपि नीच-जनैः कृता तिष्ठति न स्थिरा सा।
दिनैकमैत्री गुणिभिः कृता तु सन्मार्गयत्नेन समा स्थिरा स्यात् ॥२०४॥

जन संमुख भी नीच की, मैत्री जो की जाय।
तो वह दोस्ती स्थिर नहीं, नापि सुदृढ़ रह जाय॥
दिनैक मैत्री सुजन की, सत्पथ-यत्न समान।
स्थिर होकर संसार में, नहि है विनाशवान ॥२०४॥

205. இன்னர் இனையர் எமர்பிறர் என்னுஞ்சொல்
என்னும் இலராம் இயல்பினால்—துன்னித்
தொலைமக்கள் துன்பந்தீர்ப் பாரேயார் மாட்டும்
தலைமக்க ளாகற்பா லார்.

Universal benevolence.

'Such are they and so many;' these are ours; those strange:' those worthy to be classed as chief of men say nothing like this; so to speak is not their nature; for they relieve the distress of ALL that troubled come to them! 205.

"एतादृशोऽयं", "सुहृदेष मह्यं' 'नायं सुहृच्चे' ति मतिं विहाय।
ये वान्यदुःखं विनिवारयन्ति श्रेष्ठयं मनुष्येषु भजन्ति तेऽत्र ॥२०५॥

यही अनोखा शत्रु यह, मेरा यह है मित्र।
यों विचार करते नहीं, जो हो नरता-मित्र॥
वे औरों के खेद को, करते हैं अतिदूर।
उनका "नरवर" नाम तो फैला है अतिदूर ॥२०५॥

206. பொற்கலத்துப் பெய்த புலியுகிர் வான்புழுக்கல்
அக்காரம் பாலோ டமரார்கைத் துண்டலின்
உப்பிலிப் புற்கை உயிர்போற் கிளைஞர்மாட்டு
எக்கலத் தானும் இனிது.

Hard fare with kindred, better than a feast without love.

More sweet than rice, though white as tiger's claw with milk and sugar served on plate of gold, by loveless hands, is any tasteless mess, in any dish, when shared with kindred dear as life. 206.

सुवर्णपात्रस्थितशर्कराढ्य-भोज्यात् सितव्याघ्रनखोपमानात्।
अन्येन दत्तात्, लवणेन हीना श्लाघ्या यवागूः प्रियहस्तदत्ता ॥२०६॥

श्वेत बाघ के नखसदृश, हेमपात्र में दत्त।
मधुकर भोजन अन्य से, हम को हो यदि दत्त॥
तो भी यह रुचिकर नहीं, लवणहीन कट-ुदार।
प्रिय कर से यदि दत्त हो, तो वह हो रसदार ॥२०६॥

207. நாள்வாய்ப் பெறினுந்தந் நள்ளாதார் இல்லத்து
வேளாண்மை வெங்கருனை வெம்பாகும்—கேளாய்
அபராணப் போழ்தின் அடகிடுவ சேனும்
தமராயார் மாட்டே இனிது.

Any food with foes bitter, with friends sweet.

Most bitter *(Margosa)* is the bounteous meal of dainty food at early dawn in house of those who love us not. Hear thou! though not till evening given, the mess of herbs when eaten with our own is sweet.

207.

काले सदुष्णं परगेहदत्त-सूपञ्चमन्नं किल निम्बतुल्यम्।
शाक: परं बन्धुगृहेऽपराह्णि: दत्तश्च पीयूषसमो विभाव्य॥२०७॥

सदुष्ण रसयुत समय पर, पर-घर में जो दत्त।
नीम-सदृश तो कटु हमें, लगता है सो दत्त॥
असमय पर निज बन्धु के, घर में जो हो दत्त।
सशाक भाजन अमृतमय, लगता है सो दत्त॥२०७॥

208. முட்டிகை போல முனியாது வைகலும்
கொட்டியுண் பாருங் குறடுபோற் கைவிடுவர்
சுட்டுக்கோல் போல எரியும் புகுவரே
நட்டா ரெனப்படு வார்.

Interested and disinterested friends,

Even those who, like the artificer's small hammer (with slight strokes fashioning the jewel), gently ( ), day by day, moulding their patron to their will, eat his food, will drop him (when poverty assails him), as the pincers do the gold put into the crucible. Those worthy to be called friends are like the artificer's rod which enters the fire with it.

208.

सदा प्रयत्नात् परवस्तुवृद्धा: क्लेशे परान् ग्राहकवत् त्यजन्ति।
वह्निप्रविष्टाणिसमा: स्वकीया: क्लेशेऽपि वह्निं प्रविशन्ति साकम्॥२०८॥

लगातार ही यत्न रे पर-स्वजीवी लोग।
ग्राहकसम हैं छोड़ते, औरों को सह शोक॥
अग्निप्रविष्ट कीलसम, जग में बांधव लोग।
औरों के सह आग में, घुसते हैं सह शोक ॥२०८॥

209. நறுமலர்த் தண்கோதாய்! நட்டார்க்கு நட்டார்
மறுமையுஞ் செய்வதொன் றுண்டோ — இறுமளவும்
இன்புறுவ இன்புற் றெழீஇ அவரோடு
துன்புறுவ துன்புறுக் கால்.

Sympathy in sorrow and in joy.

O maid adorned with fresh garlands of fragrant flowers! is there one thing that even in other world, friends may perform for friends, if till they die, their joys they share, but shun to share their griefs? 209.

प्राप्तं सुखं बन्धुजनैर्मिलित्वा यथाऽनुभूयेत भुवीह मर्त्यैः।
तथैव दुःखानुभवे न चेत्स्यात् बन्धुत्वशब्दो विफलः प्रगाढच। ॥२०९॥

बंधुजनों के साथ ही, लब्ध हर्ष का भोग।
जैसा इस संसार में, करते हैं हम लोग॥
बंधुजनों के साथ भी, लब्ध शोक का भोग।
वैसा करते बन्धुता, रहती तो इह लोक ॥२०९॥

210. விருப்பிலா ரில்லத்து வேறிருந் துண்ணும்
வெருக்குக்கண் வெங்கருனை வேம்பாம் — விருப்புடைத்
தன்போல்வா ரில்லுள் தயங்குநீர்த் தண்புற்கை
என்போ டியைந்த அமிழ்து.

Better fast with friends than feast with foes.

The savoury fried *curry*, (in colour) like a cat's eye, which one eats seated apart in the house of those who are without affection, will be bitter as margosa; but cold gruel (weak and insipid), like clear water, in the house of affectionate equals, is ambrosia that cleaves to the bones. 210.

ओत्वक्षितुल्योष्णससूपमन्नं न अप्रीतगेहाप्तमवेहि निम्बम्।
स्वबन्धुगेहार्पितनीररूपा सोष्णा यवागूरमृतेन तुल्या ॥२१०॥

बिल्ली दृग सम उष्णयुत, सूपयुक्त जलपान।
अप्रिय-घर से यदि मिले, तो वह नीम समान॥
बंधु रोह से लब्ध यदि, सदुष्ण नीर समान।
नवयुत भोजन जगत में, समझो अमृत समान ॥२१०॥

Ch.22. Scrutiny in Forming Friendships

२२. स्नेह-परामर्श

211. கருத்துணர்ந்து கற்றறிந்தார் கேண்மையெஞ் ஞான்றும்
குருத்திற் கரும்புதின் றற்றே—குருத்திற்கு
எதிர்செலத்தின் றன்ன தகைத்தரோ என்றும்
மதுரமிலாளர் தொடர்பு.

Satisfying friendships.

Intimacy with those who understand the real intention(of one's words), and who have acquired wisdom by learning, will at all times be like eating sweet cane from the tender shoots; but attachment to those who have no sweetness of disposition is like eating it in a direction opposite to the tender shoot(it grows harder and less sweet). 211.

इक्ष्वग्रतो भक्षणवद् बुधैस्तु मैत्री कृता स्यात् रसवृद्धिकर्त्री।
मूलक्रमाद्भक्षणवद्धि चेक्षोः अज्ञस्य मैत्री रसविघ्नकर्त्री ॥२११॥

अग्र-अशन सम ईख का, बुध कृत मैत्री भाव।
रुचि-वर्द्धक औ रसकरी, होता विवृद्धि भाव॥
मूल अशन सम ईख का, अरसिक मैत्री भाव।
धीरे धीरे वीतरुचि, न्यून विरस का भाव ॥२११॥

212. இற்பிறப் பெண்ணி இடைதிரியார் என்பதோர்
நற்புடை கொண்டமை யல்லது—பொற்கேழ்
புனலொழுகப் புள்ளிரியும் பூங்குன்ற நாட!
மனமறியப் பட்டதொன் றன்று.

Examine the lineage of a candidate for your friendship.

Lord of the land of flowery hills,where wild-fowl golden in hue fly, scared by the rush of the waterfall.

'Regarding the nobility of their birth—these will not swerve:—To say thus is a good ground of confidence—(a good position to take up); but to say 'their minds are known,' is not any (i.e.real ground). 212.

लोके कुलीनाः स्वकुलानुरूपं गुणात् स्वकीयादपि न च्यवन्ते।
तदेतदेषां गुणबोधमात्रमेतेन नान्यस्य मनो गृहीतम् ॥२१२॥

जग में कुलानुरूप भी, गुण से स्वीय कुलीन।
विचलित होते हैं नहीं, यह उनका शालीन॥
इसका मतलब यह नहीं, गृहीत पर का चित्त।
प्रवाह चिड़ियों से भरे थल नायक वर-चित ॥२१२॥

213. யானை அனையவர் நண்பொரீஇ நாயனையார்
கேண்மை கெழீஇக் கொளல்வேண்டும்—யானை
அறிந்தறிந்தும் பாகனையே கொல்லும் எறிந்தவேல்
மெய்யதா வால்குழைக்கும் நாய்.

The elephant and the dog, types of false and true friends.
Forsaking friendship with those who resemble the elephant, embrace and hold fast intimacy with those who are like the dog; for the elephant will slay even its keeper though it has long known him; but the dog will wag its tail when it has in its body the javelin (*hurled at it by its angry master).* 213.

मैत्रीं त्यज त्वं गजतुल्यमर्त्यैः श्वातुल्यमर्त्येन विधेहि मैत्रीम्।
स्वपोषकाञ्चापि गजो विहन्यात् श्वा प्रीतिमान् स्यान्निजघातकेऽपि ॥२१३॥

गज सम नर की मित्रता, सदैव है तजनीय।
श्वा सम गुणयुत मनुज की, मैत्री है करणीय॥
निज पोषक का निधन कर, सकता है भी नाग।
निज घातक पर भी सदा, श्वान दिखाता राग ॥२१३॥

214. பலநாளும் பக்கத்தர் ராயினும் நெஞ்சிற்
சிலநாளும் ஒட்டாரோ டொட்டார்—பலநாளும்
நீத்தா ரெனக்கை விடலுண்டோ தங்நெஞ்சத்து
யாத்தாரோ டியாத்த தொடர்பு.

Friends are not to be forsaken because long severed.
Though men dwell side by side for many days when their souls cleave not(are not congenial) for even a few days they retain not their friendship. But is it possible to let go attachment's well-knit ties, though those to whom one's soul is knit dwell many days after? 214.

कायेन सामीप्यमवाप्य चित्ते ये भिन्नभावा न हि ते मिलन्ति।
कायेन सामीप्यमनाप्य चित्त-सामीप्यभाजस्तु मिथो मिलन्ति ॥२१४॥

तन से पाकर निकटता, पर मन से असमान।
यों जो विभिन्न भाव हैं, वे मिलते नहिं आन॥
तन से प्राप्त न निकटता, पर दिल से समभाव।
यों जो विचारशील हैं, इनमें मिलजुल भाव ॥२१४॥

215. கோட்டுப்பூப் போல மலர்ந்துபின் கூம்பாது
வேட்டதே வேட்டதாம் நட்பாட்சி—தோட்ட
கயப்பூப்போல் முன்மலர்ந்து பின்கூம்பு வாரை
நயப்பாரும் நட்பாரும் இல்.

Tree-flowers and water-flowers.

The use and wont of friendship is that, what once it has loved it loves always,—like the flower on the tree-branch which having once unfolded afterwards closes not; but who will esteem, or make friends of those who are like flowers on the surface of the excavated *tank*, which unfold and afterwards close themselves.? 215

शाखावहत्पुष्पसमं प्रसन्न-मुखैः कृता धार्मिकमित्रता स्यात्।
जलप्रसूनेन समं कदाचित् म्लानास्यवन्तं वृणुयान्न कोऽपि ॥२१५॥

शाखा में धृत फूल सम, हसमुख से कृत नेह।
माना जाता जगत में, सदैव धार्मिक नेह॥
जल में पुष्पित फूल सम, म्लानमुखी का नेह।
कोई नहि है चाहता, अपने अपने गेह ॥२१५॥

216. கடையாயார் நட்பிற் கமுகனையர் ஏனை
இடையாயார் தெங்கின் அனையர்—தலையாயார்
எண்ணரும் பெண்ணைபோன் றிட்டஞான் றிட்டதே
தொன்மை உடையார் தொடர்பு.

Three grades of friends.

The lowest sort of men in friendship are like the *Areeanut* tree. The middle sort are like the *cocoa-nut* tree. Attachments to the chief of men—who are old friends—is like the *Palmyra* tree of rare worth: what was given that first day was given once for all. 216.

स्नेहेऽधमाः पूगतरोः समानाः स्युर्नारिकेलेन समास्तु मध्याः।
तदुत्तमानां गुणशीलभाजां मैत्री भवेत् तालतरोः समाना ॥२१६॥

नेह-विषय में अधम हैं, होते पूग समान।
मध्यम होते नेह में, नारियल पेड़ समान॥
उत्तम होते प्यार में, सदैव ताल समान।
विना किसी उपचार ही, खुद तो विवृद्धिमान ॥२१६॥

217. கழுநீருட் காரட கேனும் ஒருவன்
விழுமிதாக் கொள்ளின் அமிழ்தாம்—விழுமிய
குய்த்துவையார் வெண்சோறே யாயினும் மேவாதார்
கைத்துண்டல் காஞ்சிரங் காய்.

A dinner of herbs with affection is ambrosia.
The greatest delicacies without it, nux vomica.

If one receive you courteously, though what he gives is but rank herbs dressed in water in which rice had been washed, it is ambrosia. To eat from the hands of those who love us not, though it be white rice with rich spicy condiments, is nux vomica. 217.

प्रेम्णार्पितं क्षालजले सुपक्वशाकाद्यमन्नं [illegible]
अप्रीतहस्तार्पितषड्रसान्नं वरस्वरावद् भविता कषायम् ॥२१७॥

क्षालनीर में पक्वकृत, शाक युक्त जलपान।
यदि अर्पित हो प्रेम से, तो वह अमृत समान॥
तरकारी-षडरस सहित, सित चावल जलपान।
यदि अर्पित हो प्रेम बिनु, है वह जहर समान ॥२१७॥

218. நாய்க்காற் சிறுவிரல்போல் நன்கணிய ராயினும்
ஈக்கால் துணையும் உதவாதார் நட்பென்னாம்?
சேய்த்தானும் சென்று கொளல்வேண்டும் செய்விளைக்கும்
வாய்க்கா லனையார் தொடர்பு.

Friendship of those who though near aid not.

Of what value is the friendship of those who being very near like the little claw on a dog's leg, afford not help as much as fly's foot? Though you go far to seek it, lay hold of the friendship of those who are like the water channel that causes the crops in the field to flourish. 218.

यो मक्षिकापादसमाल्पसाह्यं स्निग्धो न कुर्यात् किमु तस्य मैत्र्या।
गत्वा स्वयं तैर्रचयन्ति मैत्रीं कुल्येव सस्ये ह्युपकारिणो ये ॥२१८॥

मक्खीपद सम अल्प भी, न करें जो यदि नेह।
क्या हो उसके साथ तो, करने से ही नेह॥
परनाला सम सस्य में, जो क़रता उपकार।
उसकी मैत्री चाहिए, औ कर ले उपचार ॥२१८॥

219. தெளிவிலார் நட்பிற் பகைநன்று சாதல்
விளியா அருநோயின் நன்றால்—அளிய
இகழ்தலின் கோறல் இனிதேமற் றில்ல
புகழ்தலின் வைதலே நன்று.

Four bad things.

Better hate than friendship of the *ignorant.*
Better death than disease which comes on yielding to no remedy.
Sweeter is killing than contempt that breaks the spirit.
Better abuse than undeserved praise. 219.

वरं विरोधो भुवि मूढसख्या-दवार्यरोगान्मरणं गरीयः।
वधो वरस्तस्य विगर्हणाच्च मिथ्यास्तुतेर्दूषणमुत्तमं स्यात् ॥२१९॥

मूढ-सख्य से क्या भला, जग में विरोध भाव।
अशमित रुज से है भला, तन में प्राणाभाव॥
अतिगर्हण से है भला, करना काम तमाम।
मिथ्या-स्तुति से है भला, दूषण सदा तमाम ॥२१९॥

220. மரீஇப் பலரோடு பன்னாள் முயங்கிப்
பொரீஇப் பொருட்டக்கார்க் கோடலே வேண்டும்;
பரீஇ உயிர்செகுக்கும் பாம்பொடும் இன்னா
மரீஇப் பின்னைப் பிரிவு.

Never forsake a friend!

When men have formed an intimacy ( ) separation afterwards even from a snake which slays with it tooth ( ), causes affliction ( ) therefore associate intimately with many, and for many days take them to your bosom, conform to their tastes and habits ( ), and hold fast the really worthy ones. 220.

अनेकवारं बहुभिर्मिलित्वा ज्ञात्वा गुणैक्यं क्रियतां तु मैत्री।
प्राणापहर्त्रा भुजगेन चापि विधाय सख्यं न वरो वियोगः ॥२२०॥

कई वार मिलकर तथा, गुणैक्य की पहचान।
मैत्री करनी चाहिए, तब तो हो कल्याण॥
देह काट कर प्राण हर, अहि से मैत्री भाव।
हो यदि तो उसका दुखद, होगा वियोग भाव ॥२२०॥

Ch. 23. Bearing and Forbearing in Friendship.

२३. मित्रकृत अपराध को सहना

221. நல்லார் எனத்தாம் நனிவிரும்பிக் கொண்டாரை
அல்லார் எனினும் அடக்ிக் கொளல்வேண்டும்;
நெல்லுக் குமியுண்டு நீர்க்கு நுரையுண்டு
புல்லிதழ் பூவிற்கு முண்டு.

Bear with infirmities. None are perfect.

When those to whom with strong desire we clung as good, prove otherwise, keep the sad secret hid,–cling to them still! *The growing grain has husks; the water has its foam:* flowers too have' scentless outer sheath of leaves. 221.

आलोड्य निर्णीतसुहृत्सु दोषः स्याच्चेदनुक्त्वा हृदि गोपनीयम्।
तुषस्तु धान्ये सलिले च फेनः पुष्पे दलं सन्ति हि तेषु दोषाः ॥२२१॥

चिर परिचित निज मित्र में, अवगुण दिख पड़ जाय।
बिनु बोले तो हृदय में, गोपनीय रह जाय॥
तुष तो चावल में तथा, जल में फेन-कलाप।
पुहुंपन में दल दोष हैं, होते अपने आप ॥२२१॥

222. செறுத்தொறுடைப்பினுஞ் செம்புனலோ டூடார்
மறுத்துஞ் சிறைசெய்வர் நீர்நசைஇ வாழ்நர்
வெறுப்ப வெறுப்பச் செயினும் பொறுப்பரே
தாம்வேண்டிக் கொண்டார் தொடர்பு.

Bear with your friends' faults, as the cultivator bears with the stream that often bursts it enclosure.

If though they dam it up, the fresh flood should burst its bonds, men do not feel aggrieve; but straightway imprison it again, for by the precious stream they live: so though their friends again and again do very disagreeable things, men bear with those whose friendship is dear. 222.

विभिन्नकूलं क्षमयाऽसकृच्च बध्वा यथा पान्ति कृषीबलास्तु।
अनिष्टकार्ये बहुधा कृतेऽपि शान्त्या सहन्ते सुहृदस्तथा तान् ॥२२२॥

भिन्न तीर में सतत ही, क्षमाशील से बांध।
बना बनाकर पालते, किसान धीरज बांध॥
अनिष्ट कृतियां रचित हों, असकृत सहस्र बार।
उनको करते हैं सहन, शांति शील से यार ॥२२२॥

223. இறப்பவே தீய செயினுந்தம் நட்டார்
பொறுத்தல் தகுவதொன் றன்றோ—நிறக்கோங்கு
உருவவண் டார்க்கும் உயர்வரை நாட!
ஒருவர் பொறையிருவர் நட்பு.

Bear all things!

Lord of the lofty hilly land, where the bees hum through all the flowery Gongu–glade!—Though friends should work us surpassing ills, the only thing that is meet is forbearance: *patience of one is friendship of the twain.* 223.

तरुप्रसूनभ्रमराढ्यदीर्घ - महीधरालङ्कृतदेशपाल ! ।
सुहृत्कृता: सह्यतमास्तु दोषा: तस्मात् तयोर्वर्धत एव मैत्री ॥२२३॥

प्रसूनगत अलिवृन्द से, भूधर से द्युतिमान।
सिन्धुतीरतट देश का, नायक अहो महान॥
मित्र-रचित अपराध सब, विलकुल हो सहनीय।
उनकी मैत्री इसलिये, ही हो विवर्द्धनीय ॥२२३॥

224. மடித்திரை தந்திட்ட வான்கதிர் முத்தம்
கடுவிசை நாவாய் கரையலைக்குஞ் சேர்ப்ப!
விடுதற் கரியார் இயல்பிலரேல் நெஞ்சம்
சுடுதற்கு மூட்டிய தீ.

To be worth with those we love, is like fire in the breast!

Lord of the shore where pearls of purest lustre are thrown up by circling waves, land where swift darting boats are borne through the surf!—when friends who we may not leave have alien hearts, it is as a scorching fire enkindled in the soul. 224.

पयोधिमुक्ताभरपोतदत्त - मुक्ताकुलाम्भोनिधितीरपाल ! ।
योऽवार्यमैत्रीसहिते च दोष: स चित्तसन्तापकरोऽग्नितुल्य: ॥२२४॥

मोतीवांहक नाव धर, सिन्धु तीर परिपाल।
जिसकी मैत्री वार्य नहि, सुस्थिर हो चिरकाल॥
ऐसी स्थिति में मित्र का, एकमात्र अपराध।
होगा आग समान ही, मानव का आघात ॥२२४॥

225. இன்னா செயினும் விடற்பால ரல்லாரைப்
பொன்னாகப் போற்றிக் கொளல்வேண்டும்—பொன்னொடு
நல்லிற் சிதைத்ததீ நாடொறும் நாடித்தம்
இல்லத்தில் ஆக்குத லால்.

Forsake not friends though they wrong you.

Though those, from whom you may not part, do grievous things, O maid who art as Lakshmi! you must still cherish your chosen friends—fire destroys men's wealth and happy homes, yet is it sought there and kindled every day. 225.

अत्याज्यमित्राण्यपकारकद्र दे-नप्यादरात्पश्य यथा सुवर्णम्।
अर्थेन साकं गृहदाहकोऽग्निः प्रेम्णा दिनं सद्मनि रक्ष्यते हि ॥२२५॥

अत्याज्य मित्र यदि रहे, कारक ही अपकार।
तो भी हेम समान ही, सादर कर उपचार॥
अर्थ हेमयुत गेह को, दाहक पावक आग।
गार्हपत्य के नाम से, नित पालित सह-राग ॥२२५॥

226. இன்னா செயினும் விடுதற் கரியாரைத்
துன்னாத் துறத்தல் தகுவதோ—துன்னருஞ்சீர்
விண்குத்து நீள்வரை வெற்ப! களைபவோ
கண்குத்திற் றென்றுதங் கை.

Friends are not to be forsaken on account of their faults.

When those from whom it is hard to part do evil things should men at once renounce them?—Lord of the lengthening hills that pierce the sky, whence rarest gifts descend!—Do men cut off their hand because it pricked their eye? 226.

अत्याज्यमित्रस्य महापकर्तु-रपीह दोषाय भवेन्निरासः।
हस्तं क हिंस्यात् नयनापकर्तृ स्वर्गस्पृशद्वंशयुताद्रिनाथ! ॥२२६॥

अम्बर चुम्बी वंशयुत, धरणीधर का नाथ।
अत्याज्य मित्र यदि करे, अहित तथा अपराध॥
तो वह साथी भी कभी, वर्जनीय नहि जान।
निज दृगघातक हाथ को, काटे क्या इनसान ॥२२६॥

227. இலங்குநீர்த் தண்சேர்ப்ப! இன்னா செயினும்
கலந்து பழிகாணார் சான்றோர் — கலந்தபின்
தீமை யெடுத்துரைக்குந் திண்ணறி வில்லாதார்
தாமும் அவரிற் கடை.

Those who forsake friends that have committed a fault are worse than they.

Lord of the cool shore of the shining sea! The perfect ones when they have contracted an intimacy with any, see no faults in them, even if they do things that cause pain. Those who, being without stable wisdom take up and tell out men's evil deeds after contracting an intimacy with them, are themselves worse than they. 227.

विधाय मैत्रीमथ मित्रभूते दोषं न पश्यन्ति गुणेन पूर्णाः।
पश्यन्ति ये दोषमिमे तु नीचा भवन्ति पूर्णाम्बुधितीरपाल! ॥२२७॥

मैत्री कर फिर मित्र में, सभ्य तथा गुणवान।
दोष देखता है नहीं, यह बुध की पहचान॥
पर जो लखता दोष वह, नीच कहाया जाय।
शीतल जल भर-पूर दधि-तट नायक दृढ़काय ॥२२७॥

228. ஏதிலார் செய்த திறப்பவே தீதெனினும்
நோதக்க தென்னுண்டாம் நோக்குங்கால் — காதல்
கழுமியார் செய்த கறங்கருவி நாட!
விழுமிதாம் நெஞ்சத்துள் நின்று.

Faults in strangers and in friends.

Lord of the land of resounding waterfalls! Though what the alien to us have done may be surpassingly evil, what is there to be pained at, when you regard it?

Things done by affectionate friends, will be excellent when so regarded by the mind. 228.

महापकारं रचितं परेण विचिन्त्य दैवं यदि वै सहेरन्।
सुहृत्कृतानर्थसहिष्णुताऽपि श्लाघ्या, चलन्निर्झरदेशपाल! ॥२२८॥

अन्य रचित महापकार, सब विधिवश हैं सह्य।
मित्र रचित अपकार भी, क्यों नहि बनता सह्य॥
विचार करने पर विहित, अहित भला बन जाय।
नादित निर्झर देश का, नायक हो दृढ़काय॥२२८॥

229. தாமென்று தாங்கொள்ளப் பட்டவர் தம்மைத்
தாமன்மை தாமறிந்தா ராயின் அவரைத்
தாமின்றும் நன்கு மதித்துத் தமரன்மை
தம்முள் அடக்கிக் கொளல்.

If friends prove unfaithful, love them the more, and keep the secret of their unfaithfulness in your own bosom.

If we perceive those we have accepted as our own to be not really ours, we must pay even more respect to them than to our own, and keep concealed in our own mind the fact that they are not really ours.
229.

स्वकीयबुद्ध्या सुगृहीतमित्रे ज्ञायेत पश्चाद्यदि निर्गुणत्वम्।
अथापि तं स्वीयमवेहि नित्यं परत्वबुद्धिं हृदि गोपय त्वम् ॥२२९॥

स्वीय बुद्धि से एक को, मित्र बनाया जाय।
कालान्तर में ज्ञात हो, वह निर्गुण रह जाय॥
फिर भी उसको समझ लो, जीवन भर आत्मीय।
गोपनीय हो चित्त में, विचार नित परकीय ॥२२९॥

230. தமரா யவரைக் குணனா யொருவனைப்
பட்டபின் நாடித் திரிவேனேல்—பட்டான்
மறைகாவா விட்டவன் செல்வுழிச் செல்க
அறைகடல்சூழ் வையம் நக.

He who pries into his friends faults shares the punishment of the revealer of secrets.

If, after I have taken a man for my friend,I go about, prying into his faults and virtues (other qualities), may I depart whither that man goes who has not kept his friend's secret, while the earth, begirt by the resounding sea, laughs.
230.

विधाय सख्यं गुणदोषचर्चां तस्मिन्नरेऽहं यदि ह्यत्र कुर्याम्।
तत्तुल्यपापी भविता ध्रुवं तु ब्रूयाद्बहिर्यः सुहृदो रहस्यम् ॥२३०॥

मैत्री कर, गुण-दोष की, चर्चा यदि की जाय।
घृणित हाल तो जगत में, मुझ को ही मिल जाय॥
मित्र-भेद की घोषणा, दोष हि समझा जाय।
ऐसे कसूर की सजा, मुझ को ही मिल जाय ॥२३०॥

Ch. 24. Unreal Friendship
२४. अनुचित मैत्री

231. செறிப்பில் பழங்கூரை சேறணை யாக
இறைத்துநீர் ஏற்றுங் கிடப்பர்—கறைக்குன்றம்
பொங்கருவி தாழும் புனல்வரை நன்னாட!
தங்கருமம் முற்றுந் துணை.

Unreal friends cling to you till they have gained their desire. Lord of the pleasant well–watered mountain land, where boiling waferfalls pour down from the dark hills! (Poor men) linger beneath the old roof that affords no shelter, baling out the water, and making, mud embankments, and enduring the down–pour; (even so unreal friends stick by you)*till their purpose has been attained.* 231.

वर्षाजलं पर्णगृहप्रविष्टं हस्ताख्यपात्रैरथ सेतुबन्धैः।
निष्कास्य केचिन्निजकार्यसिद्ध्यै सन्त्यत्र, नीरालयदेशनाथ! ॥२३१॥

स्रोतमूलशत नीर से, भरे स्थान का नाथ।
वर्षा पानी गेह से, उलचे अपने हाथ॥
सेतु बंध से भी कभी, नीर निकाला जाय।
दीन छली की मित्रता, कभी नहीं की जाय ॥२३१॥

232. சீரியார் கேண்மை சிறந்த சிறப்பிற்றாய்
மாரிபோல் மாண்ட பயத்ததாம்—மாரி
வறந்தக்கால் போலுமே வாலருவி நாட!
சிறந்தக்கால் சீரிலார் நட்பு.

The friendship of the excellent like rain; of others like drought. Lord of the land of pure (white, forming) water–falls! The friendship of the virtuous is of exceeding excellence, and yields glorious results—like (seasonable) rain; but the friendship of the vicious, even in the time of its exuberance, is as when the rain fails in the time of drought. 232.

स्नेहः सतां श्रेष्ठतमः प्रशस्तः फलेन पूर्णश्च यथैव वृष्टिः।
स्यान्निष्फला हीनगुणेषु मैत्री निर्वृष्टितुल्या भुवि, पाण्डचराज! ॥२३२॥

निर्झर समेत देश का नायक! पाण्डिय राज।
सफल वृष्टि सम संत की, मैत्री हो सिरताज॥
अनावृष्टि सम नीच की, मैत्री यदि बढ़ जाय।
तो वह मैत्री जगत में, निष्फल ही रह जाय ॥२३२॥

233. நுண்ணுணர்வி னாரொடு கூடி நுகர்வுடைமை
விண்ணுலகே யொக்கும் விழைவிற்றால்—நுண்ணூல்
உணர்வில ராகிய ஊதிய மில்லார்ப்
புணர்தல் நிரயத்து ளொன்று.

Bliss enjoyed with the wise is heaven; association with the ignorant and worthless is hell.

Enjoyment of the society of men of refinement resembles the heavenly world in the pleasure it affords. Closest contact with those destitute of fine perception of the value of learned pursuits—men who gain no wisdom from you, nor you from them—is one of the hells. 233.

सूक्ष्मसज्ञङ्गोद्भवसौख्यभोग: स्वर्लोकभोगेन समो वरिष्ठ:।
अशास्त्रविद्भिर्विफलैर्मनुष्यै: समागम: स्यान्निरयेन तुल्य: ॥२३३॥

सूक्ष्म-ग्राही-नेह से, उत्थित सुख का भोग।
स्वर्गभोग सम जानिये, सर्वोपरि सुखभोग॥
अशास्त्रविद के नेह से उत्थित दुख का भाग।
नरकभोग सम समझिये, सर्वाधम दुखभोग ॥२३३॥

234. பெருகுவது போலத் தோன்றிவைத் தீப்போல்
ஒருபொழுதுஞ் செல்லாதே நந்தும்—அருகெல்லாஞ்
சந்தன நீள்சோலைச் சாரல் மலைநாட!
பந்தமி லாளர் தொடர்பு.

Intimacy with those who have no sympathy is like fire in the stubble.

Lord of the land where wide groves of *Sandal* cover the hilly slopes! Friendship with those who feel not its real obligation, like fire in the straw (suddenly) appears, seeming as though it would increase, but never advancing dies out. 234.

वात्सल्यशून्यै: सह लब्धमैत्री पूर्वं प्रवृद्धेव भवेत्, ततस्तु।
तृणं यथाग्नौ झटिति प्रणश्येत् हे चन्दनाद्रयालयदेशपाल! ॥२३४॥

चन्दनगिरियुत देश का, नायक पाण्डियराज।
प्रेम हीन की मित्रता, पहले वृद्धिविराज॥
कालान्तर में तृण यथा, लगकर आग-विनष्ट।
वैसे तुरन्त जगत में, हो जाती है नष्ट ॥२३४॥

235. செய்யாத செய்தும்நாம் என்றலும் செய்தவனைச்
செய்யாது தாழ்த்துக்கொண் டோட்டலும்—மெய்யாக
இன்புறூஉம் பெற்றி இகழ்ந்தார்க்கும் அந்நிலையே
துன்புறூஉம் பெற்றி தரும்.

Boastings and delays.

The promising to do what cannot be done, and the putting off and leaving undone through delay things that could be done, will forthwith bring experience of sorrow even to those who have condemned truthfully the pleasant experiences of life(ascetics and saints). 235.

असाध्यकर्मण्यपि साध्यतोक्तिः साध्येषु कार्येषु वृथा विलम्बः।
इदं द्वयं भोगविरक्तिभाजां सन्न्यासिनां चापि विषादकृत् स्यात् ॥२३५॥

असाध्य कृति में साध्यता, कहना है इक पक्ष।
साध्य कर्म में ही वृथा, विलम्ब दूजा पक्ष॥
ये दोनों गार्हस्थ्य कें, भोगों से हि विरक्त।
तथैव यतिजन के लिए, दुखकर दुखानुरक्त ॥२३५॥

236. ஒருநீர்ப் பிறந்தொருங்கு நீண்டக் கடைத்தும்
விரிநீர்க் குவளையை ஆம்பலொக் கல்லா ;
பெருநீரார் கேண்மை கொளினும் நீரல்லார்
கருமங்கள் வேறு படும்.

The water–lily does not become a lotus by being in the same tank with it: so evil persons will act in conformity with their natures.
The *Ambal* (Water–lily) does not equal the expanding *Kuvalai* though born and growing together with it in the same pool: though they attain to intimacy with those of generous instincts, the deeds of men in whom these instincts are lacking will be diverse. 236.

भूत्वैकतोये सहरूढमूलं न कैरवं चोत्पलसाम्यमेति।
तथा गुणाढ्यैः सहवासभाजो नीचस्य कृत्यं पृथगेव भायात् ॥२३६॥

नहि है उत्पल साम्यता, पाता कैरव फूल।
यद्यपि दोनों नीर में, उत्थित प्ररूढमूल॥
सुशील के सहवास का, पात्र नीच हो जाय।
फिर भी कृति तो नीच की, अलग एव रह जाय ॥२३६॥

237. முற்றாற் சிறுமந்தி முற்பட்ட தந்தையை
நெற்றுக்கண் டன்ன விரலால் ஞெமிர்த்திட்டுக்
குற்றிப் பறிக்கும் மலைநாட! இன்னாதே
ஒற்றுமை கொள்ளாதார் நட்பு.

Friendship with the uncongenial is bad.

Lord of the hilly land where the immature little monkey, with its finger like a bean–pod, will flip its father when it meets him, and poke him and snatch fruit from him! *Afflictive indeed is friendship with the uncongenial.* 237.

कपिस्त्रियः पूर्वगतातिवृद्ध-कपेस्तु हस्तात् फलमादधानाः।
यद्भूधरे यान्ति च तस्य नाथ! विभिन्नबुद्धेः सुखदा न मैत्री ॥२३७॥

जहां जठर-कपि-हाथ से, वानरपतनी हाथ।
हाजिर करती फल सभी, ऐसे गिरि का नाथ॥
यदि मित्रों के बीच में, नहि मिल्लत का भाव।
तो नित उनकी मित्रता, सुखद न कठोर भाव ॥२३७॥

238. முட்டுற்ற போழ்தின் முடுகியென் ஆருயிரை
நட்டான் ஒருவன்கை நீட்டேனேல்—நட்டான்
கடிமனை கட்டழித்தான் செல்வுழிச் செல்க
நெடுமொழி வையம் நக.

The curse of him who does not after his life for his friend.

If I hasten not to put forth my hand and offer my precious life to my friend when in distress, may I depart whither he goes who has violated the sanctity of his friend's wedded wife, while the far–famed world laughs! 238.

क्लिष्टस्थितौ मित्रवरस्य साह्यं प्राणं च दत्वा यदि नास्य कुर्याम्।
तत्तुल्यपापी भविता सतीत्व-भङ्गे न रक्षेत् सुहृदः सतीं य ॥२३८॥

बुरी दशा में मित्र का, करता यदि न सहाय।
देकर अपनी जान भी, तो हूंगा असहाय॥
पतिव्रता के भंग में, जो नहि सती-सहाय।
उसके समान मैं सदा, पाऊंगा अघकाय ॥२३८॥

239. ஆன்படு நெய்பெய் கலனுள் அதுகளைந்து
வேம்படு நெய்பெய் தனைத்தரோ ;—தேம்படு
நல்வரை நாட ! நயமுணர்வார் நண்பொரீஇப்
புல்லறிவி னொடு நட்பு.

Bitter for sweet.

Lord of the land of goodly hills where honey flows! To forsake the friendship of those who know the right, and cultivate that of shallow pretenders to knowledge, is like emptying out cow's *ghee* from a vessel and pouring into it *margosa* oil. 239.

निष्कासनं धेनुघृतस्य पात्रात् तत्पूरणं चाप्यथ निम्बतैलैः ।
नीतिज्ञमैत्रीं तु विहाय मूढ-मैत्रीसमं स्यात् मधुभृन्नगेश! ॥२३९॥

शहद भरे भूमिधर का, अधिनायक दृढकाय।
गो का घी ज्यों पात्र से, पूर्ण निकाला जाय॥
और बदल में निम्बरस, भरा दिया ही जाय।
त्यों तज नयविद-मित्रता, मूढ-नेह गह जाय ॥२३९॥

240. உருவிற் கமைந்தான்கண் ஊராண்மை இன்மை
பருகற் கமைந்தபால் நீரளா யற்றே ;
தெரிவுடையார் தீயினத்தா ராகுதல் நாகம்
விரிபடையோ டாடிவிட் டற்று.

A specious outward appearance without a liberal spirit.

The absence of generosity in those whose exterior is pleasing, is like the mingling of water with the milk provided for food: when men of understanding take to bad company it is like the disporting of a *Cobra* with a female viper 240.

गुणेन पूर्णो यदि नो दयावान् तत्पेयदुग्धे जलवद् वृथैव।
ज्ञानी त्वसन्मित्रयुतो यदि स्यात् नश्येद्यथा सर्पयुतो हि नागः ॥२४०॥

गुणशाली में यदि नहीं, दयावान का भाव।
तो जल मिश्रित दूधसम, सो हो निष्फल भाव॥
ज्ञानी दुर्जन मित्र का, नाता यदि रख जाय।
सर्पयुक्त ज्यों नागसम, सो विनष्ट हो जाय ॥२४०॥

Ch. 25. The Possession of Practical Wisdom.

२५. सुखधर्माध्याय—ज्ञान-विशिष्टता

241. பகைவர் பணிவிடம் நோக்கித் தகவுடையார்
தாமேயும் நாணித் தலைச்செல்லார் காணாய்;
இளம்பிறை யாயக்கால் திங்களைச் சேரா(து)
அணங்கருந் துப்பின் அரா.

Generosity to fallen foes.

Worthy men, when they behold where foes are foiled, themselves too feel sore abashed, and do not hasten on to crush them. Behold, the strong invulnerable dragon draws not near the moon (to swallow it) when it is in its tender crescent days! 241.

शत्रुं बुधाः क्षीणदशामवाप्तं न यान्ति हन्तुं दययार्द्रचित्ताः।
सर्पो बलाढ्यो न हि बालचन्द्र-मपूर्णरूपं ग्रसतीह यद्वत् ॥२४१॥

क्षीण-दशागत शत्रु को, करुणा से भरपूर।
होकर बुध जन सिद्ध नहि, करते चकनाचूर॥
बली सांप गहता यथा, नाही अपूर्ण चाँद।
केवल गहता किन्तु तो, कलापूर्णयुत चाँद ॥२४१॥

242. நளிகடல் தண்சேர்ப்ப! நல்கூர்ந்த மக்கட்
கணிகல மாவ தடக்கம் :—பணிவில்சீர்
மாத்திரை யின்றி நடக்குமேல் வாழுமூர்
கோத்திரங் கூறப் படும்.

Self–restraint, an ornament.

Lord of the cool shore of the spreading sea! To men in poverty a modest self–restraint is the chiefest ornament. If a man live unbending pride, and in a manner unbefitting his position, his fellow–townsmen will revile his race. 242.

विभूषणं निर्धनिनां क्षमा स्यात् महाब्धिशैत्यान्वितकूलपाल!।
क्षमां विना संचरतः कुमार्गे कुलं विनिन्दन्ति जनाः समेऽपि ॥२४२॥

शीतल महान सिन्धु के, तट थल का परिपाल।
निर्धन का गहना क्षमा, और न भूषण माल॥
क्षमा बिना जो भटकते, फिरते कुपथ विलोल।
उनके कुल की निन्दना, करते जन अविलोल ॥२४२॥

243. எந்நிலத்து வித்திடினும் காஞ்சிரங்காழ் தெங்காகா(து)
எந்நாட் டவரும் சுவர்க்கம் புகுதலால்,
தன்னாற்றான் ஆகும் மறுமை வடதிசையும்
கொன்னாளர் சாலப் பலர்.

Character, not birthplace.

Whatever soil you sow it in, the *Strychnos* nut grows not into a cocoa–palm. Some of the Southern land have entered Paradise! It is man's way of life that decides his future state. Full many from the Nothern land are denizens of hell. 243.

स्थले न किञ्चिद्धि, वरस्वराया बीजेन भूयान्न तु नारिकेलम्।
तदौत्तरेया इव दाक्षिणात्या मुक्तिं भजन्ते, दिशि को विशेषः ॥२४३॥

जमीन में कुछ भी नहीं, बोकर कुचला बीज।
नारीकेल फल नहि मिलें, ज्यों के त्यों तरुबीज॥
दाक्षिणात्य हैं पहुंचते, विमुक्ति ही के द्वार।
उत्तरीय नहि मुक्तिगत, दिशि नहि है आधार ॥२४३॥

244. வேம்பின் இலையுட் கனியினும் வாழைதன்
தீஞ்சுவை யாதும் திரியாதாம்; ஆங்கே
இனந்தீ தெனினும் இயல்புடையார் கேண்மை
மனந்தீதாம் பக்கம் அரிது.

Good men not affected by corrupt influences.

Though ripened amid margosa leaves the fruit of the plantain loses no atom of its sweet flavour. Even so the friendship of men of noble mood, although their race be evil, can hardly work ill to the mind. 244.

स्वभावशुद्धा गुणहीनसङ्गात् न बुद्धिभेदं समवाप्नुवन्ति।
यन्निम्बमध्ये फलितापि यद्वत् माधुर्यभावं कदली न मुञ्चेत् ॥२४४॥

स्वभाव से जो नेक हैं वे दुर्जन का संग।
पाकर भी दुर्बुद्धि तो, प्राते नहि निश्शंक॥
केला फलता फूलता, यदपि नीम के बीच।
फिर भी न तजे मधुरता, क्या कर सकता नीच॥२४४॥

245. கடல்சார்ந்தும் இன்னீர் பிறக்கும், மலைசார்ந்தும்
உப்பீண் டுவரி பிறத்தலால்; தத்தம்
இனத்தனைய ரல்லர் எறிகடல்தண் சேர்ப்ப!
மனத்தனையர் மக்களென் பார்.

Not environment, but mind makes the man.

Though close by the sea, sweet waters oft-times spring up there; on the hill-side the waters often gush out all brine! Thus men are not as their race.—Lord of the dashing sea's cool shore! Men are as their minds. 245.

अब्ध्यन्तिके चापि जलं सुपेयं नगान्तिके तल्लवणान्वितं स्यात्।
कुलानुरूपं न नृणां गुणः स्यात् मनोऽनुरूपं गुणमाप्नुवन्ति ॥२४५॥

लवण पयोधि-समीप में, प्राप्त नीर हो पेय।
गिरि समीप में लब्ध जल, खारा हो नहीं पेय॥
मानव का गुण ना कभी, होगा कुलानूरूप।
वह पाता है जगत में, गुणगण मनोनुरूप॥२४५॥

246. பராஅரைப் புன்னை படுகடல்தண் சேர்ப்ப!
ஒராஅலும் ஒட்டலுஞ் செய்பவோ? நல்ல
மரூஉச்செப் பியார்மாட்டுங் தங்கு மனத்தார்
விராஅஅப்ச் செய்யாமை நன்று.

Against caprice.

Lord of the cool sea-shore, where flourishes the thick-stemmed laurel! Men whose minds are good (constant), and who adhere to whomsoever they have formed an intimacy with, will not sometimes avoid men, and at other times be intimate. It is good not to have fits of alternating warmth and indifference. 246.

संयुज्य पूर्वं गुणशालिमर्त्यैः त्यक्तुं न वाञ्छन्ति दृढप्रतिज्ञाः।
सुहृद्वियोगात्सफलो ह्ययोगः कदम्बयुक्ताम्बुधिकूलपाल! ॥२४६॥

कदम्ब समेत शीतकर, सागर तट का नाथ।
स्थित की पहले मिलन कर, गुणशाली के साथ॥
उसका वियोग चाहता, नहि फिर मित्रायोग।
मित्रामिलन से है भला, तथा सफल हो भोग ॥२४६॥

247. உணர உணரும் உணர்வுடை யாரைப
புணரிற் புணருமாம் இன்பம் ;—புணரின்
தெரியத் தெரியுந் தெரிவிலா தாரைப்
பிரியப் பிரியுமாம் நோய்.

Good and bad associations.

Join the men who throughly feel true wisdom's inner sense, and forthwith joy joins you. Join yourself to men devoid of the accurate preception of knowledge, and then parting form them is parting from pain. 247.

विचारमूलाप्तविवेकवद्भि: सङ्गस्त्वनन्तानि सुखानि यच्छेत्।
विवेकशून्यै: सह विप्रयुक्ता दु:खैर्वियोग सुतरां भजन्ते ॥२४७॥

करके अनुसंधान ही, जो होते सविवेक।
उनकी संगति से हमें, मिलते हर्ष अनेक॥
विवेक से जो रहित हों, उनका यदि नहिं योग।
तो हमको संसार में, हो क्या क्लेश-वियोग ॥२४७॥

248. நன்னிலக்கண் தன்னை நிறுப்பானும், தன்னை
நிலைகலக்கிக் கீழிடு வானும்,—நிலையினும்
மேன்மேல் உயர்த்து நிறுப்பானும், தன்னைத்
தலையாகச் செய்வானும் தான்.

Man makes, unmakes, and ennobles himself.

He that establishes a man in good, and he that disturbs that good position and casts him down, and he that more and more exalts a man and establishes him, and he that makes a man head (among men) is (the MAN) HIMSELF. 248.

स्वोच्चस्थितिप्राप्तिविधौ तथैव नीचस्थितिप्राप्तिविधौ च तद्वत्।
उपर्युपर्यूर्ध्वपदस्य लाभे सर्वोच्चतायां स्वकृतिर्हि हेतु: ॥२४८॥

उच्च दशा की प्राप्ति का, कारण सही प्रयास।
नीच दशा की प्राप्ति का, निदान स्वीय प्रयास॥
उपर्युपरि पद-लाभ का, कारण निजी प्रयत्न।
सर्वोच्च भाव का रहें, कारण निजी प्रयत्न ॥२४८॥

249. கரும வரிசையாற் கல்லா தரசர் பின்னும்
பெருமை யுடையாருஞ் சேறல்—அருமரபின்
ஓதம் அரற்றும் ஒலிகடல் தண்சேர்ப்ப!
பேதைமை யன்ற தறிவு.

It is prudent sometimes to sacrifice pride.

Lord of the cool shore of the sounding sea, where from old time the billows roar!—In the course of their affairs when even great men follow after the unlearned, this is not folly but wisdom. 249.

मूढस्य पार्श्वे निजकार्यहेतोः यानं सतां स्याद्धि विवेककृत्यम्।
तन्नैव भूयादविवेककृत्यं क्वणत्तरङ्गाम्बुधितीरपाल! ॥२४९॥

क्वणित वीचियुत सिंधु के, प्रदेश का परिपाल।
अनुनय करना मूढ से, सफल हेतु कृति जाल॥
माना जाता जगत में, यह नहि है अविवेक।
नानुगमन हो मूढ से, वही विदित अविवेक ॥२४९॥

250. கருமமும் உட்படாப் போகமும் துவ்வத்
கருமமும் தக்கார்க்கே செய்யா—ஒருநிலையே
முட்டின்றி மூன்று முடியுமேல் அஃதென்ப
பட்டினம் பெற்ற கலம்.

A perfect life-voyage.

If a man has wrought all fitting works, enjoyed all seemly pleasures, done deeds of charity to worthy men: if he shall have accomplished all these three unchecked, in this one state, of him men will say: '*that is a ship that has gained the haven*'. 250.

धमार्थसम्पादककार्यपूर्तिः तेनेह भोगस्त्वथ दानकर्म।
लोके त्रयं सिद्धयति यस्य तद्धि निवृत्तनौकासममेव भाव्यम् ॥२५०॥

अर्थ धर्म के मूल पर, कार्य-सिद्धि हो जाए।
उसके द्वारा हर्ष हो, दान किया फिर जाय॥
इन तीनों का सिद्धि जो, पाता है निज जन्य।
निवृत्त नाव समान हो, कृतार्थ उसका जन्म ॥२५०॥

Ch. 26. The Lack of Practical Wisdom.

२६.विवेक-रहितता

251. நுண்ணுணர் வின்மை வறுமை, அஃதுடைமை
பண்ணப் பணைத்த பெருஞ்செல்வம் ;—எண்ணுங்கால்
பெண்அவாய் ஆண்இழந்த பேடி அணியாளோ,
கண்அவாத் தக்க கலம்.

Lack of accurate perception is poverty. Mere externals are nothing.

The want of refined knowledge is poverty, its possession is very great and abundant wealth. When lone considers, will not a sexless creature, more woman than man, adorn herself with the jewels that her eye desires? 251.

विवेकवत्त्वं किल पूर्णभाग्यं दारिद्र्यवत्त्वं त्वविवेकिता स्यात्।
नपुंसकस्त्री वहुभूषणानि धृत्वापि लावण्यमवाप्नुयात् किम्? ॥२५१॥

पूर्ण भाग्य है जगत में, नर-नार का विवेक।
निर्धनता होगी सदा, मानव का अविवेक॥
नपुंसक स्त्री भी पहन कर, अनेक भी श्रृंगार।
क्या पाती है जगत में, नित लावण्य अपार ॥२५१॥

252. பல்லான்ற கேள்விப் பயனுணர்வார் பாடழிந்து
அல்லல் உழப்ப தறிதிரேல்—தொல்சிறப்பின்
நாவின் கிழத்தி உறைதலாற் சேராளே,
பூவின் கிழத்தி புலந்து.

Why the goddess Fortuna avoids the learned .

Men of vast and varied lore are seen in low estate, and suffer want. Would you know the reason? The anciently renowned 'Lady of the tongue' abides with them. 'The Lady of the flowers' is jealous, and draws not near! 252.

वहुश्रुता ज्ञानिवरा महत्वं विहाय दारिद्र्यवशा भवन्ति।
विद्वत्सु वाणी वसतीति कोपात् लक्ष्मीर्न तानेति, रहस्यमेतत् ॥२५२॥

ज्ञानी अनेक शास्त्रविद, खोकर निजी महत्व।
पाते रहते हैं सदा, निघन तक निर्धनत्व॥
विद्वानों में भारती, रहती है यों खेद।
प्रकटित कर उनको रमा, तज रहती यह भेद ॥२५२॥

253. கல்லென்று தந்தை கழற அதனையோர்
சொல்லென்று கொள்ளா திகழ்ந்தவன்,—மெல்ல
எழுத்தோலை பல்லார்முன் நீட்ட விளியா
வழுக்கோலைக் கொண்டு விடும்.

Folly of refusing to learn in youth.

He who, when his father urgently bade him learn, did not take it as a serious matter, but contemned it; when, before many men, some one gently presents a written palm–leaf, will in anger fetch a stick to beat him as guilty of an insult. 253.

'पठे'ति बाल्ये पितुरुक्तवाक्यं सुतस्त्वशृण्वन्नवलीलयाऽत्र।।
अन्ते सभायामपठन् स लेखं तान् ताडयेद्वै कुपितः स्वदण्डैः ।।२५३ ।।

"पढो बाल्य मैं" यों पिता, देता है उपदेश।
जो बेटा नहि मानता, सखेल जनकादेश।।
फिर वह पढ़ने लेख को, पटु नहि हो बुध बीचि।
सकोप बुध को मारने, दण्डहस्त हो नीच ।।२५३ ।।

254. கல்லாது நீண்ட ஒருவன் உலகத்து
நல்லறி வாள ரிடைப்புக்கு—மெல்ல
இருப்பினும் நாய்இருந் தற்றே, இராஅ(து)
உரைப்பினும் நாய்குரைத் தற்று.

An ignorant man is a mere cur!

When a man who has grown up without learning enters the society of the wise, if he sit still, it is as if a dog sat there; and if he rise to speak, it is as though a dog barked. 254.

विद्वत्सभायां प्रविशन्न विद्वान् न भाषते चेत् शुनकायतेऽसौ।
प्रविश्य किञ्चिद्यदि भाषतेऽसौ शुनां तु तत्स्याद्भूषणेन तुल्यम् ।।२५४।।

अनपढ़ बुध के बीच में, न करें वार्तालाप।
वह तो श्वान समान हो, दिख पड़ता चुपचाप।।
अनपढ़ बुध के बीच में, भाषण देता अल्प।
श्वान भूंक सम जगत में, माना उसका जल्प ।।२५४।।

255. புல்லாப்புன் கோட்டிப் புலவ ரிடைப்புக்குக்
கல்லாத சொல்லும் கடையெல்லாம்;— கற்ற
கடாஅயி னும் சான்றவர் சொல்லார் பொருண்மேற்
படாஅ விடுபாக் கறிந்து.

Cast not pearls before swine.

All the baser sort consorting with scholars of a heterodox and low school, will utter illiterate rubbish; but men replete with learning, though urgently asked, utter not the results of their learning, knowing that (the asker) would fail to apply their minds to the import of what was said. 255.

अल्पज्ञसंघं प्रविशन् सधैर्यं अज्ञाततत्त्वः प्रवदेदविद्वान्।
पृष्टाः परैर्ज्ञातमपीह सन्तः श्रोता त्वनर्हो यदि नो वदेयुः ॥२५५॥

ज्ञात तत्त्व विहीन मनुज, अतिधीरज के साथ।
अल्पविदों के बीच में, बोलेगा वह बात॥
ज्ञात तत्त्व भी सन्त जन, सभासदों के बीच।
अनर्ह श्रोता समझकर, न कहेंगे वच नीच॥२५५॥

256. கற்றறிந்த நாவினார் சொல்லார்தாம் சோர்வஞ்சி;
மற்றைய ராவார் பகர்வர்; பனையின்மேல்
வற்றிய ஓலை கலகலக்கும்; எஞ்ஞான்றும்
பச்சோலைக் கில்லை ஒலி.

Modest silence.

Men of learned tongues are silent, fearing some slip; others (ignorant men) will speak out; on the Palmyra tree the dried– up leaves make a loud rustling noise; but evermore the green leaf gives forth no sound! 256.

अधीततत्त्वा विबुधा यथेष्टं स्खालित्यभीत्या न वदेयुरर्थान्।
नैव परे, तालतरुस्थशुष्क-पत्रं निनादं कुरुते, न चार्द्रम् ॥२५६॥

थोड़ी गलती के लिये, बुध होकर भयभीत।
बोलेंगे नहि भीड़ में, यथेष्ट सीमातीत॥
मनमाने कहता अबुध, अतिसाहस के साथ।
शुष्क ताल का पत्र ही, कर सकता है नाद ॥२५६॥

257. பன்றிக்கூழ்ப் பத்தரில் தேமா வடித்தற்றால்
நன்றறியா மாந்தர்க் கறத்தா றுரைக்குங்கால்;
குன்றின்மேற் கொட்டுந் தறிபோல் தலைதகர்ந்து
சென்றிசையா வாகும் செவிக்கு.

Good instruction thrown away on thankless people.

When you expound the way of virtue to ungrateful people,—which is like mashing up sweet mangoes for a pig in a food—trough,—those virtuous teachings lose all their force—have their point (   ) broken (   ) by the obtuseness of the disciple—and do not enter into, or suit his ear,—like a stake which one would drive in on the side of hill. 257.

धर्मोपदेशस्त्वविवेकिजन्तोः पोत्र्या यथा चाम्ररसप्रदानम्।
दारुः शिलायां न विशेत्सुबद्धः तेषां न कर्णे प्रविशेन्न धर्मः ॥२५७॥

अविवेकी को धर्म का, देना है उपदेश।
अरसिक सूकर को यथा, देना रसाल-लेश॥
दारु शिला में बद्ध नहि, ज्यों त्यों धर्म सलाह।
अविवेकी के कान में, पड़ती नहीं अथाह ॥२५७॥

258. பாலாற் கழீஇப் பலநாள் உணக்கினும்
வாலிதாம் பக்கம் இருந்தைக் கிருந்தன்று;
கோலாற் கடாஅய்க் குறினும் புகலொல்லா
நோலா உடம்பிற் கறிவு.

Learning requires discipline.

Though you wash it with milk for many days and dry it, charcoal on no hypothesis becomes white! So into the undisciplined body wisdom enters not, though you teach it, driving it in with a stick. 258.

प्रक्षाल्य दुग्धेन सुशोषितं त-दङ्गारनैल्यं न ततोऽपयाति।
ज्ञानं न विन्देत् बहुताडितोऽपि स्वपूर्वपुण्यं यदि तस्य न स्यात् ॥२५८॥

पय से क्षालित कोयला, शोषित भी बहुवार।
नहीं छोड़ता कालिमा, ज्यों रहता अविकार॥
त्यों वह ताडित बहुत भी, होगा नहि सचेत।
जबकि नहीं वह जगत में, पूर्वपुण्य समवेत ॥२५८॥

259. பொழிந்தினிது நாறினும் பூமிசைதல் செல்லா
திழிந்தவை காமுறூஉம் ஈப்போல்—இழிந்தவை
தாங்கலந்த நெஞ்சினார்க் கென்னாகும்? தக்கார்வாய்த்
தேன்கலந்த தேற்றச்சொல் தேர்வு.

The fly desires not the fragrant honey. The base esteem not sweet and powerful words.

To those whose minds are full of foul things,—like the fly which goes not to feed on the flower that pours forth sweetness and breathes perfume, but fixes its eager desire on ordure,—what clear comprehension can there be of the lucid words full of honied sweetness that issue from the mouths of the worthy? 259.

विहाय पुष्पं मधुगन्धपूर्णं वाञ्छन्ति हेयं किल मक्षिकास्तु।
हेयार्थलाभोद्यतचित्तवन्तः श्रृण्वन्ति नैवं मधुरां बुधोक्तिम् ॥२५९॥

गंध पूर्ण मधुयुक्त भी, तजकर प्रसूनजाल।
मक्खी गण है चाहते, केवल निकृष्ट माल॥
हेय अर्थ के लाभ में, दत्त चित्त नर नीच।
सुनते नहि बुध-वच मधुर, सभासदों के बीच ॥२५९॥

260. கற்றார் உரைக்குங் கசடறு நுண்கேள்வி
பற்றாது தன்னெஞ் சுதைத்தலால்—மற்றுமோர்
தன்போல் ஒருவன் முகநோக்கித் தானுமோர்
புன்கோட்டி கொள்ளுமாம் கீழ்.

The base man rejects the words of the learned, and seeks the assembly of congenial fools.

The base man does not apprehend the faultless words of accurate instruction which the learned in the face of some other one like himself (for encouragement), and convenes a wretched assembly of his own i.e. He finds one like-minded, and the two set up a sect. 260

बुधेरितं शास्त्रवरार्थतत्त्वं यस्मान्न केचिद्बहुमानयन्ति।
तस्मात्तु मूढाः समुदीक्ष्य मूढान् नीचप्रसङ्गं खलु कुर्वतेऽत्र ॥२६०॥

श्रेष्ठ शास्त्र के तत्त्व युत, बुधजन के उद्‌गार।
जिस कारण से लोग कुछ, करते हैं इनकार॥
उसका फलस्वरूप तो, गूढ मूढ के बीच।
भाषण देने हैं लगे, बिलकुल ही अतिनीच ॥२६०॥

Ch. 27. Wealth that profits not

२७. व्यर्थ वित्त

261 அருகல தாகிப் பலபழுத்தக் கண்ணும்
பொரிதாள் விளவினை வாவல் குறுகா;
பெரிதணிய ராயினும் பீடிலார் செல்வம்
கருதும் கடப்பாட்ட தன்று.

Useless neighbours: so near and yet so far.

The bat approaches not the *Feronia*, with its dry stem, though it be night at hand and bear abundant fruit; so although mean people are very close at hand, their wealth is not a thing that can be counted upon.

261

स्थितं समीपेऽप्यथ लोभिवित्त-मलभ्यबुद्ध्या न बुधाः स्मरन्ति।
सुपक्वनानाफलसन्निदाने यथा न वाञ्छेज्जतुका कपित्थम् ॥२६१॥

कृपण वित्त तो लभ्य नहि, यों करके सुविचार।
बुध जन सुमिरण ही नहि, करते निकटाधार॥
सुपक्व नाना कन्द फल, यद्यपि पहले पास।
फिर भी गादूर कैथ की ना रखता है आस ॥२६१॥

262. அள்ளிக்கொள் வன்ன குறுமுகிழ வாயினும்
கள்ளிமேற் கைநீட்டார் குடும்பூ அன்மையால்
செல்வம் பெரிதுடைய ராயினும் கீழ்களை
நள்ளார் அறிவுடை யார்.

None pluck the Kalli flowers.
The wise approach not the base.

Men reach not out their hand to the *Kalli* (Cactus). though it bears delicate round buds by the handful, because these are not flowers they can weave into a garland to crown themselves withal; so wise people from no friendships with the base however great their wealth may be.

262

'कळ्ळि' प्रसूनं शिरसा न धार्यं हस्तापचेयामपि कळ्ळिवल्लीम्।
स्प्रष्टुं न वाञ्छन्ति, धनाढ्यनीच-सङ्गं न कुर्वन्ति बुधास्तथैव ॥२६२॥

प्रसून "थहर" शीश पर, कभी नहीं है धार्य।
उसे न छूते जन यदपि, कर से हो आहार्य्य॥
यद्यपि धन से सहित हो, तो भी खल का संग।
बुधजन करते हैं नहि, निशा-दिवस निश्शंक ॥२६२॥

263. மல்கு திரைய கடற்கோட் டிருப்பினும்
வல்லூற் றுவரில் கிணற்றின்கட் சென்றுண்பர்;
செல்வம் பெரிதுடைய ராயினும், சேட்சென்றும்
நல்குவார் கட்டே நசை.

Though living on the sea-shore, men go to the fresh spring to drink.

Though men live on the curved shore of the sea with its multitudinous waves, they go and drink at the well, with its perennial fountain of fresh water from the rock; so even if those(who are neighbours) are very wealthy, the desire(of the poor) is towards the liberal, though these may be far to seek. 263.

सवीचिसिन्धोस्तटगाश्च दूरं प्रयान्ति कूपं मधुनीरयुक्तम्।
नीचस्य वित्ते निकटागतेऽपि दूरं तथा यान्ति सतां धनार्थम् ॥२६३॥

सवीचि सागर तीर थित, जन जाते उस ओर।
कुआ-नीर खास नहीं, तथा पेय जिस ओर॥
नीच वित्त यदि निकट में, निज कर में आ जाय। तो
सज्जन धन के लिये, दूर चला ही जाय ॥२६३॥

264. புணர்கடல் சூழ் வையத்துப் புண்ணியமோ வேறே;
உணர்வ துடையார் இருப்ப—உணர்விலா
வட்டும் வழுதுணையும் போல்வாரும் வாழ்வரே,
பட்டும் துகிலும் உடுத்து.

The senseless dressed in silks! Virtue quite another matter.

In the world surrounded by the (all–)embracing sea, merit is quite an indifferent matter! Under–standing ones are (poor); and even those of no understanding—who are like mere *palm tree tufts* and *brinjals*—live prosperously, clad in silks and rich garments. 264.

ये ज्ञानिवर्या भुवि ते दरिद्रा ये ज्ञानशून्या बहुभाग्यवन्तः।
दुकूलपट्टादिधराश्च ते स्युः नूनं भवेत्कारणमत्र पुण्यम् ॥२६४॥

ज्ञानी जो हैं जगत में, वे हैं नहीं धनवान।
ज्ञानशून्य जो लोग हैं, वे हैं वैभववान॥
दुकूल वस्त्रादि घर वे, होंगे विराजमान।
इसमें कारण एक हैं, नरकृत पुण्य महान ॥२६४॥

265. நல்லார் நயவ ரிருப்ப நயமிலாக்
கல்லார்க்கொன் றாகிய காரணம்,—தொல்லை
வினைப்பய னல்லது வேல்நெடுங் கண்ணாய்!
நினைப்ப வருவதொன் றில்.

Men fortunate who seem not to deserve it.

While pleasant folk and just abide (in poverty), you ponder why men unjust and ignorant have any joy. It is fruit of '*ancient deeds*' thou whose long eyes are darts:—to thoughtful mind no other cause occurs. 265.

गुणाढ्यविद्वान्न भवेद्धनाढ्यो धनाढ्यवान् स्याद् गुणहीनमूढ:।
न पूर्वपुण्यादपरं निदान-मस्त्यत्र कार्ये किल शूलनेत्रि! ॥२६५॥

शूलसदृश कटु लोचनी! गुणी तथा विद्वान।
ना होंगे संसार में, बहुधा ही धनवान॥
गुणाविहीन जन मुढ को, बहुधा विभूतिमान।
पूर्वपुण्य ही बीज हैं, कोई औ न निदान ॥२६५॥

266. நாறாத் தகடேபோல் நன்மலர்மேற் பொற்பாவாய்!
நீறாய் நிலத்து விளியரோ;—வேறாய
புன்மக்கள் பக்கம் புகுவாய்நீ பொன்போலும்
நன்மக்கள் பக்கம் துறந்து.

Fortune cursed.

O golden dame, that sittest like a scentless leaf on a beauteous flower! Die, and fall in ashes to the ground: thou enterest homes of worthless men of perverse mind, forsaking good men pure as gold. 266.

पद्मासने! स्वर्णमये! कुतस्त्वं गुणेन युक्तान् मनुजान् विहाय।
गुणैर्विहीनान् भजसे मनुष्यान् हे लक्ष्मि! भस्मीभव तेन हेतो: ॥२६६॥

पंकज पर आसीन औ, हेममयी हरि-दार।
तुम क्या सुशील मनुज को, करके अस्वीकार॥
गुण से विहीन मनुज को, करती हो स्वीकार।
इस कारण से तुम सदा, हो जाएँ भस्माकार ॥२६६॥

267. *நயவார்கண் நல்குரவு நாணின்று கொல்லோ;*
பயவார்கட் செல்வம் பரம்பப் பயின்கொல்;
வியவாய்காண் வேற்கண்ணாய் இவ்விரண்டும் ஆங்கே
நயவாது நிற்கும் நிலை.

Poverty with the good, and prosperity with the mean.

Has poverty, that bides with men of righteous, souls, no shame? Does wealth to ungenerous men stick like glue? O thou of dart–like eye, with wonder see that thus, no just discernment made, these two abide! 267.

परोपकारिष्वपि निर्धनत्वं परोपकारिष्वखिलार्थसत्त्वम्।
एतद् द्वयं तेषु वृथा विलज्जं तिष्ठत्यहो! शूलसमाक्षि! पश्य ॥२६७॥

शूलसदृश कटु लोचनी, जग की नीति निहार।
उसमें है धनहीनता, जो करता उपकार॥
उसमें है धनयुक्तता, जो करता उपकार।
अनुचित थल में उभय की, सत्ता है बेकार ॥२६७॥

268. *வலவைக ளல்லாதார் காலாறு சென்று*
கலவைகள் உண்டு கழிப்பர்—வலவைகள்
காலாறும் செல்லார் கருனையால் துய்ப்பரே
மேலாறு பாய விருந்து.

The self–dying and the self–indulgent.

Men who are not void of shame will travel forth on foot, and feed on scraps,—so pass their days; the shameless ones make no journeys on foot, but feed on dainties at home, perspiring over the feast. 268.

सन्तः सलज्जा विधनाः स्वपादैः गत्वैव भैक्ष्यान्नमदन्ति लब्ध्वा।
निर्लज्जमूढाः सधनास्तु दुग्धशाकायुतान्नं स्वगृहे ह्यदन्ति ॥२६८॥

निर्धन सज्जन दूर बहू, पैदल चल सह लाज।
भीख-मांग कर अशन हैं, करते खूब अनाज॥
विमूढ अमीर-गेह में, निवास कर बिनु लाज।
क्षीर युक्त भाजी सहित, खाते खूब अनाज ॥२६८॥

269. பொன்னிறச் செந்நெற் பொதியொடு மீள்வாட,
மின்னொளிர் வானம் கடலுள்ளும் கான்றுகுக்கும்;
வெண்மை யுடையார் விழுச்செல்வ மெய்தியக்கால்
வண்மையு மன்ன தகைத்து.

Misplaced liberality; rain on the sea.

While the red paddy's golden germ is parched within the ear and dies, the cloud gleaming with lightnings pours forth its treasures on the sea. When silly men gain ample wealth, even so are their liberal gifts bestowed! 269.

धान्याढचसस्यं तु विहाय दग्धं वर्षन्ति मेघा जलधौ यथैव।
मूर्खास्तथा भूरिधनागमे तु यच्छन्त्यपात्रे मनुजे तथैव ॥२६९॥

भूरि धान्ययुत सस्य जब, जाता ही है सूख।
तब धन तजकर सस्य-थल, बरसें दधि में खूब॥
वैसे विमूढ भूरि धन, पाते हैं निज हाथ।
तब वे वित्त कुपात्र को, दे करते अवसाद ॥२६९॥

270. ஓதியும் ஓதார் உணர்விலார் ஓதாதும்
ஓதி யனையார் உணர்வுடையார்;—தூய்தாக
கல்கூர்ந்தும் செல்வர் இரவாதார், செல்வரும்
கல்கூர்ந்தார் சயா ரெனின்.

The unintelligent never learn; the intelligent perceive without learning.

Men void of understanding, though they learn, learn not! Men of understanding, though unlearned are as men learned! They are rich, though utter paupers who never beg; the rich are paupers if they bestow nothing! 270.

विवेकशून्यस्य वृथा ह्यधीतिः विवेकिनोऽप्यध्ययनं वृथैव।
अयाचनं स्यात्किल भाग्यपूर्तिः आढचो ह्यदाता भविता दरिद्रः ॥२७०॥

विवेक विहीन को रहें, साक्षरता बेकार।
विवेकयुत को अध्ययन, समझा है बेकार॥
याचन विहीन को लगें, अभाव भाग्य समान।
धनी कृपण को जगत में, माना रिक्त समान ॥२७०॥

Ch.28. Absence of Charity; or, the miser.
२८. दुःखधर्माध्याय—दानविमुखता

271. கட்டார்க்கும் கள்ளா தவர்க்கும் உளவரையால்
அட்டது பாத்துண்டல் அட்டுண்டல்;—அட்ட
தடைத்திருந் துண்டொழுகும் ஆவதில் மாக்கட்கு
அடைக்குமாம் ஆண்டைக் கதவு.

Share your food with friends and foes. To the selfish heaven's gate is closed.

To eat your own meal, after sharing what you have cooked, to the extent of your ability, both with those who are friends and those who are not friends, is 'cooking and eating' (*=is real house-keeping).* To the good-for-nothing human beings whose habit of life it is shut themselves up and eat alone what they have cooked, the door of yonder world will be shut. 271.

पक्त्वा समेषां स्थितमल्पमन्नं प्रदाय भुक्तिर्भुवि भोजनं स्यात्।
एकान्तभोक्तुः पिहितस्वगेहे स्वर्गप्रवेशः किल वारितः स्यात् ॥२७१॥

पाचन कर सम भाग से, निज पर को जो अन्न।
अर्पित हो जग में वही, समझा जाता अन्न॥
घर में जो एकान्त में, करता है तो भोज।
उसको स्वर्ग किवाड की, नहि हो सकती खोज॥२७१॥

272. எத்துணை யாரும் இயைந்த அளவினால்
சிற்றறஞ் செய்தார் தலைப்படுவர்;—மற்றைப்
பெருஞ்செல்வர் எய்தியக்கால் பின்அறிதும் என்பார்
அழிந்தார் பழிகடலத் துள்.

Give what you can, when you can.

Whatever the measure be, those who do even lesser acts of charity to the measure of their power shall attain to excellence. But those who, when they have obtained great wealth, say 'we will be wise (*and girve*) by and by', are lost in a sea of guilt. 272.

ये सर्वथा शक्तचनुरूपमल्प-धर्मं तु कुर्युर्महिमान्वितास्ते।
"लभ्येत चेद्वित्तमथ प्रदद्या" मितीरयन्तो जननिन्दिताः स्युः ॥२७२॥

यथाशक्ति जो सर्वथा, होते हैं धर्मिष्ठ।
वे होंगे संसार में, महिमा सहित वरिष्ठ॥
मिलने पर धन दान कर, कहने वाले लोग।
जन निन्दित होंगे तथा, भोगेंगे भी शोक॥२७२॥

273. துய்த்துக் கழியான் துறவோர்க்கொன் றீகலான்
வைத்துக் கழியும் மடவோனை—வைத்த
பொருளும் அவனை நகுமே ; உலகத்
தருளும் அவனை நகும்.

The miser contemptible.

The senseless man who spends not time in enjoyment (of his wealth), and who gives nothing to pious devotees, but hoards and dies,—*him* his hoarded wealth derides; *him* all that is gracious in the world derides.

273.

स्वेनाप्यभुक्तं यतये न दत्तं निक्षिप्य वित्तं भुवि ये म्रियन्ते।
तान् लोभिनो वीक्ष्य तदेव वित्तं हसेद्, दयारूपगुणोऽपि तद्वत् ॥२७३॥

खुद धन का उपयोग बिनु, नहि कर पाते दान।
जो धन करते हैं जमा, औ होते म्रियमाण॥
उन कृपणों को देखकर, व्यंग्य करेगा वित्त।
और दयागुण प्राप्त कर, हंसी करेगा वित्त ॥२७३॥

274. கொடுத்ததூம் துய்த்தலும் இதற்கு இடுக்குடை
உள்ளத்தான் பெற்ற பெருஞ்செல்வம் இல்லத்
துருவைடைக் கன்னியரைப்போலப் பருவத்தால்
எதிலான் துய்க்கப் படும்.

The miser loses what he hoards.

The great wealth obtained by the man of straitened soul, who knows not how either to give or to enjoy, shall be enjoyed by a stranger, in due season—like lovely virgins remaining unmarried in the dwelling.

274.

दानं त्वकृत्वा स्वयमप्यभुक्त्वा सम्पादितं लोभिजनस्य भाग्यम्।
भुज्येत केनापि परेण लोके कुलोद्भवा सुन्दरकन्यकेव ॥२७४॥

दान न देकर और को, नहिं कर खुद उपभोग।
अर्जित धन का कृपण से, सम्यक ही उपयोग॥
जरूर कोई अन्य ही, करता है सुस्वाद।
अविवाहित कन्या यथा, अर्हणीय आस्वाद ॥२७४॥

275. எறிநீர்ப் பெருங்கடல் எய்தி யிருந்தும்
அறுநீர்ச் சிறுகிணற் றூறல்பார்த் துண்பர்;
மறுமை யறியாதா ராக்கத்தின் சான்றோர்
கழிநல் குரவே தலை.

Poverty better than the wealth of those who live for this world alone.

Though they have got the mighty sea with its dashing waves (to drink from), men wait for the stream slowly issuing from the little well, often dry, and drink there; so the exceeding poverty of the virtuous is preferable to the wealth of those who know not of the world to come. 275.

स्थितेऽपि नीराढ्यमहापयोधावीषत्स्रवत्कूपजलं पिबन्ति।
अज्ञातपुण्यार्जितभूरिवित्तात् वरा सतां नित्यदरिद्रतापि ॥२७५॥

यद्यपि रहता है निकट, सवीचि पारावार।
फिर भी जनता कूपजल, पीती स्रोताधार॥
दुर्जन-अर्जित वित्त से, बहु ही श्रेयोमान।
सज्जन की नित रिक्तता, सचमुच गरिमावान ॥२७५॥

276. எனதெனா தென்றிருக்கும் ஏழை பொருளை
எனதெனா தென்றிருப்பன் யானும்;-- தனதாயின்
தானும் அதனை வழங்கான் பயன்துவ்வான்;
யானும் அதனை அது.

Whose is the miser's wealth?

As to the property which the wretched churl claims saying 'It is mine, it is mine,' I too chime in with 'It is mine, it is mine;' for if it is his, he himself spends it not, nor enjoys the benefit of it; and I, too, neither spend nor enjoy it. 276.

उक्त्वा "ममेदं" त्विति लोभिना यत् सुरक्षितं वित्त, महं दरिद्रः।
"ब्रूयां ममे" त्येष ददाति नोऽर्थं अहं तु दद्यां, अत एव वच्मि ॥२७६॥

कृपण वित्त का व्यय नहीं, तो हो वही मदीय।
क्यों न दान उपभोग खुद, यदि हो वित्त तदीय॥
मैं तो खूब गरीब हूं, यदि रहता हो वित्त।
दान-भोग करता तभी, इसमें औ न निमित्त ॥२७६॥

277. வழங்காத செல்வரின் நல்கூர்ந்தார் உய்ந்தார்;
இழந்தார் எனப்படுதல் உய்ந்தார்—உழந்ததனைக்
காப்புய்ந்தார் கல்லுதலும் உய்ந்தார்தம் கைந்நோவ
யாப்புய்ந்தார் உய்ந்த பல.

Poor men better off than churls.

The poor have escaped much from which rich men that dispense not suffer.
they have escaped the reputation of having lost (their substance).
They have escaped the toil of saving it.
They have escaped (the labour of) digging (to hide it).
They have escaped the ache of hands securing it form powerful plunderers.
Many are the (sorrows) they have escaped. 277.

आढ्या ददातुस्त्वधनः सुखी स्यात् न चास्य दुखं धननाशमूलम्।
धनस्य रक्षा भुवि तन्निखात-मिथ्याव्ययादिव्यसनानि नास्य ॥२७७॥

कृपण धनी से नित सुखी, होगा रिक्त महान।
इसको होता दुख नहीं सुपद का अवसान॥
इसको सपद भूमि में, रखने का नहिं क्लेश।
और न होते जन्म भर, मिथ्या व्ययादि क्लेश ॥२७७॥

278. தனதாகத் தான்கொடான்; தாயத் தவரும்
தமதாய போழ்தே கொடாஅர்;—தனதாக
முன்னே கொடுப்பின் அவர்கடியார், தான்கடியான்
பின்னை அவர்கொடுக்கும் போழ்து.

Nothing but his own churlishness hinders the churl form being liberal.

While it was his he gave not; and his heirs, how it is theirs, give not. Before, while it was his, if he had given, they would not have reproved (him); and afterwards, if they had given, he would not have reproved them! Men's own avarice is the sole reason for the lack of charity.

278.

आढ्यो न दद्यात् स्वयमाप्य तस्मात् ज्ञातिश्च वित्तं न हि दातुमिच्छेत्।
न वारयेज्ज्ञातिरमुं तु दानात् ज्ञातिं धनी दानपरं न रुन्ध्यात् ॥२७८॥

स्वार्जित धनयुत मनुज नहि, करता पर को दान।
लब्धवित्त की ज्ञाति नहि, चाहे करने दान॥
अगर धनी हो दानपर, तो रोकेगा कौन।
दानशील यदि ज्ञाति हो, तो रोकेगा कौन ॥२७८॥

279. இரவலர் கன்றாக ஈவாரா வாக
விரகின் சுரப்பதாம் வண்மை;—விரகின்றி
வல்லவர் ஊன்ற வடியாபோல் வாய்வைத்துக்
கொல்லச் சுரப்பதாம் கீழ்.

Those wanting in liberal instinct give only on compulsion.
Liberality is that which yields its gifts spontaneously (from good instinct), the askers being as the calf and the givers as the cow; meanness yields only when put into a strait and forced, as a cow with no good instinct gives a scanty supply ( ) when strong ones press. 279.

गोरूपदात्रा मुदितेन चार्थि-वत्साय दानं भुवि लक्ष्यदानम्।
बलाद्गवां दोहनवत्प्रयत्न-पूर्वप्रदानं भुवि निन्दितं स्यात् ॥२७९॥

गाय-रूप दाता अगर, करे खुशी से दान।
याचक रूपी वत्स को, तो वह हो वरदान॥
बलात्कार से गाय को, दोहन कार्य समान।
निंदित होगा जगत में, प्रयत्न मूलक दान ॥२७९॥

280. ஈட்டலும் துன்பமற் றீட்டிய ஒண்பொருளைக்
காத்தலும் ஆங்கே கடுந்துன்பம்;—காத்தல்
குறைபடின் துன்பம் கெடின்துன்பம் துன்பக்
குறைபதி மற்றைப் பொருள்.

Wealth is the source of many sorrows.
Gathering it together is trouble, and even so the guarding of resplendent wealth is severe trouble. If the guarded heap diminish, it is trouble. If it perish, it is trouble. Wealth is trouble's very dwelling–place! 280.

धनार्जने दुःखमवाप्तवित्त-संरक्षणे दुःखमथास्य नाशे।
दुःखं भवेद्रक्षणकर्मलोपे सर्वात्मना दुःखमयं धनं स्यात् ॥२८०॥

धन के अर्जन में सदा, दिल में होता क्लेश।
अर्जित धन के त्राण में, मन में होता क्लेश॥
धन-पालन के लोभ में, होता है भी क्लेश।
रीति सभी से वित्त हो, सदैव कारक क्लेश ॥२८०॥

Ch. 29. Poverty.

२९. अभाव

281. அத்திட்ட கூறை அரைச்சுற்றி வாழினும்
பத்தெட் டுடைமை பலருள்ளும் பாடெய்தும்;
ஒத்த குடிப்பிறந்தக் கண்ணுமொன் றில்லாதார்
செத்த பிணத்திற் கடை.

Money commands respect.

Though he wraps a cloth dyed red around his loins, a dozen coins or so, will gain (the wretch) respect among many men! The man devoid of wealth, though born of noble race, is viler (in the world's estimation) than a lifeless corpse! 281.

काषायवस्त्रा यतिनोऽल्पवस्तु-सद्भावमात्रात्प्रथिता भवन्ति।
वरिष्ठवंशे जनिताश्च वित्त-नाशे शवादप्यधमा भवन्ति ॥२८१॥

काषायवस्त्रधर लोग यति, अगर रखे लछमाल।
तो जनता के बीच वे, नामी हो यशपाल॥
ऊंचे कुल में जनित में, यदि अभाव से ग्रस्त।
हो तो वे निर्जीवसम, होंगे नीचग्रस्त ॥२८१॥

282. நீரினும் நுண்ணிது நெய்யென்பர், நெய்யினும்
யாரும் அறிவர் புகைநுட்பம்;—தேரின்,
நிரப்பிடும்பை யாளன் புகுமே, புகையும்
புகற்கரிய பூழை நுழைந்து.

The insinuating mendicant.

Where water cannot enter! the more insinuating *ghi* glides in; and smoke as a subtler power to penetrate than even *ghi*. If you look into it, the man debased by poverty will enter haunts where smoke scarce finds a way. 282.

धृतं जलादप्यतिसूक्ष्मवस्तु धूमो घृतादप्यतिसूक्ष्मरूपः।
सुसूक्ष्मधूमैरपि चाप्रवेश्य-रन्ध्रं दरिद्राः प्रविशन्ति शीघ्रम् ॥२८२॥

घी जल से संसार में माना है अतिसूक्ष्म।
घी से तो जग में धूआं, समझा है अतिसूक्ष्म॥
अधिक सूक्ष्मतम धूप का, जहां न हो परवेश।
याचक जनता तो वहां, करती है परवेश ॥२८२॥

283. கல்லோங் குயர்வரைமேற் காந்தள் மலராக்கால்
செல்லாவாம் செம்பொறி வண்டினம்;—கொல்லைக்
கலாஅல் கிளிகடியுங் கானக நாட!
இலாஅ அர்க் கில்லை தமர்.

All abandon the needy.

When on the high hill's crags the *Kanthal* blooms no more, the crimson spotted beetle tribe seek not its boughs;—Lord of the hills wherefrom they scare parrots with stones!—*the needy have no kin.* 283.

शिलोच्चशैलस्थविकासहीन-'कान्तळ्' प्रसूनं भ्रमरा न यान्ति।
स्वीयास्तथा यान्ति न रिक्तबन्धु शुकाकुलारण्यसुदेशपाल! ॥२८३॥

तोताकुल वन विभवयुत, सुदेश का परिपाल।
ऊंचे गिरिस्थ अविकसित, "कान्तळ" प्रसूनजाल॥
आश्रित नहिं है भ्रमर के, तथैव रिश्तेदार।
वित्तहीन की तरफ तो, लेते नहीं निहार ॥२८३॥

284. உண்டாய போழ்தின் உடைந்துழிக் காகம்போல்
தொண்டா யிரவர் தொகுபவே;—வண்டாய்த்
திரிதருங் காலத்துத் தீதிலிரோ என்பார்
ஒருவரும் இவ்வுலகத் தில்.

Time–serving friends.

When wealth is there, obsequious myriads will assemble, like crows around the fallen corpse. When wealth, as the beetle wheels it,s flight, is gone, no one in all the world will ask, 'Is it well with you? 284.

धनार्थमाढ्यं बहवो विनीताः प्रयान्ति काकास्तु शवं यथैव।
अवाप्य दारिद्र्यमटन्तमेनं "किं त्वं सुखी वे" ति न कोऽपि पृच्छेत्
॥२८४॥

विनीत होकर अधिक जन, जाते धनिक निवास।
जैसे जाते काक हैं, मृतशरीर के पास॥
गरीब बन वह यदि फिरे, तो उसका हितवाद।
कोई करता ही नहीं, यह है निर्धन वाद ॥२८४॥

285. பிறந்த குலம்மாயும்; பேராண்மை மாயும்;
சிறந்ததங் கல்வியும் மாயும்;—கறங்கருவி
கல்மேற் கழூஉம் கணமலை நன்னாட!
இன்மை தழுவப்பட் டார்க்கு.

Nothing benefits the poor man.

Lord of the pleasant land of clustering hills whose crags are washed by sounding waterfalls!—Their race is nought, their manly prowess is nought, their rare learning is nought, when men are held in poverty's embrace. 285.

कुलीनता नश्यति वीरतापि विद्यापि नश्येद्धनहीनपुंसाम्।
अधःपतत्प्रस्रवणात्तपूत-नानानगालंकृतदेशपाल! ॥२८५॥

निर्झर निपात वेग से, गतमन गिरि थल-पाल।
कुलीनता तब हो वृथा, जब नहि कर में माल॥
वित्तहीन यदि नर रहें, तो पौरुष बेकार।
अर्थहीन यदि जन रहें, तो विद्या बेकार ॥२८५॥

286. உள்கூர் பசியால் உழைநசைஇச் சென்றார்கட்
குள்ளூ ரிருந்துமொன் றாற்றாதான்,—உள்ளூர்
இருந்துயிர் கொன்னே கழியாது தான்போய்
விருந்தின னாதலே நன்று.

Let the churl become a guest of others!

Although he dwells within the village, and sees the poor draw nigh with hungry soul desiring aid, he yields them none: why then in the village does he vainly pass his days? It were better he went to be a guest himself! 286.

क्षुद्बाधया स्वान्तिकमागतानां ग्रामे वसन्तोऽप्युपकारमल्पम्।
कुर्वन्ति ये नैव, विहाय गेहं तेऽन्यत्र जीवन्तु विधाय भैक्ष्यम् ॥२८६॥

पीडित जनता भूख से, निज समीप आ जाय।
तो जो जनता ग्राम की, अगर न करें सहाय॥
ऐसी जनता गेह तज, और कहीं चल जाय।
जीवन यापन के लिए, भीख मांग रह जाय ॥२८६॥

287. நீர்மையே யன்றி நிரம்ப எழுந்ததங்
கூர்மையு மெல்லாம் ஒருங்கிழப்பர் ;—கூர்மையின்
முல்லை அகிலக்கும் எயிற்றாய் ; நிரப்பென்னும்
அல்லல் அடையப்பட் டார்..

Poverty ruins all.

O thou whose teeth vie in sharpness with jasmine buds!—When sharp distress of poverty assails, men lose all their attributes of goodness at once, with the mind's acuteness gained from amplest stores of wisdom. 287.

दारिद्र्यदुःखाकुलमानवानां गुणेन साकं निशिता च बुद्धिः।
नश्यन्त्यनन्तानि यशांसि लोके सुजातिपुष्पोपमदन्तयुक्ते! ॥२८७॥

सुजाति कुसुम समान सित, दान्तयुक्त ओ नार।
अभाव पीडित मनुज-मति, पाती है संहार॥
निर्धनतायुत मनुज का, गुण होता है नष्ट।
औ अनेक यश आदि भी, हो जाते हैं नष्ट ॥२८७॥

288. இட்டாற்றுப் பட்டோன் றிரந்தவர்க் காற்றாது
முட்டாற்றுப் பட்டும் முயன்றுள்ளூர் வாழ்தலின்
நெட்டாற்றுச் சென்று நிரைமனையிற் கைநீட்டுங்
கெட்டாற்று வாழ்க்கையே நன்று.

The struggle with want.

Better indeed is the life that pertains to the ruinous course( ) that going far away ( ), stretches out (supplicating) hand at every door, than to dwell at home( ) toiling, subject to ( ) obstacles ( ), not giving aught to those that ask, because of straitened circumstances. 288.

रिक्तस्य याच्ञार्थमुपागतस्य साह्यं ह्यकृत्वा निजरक्षणार्थम्।
स्वग्रामवासाद्बहुदूरमेत्य गेहेषु भैक्ष्याटनमुत्तमं स्यात् ॥२८८॥

भीख मांगते रिक्त का, करता जो न सहाय।
और सदा करता रहे, अपना आत्मसहाय॥
ग्रामवास से दूर वहु, बाहर जा वह भीख।
मांगे तो हर गेह में, यह है अच्छी सीख ॥२८८॥

289. கடகம் செறிந்ததங் கைகளால் வாங்கி
அடகு பறித்துக்கொண் டட்டுக்—குடைகலனு
உப்பிலி வெந்ததின் றுள்ளற்று வாழ்பவே,
துப்புரவு சென்றுலந்தக் கால்.

Reverses.

The hands once loaded with golden bracelets now cull the forest-herb and cook the meal; and then eat the mess unseasoned, from a palm-leaf for a dish! Thus sad at heart they live, when fortune is gone and ruin come. 289.

छित्वा तु शाकं वलयाढ्यहस्तैः पक्त्वा सुपात्रे लवणं विनैव।
कराख्यपात्रे प्रणिधाय भुक्त्वा जीवन्त्यतुष्टा सति वित्तनाशे ॥२८९॥

वलय-विभूषित हाथ से, लेकर भाजी शाक।
बरतन में रखकर पका, बिन सैन्धव का भाग॥
हाथ पात्र में रख उसे, खाते हैं कुछ लोग।
समय बिताते और हैं, सहकर दारिद-शोक ॥२८९॥

290. ஆர்த்த பொறிய அணிகிளர் வண்டினம்
பூத்தொழி கொம்பின்மேற் செல்லாவாம்;—நீர்த்தருவி
தாழா உயர்சிறப்பின் தண்குன்று நன்னாட!
வாழாதார்க் கில்லை தமர்.

Interested friends.

The humming spotted beetle tribes all bright in hue gather not on the branch that has ceased to blow. Lord of the good cool hilly land, of high renown, whence bounteous streams flow down unceasingly—*The unprosperous have no kin!* 290.

सबिन्दुकाया भ्रमरा मनोज्ञाः विपुष्पशाखा न यथा भजन्ते।
रिक्तं तथा बन्धुजना न यान्ति जलाढ्यशैलान्वितदेशपाल! ॥२९०॥

जलपूरित शीतलकरी, शैलयुक्त थल-पाल।
मनमोहक निज देह में, बिन्दुयुक्त अलि-जाल॥
विपुष्प शाखा निकट नहि, जाते हैं जिस भांति।
रिक्त-निकट भी बन्धुजन, जाते नहि उस भांति ॥२९०॥

Ch.30. Honour (Self–respect.)

३०. मान

291. திருமதுகை யாகத் திறனிலார் செய்யும்
பெருமிதங் கண்டக் கடைத்தும்—எரிமண்டிக்
கானந் தலைப்பட்ட தீப்போற் கனலுமே,
மான முடையார் மனம்.

Honourable minds are wroth with wealthy arrogance.
The mind of those possessed of honourable feeling will kindle into flame, like the fire that has caught the forest when the conflagration rages, whenever they behold the haughty acts of those who are destitute of virtuous habits, and to whom their wealth is their only strength. 291.

धनाभिमानाद् गुणहीनमर्त्य-कृतान्यकृत्यानि समीक्ष्य लोके।
दग्धाटवीवह्निसमानमेषां चित्तं क्वथेन्मानवतां नराणाम् ॥२९१॥

वित्तगर्व से गुणरहित, नरकृत कुकृत्य जाल।
लखकर मानी सृजन का, मानस हो विकराल॥
दावानल वन भर यथा, ज्वालायुत हों जाय।
तथा सुजन का चित्त भी, विदग्ध ही हो जाय ॥२९१॥

292. என்பாய் உகினும் இயல்பிலார் பின்சென்று
தம்பா டுரைப்பரோ தம்முடையார்;—தம்பா(டு)
உரையாமை முன்னுணரும் ஒண்மை யுடையார்க்(கு)
உரையாரோ தாமுற்ற நோய்.

High–minded men complain not to the unsympathizing.
Will (honourable men who are) 'masters of themselves' follow graceless men to tell of their sufferings, though fallen away to mere skeletons?
Do they not (rather) tell the pain they have felt to those enlightened souls that understand their sufferings before they speak? 292.

कृशोऽपि मानी गमितास्थिशेषो ब्रूयान्न खेदं गुणवर्जितेभ्यः।
बुध्वा व्यथां पूर्वमथोपकर्तृ-बुधाय खेदं स्वयमीरयेच्च ॥२९२॥

अस्थिशेष औ कृशतनू, जग में मानी लोग।
गुणवर्जित नर से कभी, न वताते हैं शोक॥
व्यथा जानकर पूर्व ही, सहाय हैं जो लोग।
ऐसे बुध से शोक खुद, कहते मानी लोग ॥२९२॥

293. யாமாயின் எம்இல்லம் காட்டுதும் தாமாயின்
காணவே கற்பழியும் என்பார்போல்—நாணிப்
புறங்கடை வைத்தீவர் சோறும் அதனால்
மறந்திடுக செல்வர் தொடர்பு.

Dependence on the wealthy destroys self-respect.

As for ourselves we would introduce them (these friends) to our household: but as regards them, they are ashamed (of us), as though they said, as soon as they (the ladies) saw them (the friends) it would be the destruction of their womanly reserve; and so they seat us at the backdoor and give us rice! Therefore let us dismiss all thought of rich men's friendship. 293

वयं दरिद्रास्त्वतिथीन् स्वगेहे प्रवेशयामः प्रभवः किलास्मान्।
निक्षिप्य गेहाद्बहिरेव नोऽन्नं यच्छन्ति मैत्रीं त्यज वित्तविद्भिः।२९३॥

गेह बुलाकर अतिथि को, गरीब हम ही लोग।।
करते हैं सत्कार औ, देते भी सुख-भोग॥
घर के बाहर ही हमें, वे देते हैं अन्न।
धनी-मित्रता छोड़ दें, नित हम सभी विपन्न ॥२९३॥

294. இம்மையும் நன்றாம் இயல்நெறியும் கைவிடா
உம்மையும் நல்ல பயத்தலால்,—செம்மையின்
நானம் கமழும் கதுப்பினாய்! நன்றேகாண்,
மான முடையார் மதிப்பு.

The law of honour is that maintained by honourable men.

O thou whose locks diffuse the odour of pleasant musk! Behold, especially good is (it to cultivate) that which is esteemed by men of honourable mind; for in this world it is (obviously) good: and, since it leads to perseverance in the way of virtue, it will yield good things in yonder world also. 294.

तन्मानिनां गौरवमत्र लोके वर्धेत, सन्मार्गपथानुवृत्त्या।
तत्पुण्यहेतोः परलोकलाभः कस्तूरिकामोदसुकुन्तलाढ्ये! ॥२९४॥

कस्तूरी सम गंधयुत, कुन्तल धारी नार।
मानी का गौरव तथा, बढ़ता है उपचार॥
इतना ही नहि साधु के, दुखद दुरित-कृतिजाल।
जाने से मिलना सुलभ, होगा स्वर्गद्वार ॥२९४॥

295. பாவமும் ஏனைப் பழியும் படவருவ
சாவினும் சான்றவர் செய்கலார் ; சாதல்
ஒருநாள் ஒருபொழுதைத் துன்பம் அவைபோல்
அருநவை யாற்றுதல் இன்று.

Dishonour worse than death.

The men 'fulfilled of excellence,' though death were the alternative, do not deeds that entail sin and guilt.
Death is an affliction for one day, and for a little while. there is nothing that works irreparable ill like those (deeds). 295.

पापापवादप्रदकार्यजातं सन्तो न कुर्युर्मरणान्तिकेऽपि।
स्यान्मृत्युना ह्येकदिने क्षणैक-दुःखं तु, दुष्कृत्यभवं स्थिरं स्यात् ॥२९५॥

सज्जन करते तो नहीं, दुखद दुरित-कृतिजाल।
चाहे उत्थित जाय हो, देहावसान-काल॥
होगा इकदिन मरण का, क्षणैक मूलक शोक।
परन्तु होगा पाप से, उत्थित हो चिर शोक॥२९५॥

296. மல்லன்மா ஞாலத்து வாழ்பவ ருள்ளெல்லாம்
செல்வ ரெனினும் கொடாதவர் நல்கூர்ந்தார்
நல்கூர்ந்தக் கண்ணும் பெருமைத் தரையரே,
செல்வரைச் சென்றிரவா தார்.

The wealthy and the poor.

Poor are the men that give not, even though deemed wealthiest of all that flourish on the teeming ample earth! They who even when they are poor seek not as suppliants wealthy men are 'Lords of the three mighty lands.' 296.

सत्वेऽपि वित्ते भुवि ये न दानं कुर्वन्ति ते स्युर्नितरां दरिद्राः।
दारिद्र्यकाले धनिकानुपेत्य ये नार्थयन्ते धनिका मतास्ते ॥२९६॥

धनी मनुज जो जगत में, करते नहि हैं दान।
माने जाते हैं वे मनुज, निर्धन मनुज समान॥
धनी-गेह जाते नहीं, अभाव में जो लोग।
माने जाते सर्वदा, हैं अमीर वे लोग ॥२९६॥

297. கடையெலாம் காய்பசி அஞ்சுமற் றேனை
இடையெலாம் இன்னாமை அஞ்சும்—புடைபரந்த
விற்புருவ வேல்நெடுங் கண்ணாய்! தலையெல்லாம்
சொற்பழி அஞ்சி விடும்.

The honourable dread most the loss of reputation.

Thou who hast long dart–like eyes with eye–brows extending far, like a bow! the lowest class of men dread burning hunger; the other (or middle class) dread what is unpleasant; all the chief of men fear words that impute crime. 297.

बुभुक्षया बिभ्यति चाधमास्तु तन्मध्यमाः बिभ्यति दुःखहेतोः।
निन्दाकृते बिभ्यति चोत्तमास्तु चापायतभ्रूमति! शूलनेत्रि! ॥२९७॥

चापायत भृकुटी सहित, शूललोचनी नार।
प्यास भूख से भीत हैं, निकृष्ट ही नर-नार॥
शोक हेतु से भीत हैं, मध्यमवर्गी लोग।
निन्दा से भयभीत हैं, उत्तम वर्गी लोग ॥२९७॥

298. நல்லர் பெரிதளியர் நல்கூர்ந்தார் என்றெள்ளிச்
செல்வர் சிறுநோக்கு நோக்குங்கால்—கொல்லன்
உலையூதும் தீயேபோல் உள்கனலும் கொல்லோ
தலையாய சான்றோர் மனம்.

The rich man's contemptuous pity.

When the very worthy and thoroughly learned see the rich men's glance of disparagement, as they say contemptuously, 'These are good people—poor folks,' does not their mind kindle into flame within them, like the fire by the breath of the bellows on the blacksmith's forge? 298.

"अयं दयावानधनो गुणी" ति निर्दिश्य निर्लक्ष्यधिया धनाढ्यैः।
उक्ते तु चित्तं महतां दहेद्धि यथा त्वयोगोलभवाग्नितुल्यम् ॥२९८॥

"दयावान निर्धन गुणी, यह" यों ही धनवान।
जब कहते हैं देखकर, होकर असावधान॥
सज्जन का मानव तभी, होगा सुदह्यमान।
अयोगगोल में धधकती, समीर-सखा-समान ॥२९८॥

299. நச்சியார்க் கீயாமை நாண் அன்று ; நாள்நாளும்
அச்சத்தால் நாணுதல் நாண் அன்றாம்;—எச்சத்தில்
மெல்லிய ராகித்தம் மேலாயார் செய்தது
சொல்லா திருப்பது நாண்.

What is dishonouring.

It is not *shame (disgrace)* not to (be able to) give to those who desire it of us. The shrinking on account of fear (felt) day by day is not *shame* (modesty). But to become reduced in other ways, and not to [dare to] tell what injuries those who love us not have inflicted on us is *shame (disgrace*, or *self–respect).* *299.*

अर्थिष्वदानं न भवेद्धि लज्जा भीतिश्च भेतव्यकृतौ न लज्जा।
क्लेशे च वित्ताढचकृतोपकार-प्रचारकार्याद्विरतिर्हि लज्जा ॥२९९॥

याचक को ना दान तो, नहि हो लज्जाहेतु।
शुभ अवसर में त्रास नहि, सचमुच लज्जाहेतु॥
संकट में धनवानकृत, सहाय रखना गुप्त।
सचमुच लज्जाहेतु है, तुम जानो यह गुप्त ॥२९९॥

300. கடமா தொலைச்சிய கானுறை வேங்கை
இடம்வீழ்ந்த துண்ணா திறக்கும்;—இடமுடைய
வானகம் கையுறினும் வேண்டார் விழுமியோர்,
மானம் அழுங்க வரின்.

Heaven itself must not be sought at the expense of honour.

The jungle–haunting tiger that slays the wild cow, refuses to eat and passes by what has fallen (of itself) in its path (i,e,carrion); so the excellent, though the wide realms of heaven were within their reach, would not desire them, if to be obtained (only) by the loss of honour. 300.

स्वर्लोकभोगानुभवं च सन्तो नेच्छन्ति मानेन बिना यदाप्तम्।
स्ववामभागे पतितं च हत्वा व्याघ्रो न भुञ्जीत यथैव जन्तुम् ॥३००॥

स्वर्ग लोक सुख भोग भी, सुलब्ध बिनु संमान।
नहीं चाहते हैं कभी, जग के मनुज सुजान॥
खुद मारित मृग भूल से, वाम भाग गिर जाय।
तब भी खाये बिन उसे, क्षुधित बाघ रह जाय॥३००॥

Ch. 31. The Dread of Mendicancy.

३१. याचना से डरना

301. நம்மாலே வாழ்வரிந் நல்கூர்ந்தார் எஞ்ஞான்றுந்
தம்மாலாம் ஆக்கம் இலரென்று—தம்மை
மருண்ட மனத்தார்பின் செல்பவோ தாமும்
தெருண்ட அறிவி னவர்.

Ignorant condescending patrons.

Will men themselves possessed off clear discerning knowledge follow after those who have yielded themselves up to mental bewilderment, and who (erroneously) say (of suppliants), 'These poor folks depend entirely on us, evermore are they without resources in themselves? 301.

"मयैव रिक्तोऽयमभूद्धनाढ्यो नायं स्वयत्नाद्धनवान् बभूव"।
उक्त्वेत्यमात्मस्तुतिलम्पटानां पश्चाद् बुधा यान्ति न वित्तहेतोः ॥३०१॥

यह गरीब अमीर बना, कारण तो मैं एव।
निजी यत्न से वित्त यह, पाने अनर्ह एव॥
यों निजशंसक मनुज हैं, उनके पथानुसार।
बुधजन जाते हैं नहीं, पैसे के आधार ॥३०१॥

302. இழித்தக்க செய்தொருவன் ஆர உணலின்
பழித்தக்க செய்யான் பசித்தல் தவறோ
விழித்திமைக்கு மாத்திரை யன்றோ? ஒருவன்
அழித்துப் பிறக்கும் பிறப்பு.

Honest nunger and dishonest fulness of food.

Is not man's dying and birth again measured by the twinkling of an eye? Is it then a fault if a man rather choose to suffer hunger, doing no blameworthy actions, than to feed full, doing things that entail disgrace? 302.

विनिन्द्यकार्यादुदरस्य पूर्तेः निन्द्यं त्वकृत्वा मरणं गरीयः।
मृतो जनित्वा पुनरेव देहं प्राप्नोत्यहो नेत्रनिमेषकाले ॥३०२॥

करके निन्दित काम यदि, उदर भरण हो जाय।
उससे तो यह हो भला, मरण-वरण हो जाय॥
मृत तो फिर औ देह में, लेता है अवतार।
तन से महान मान है, बिना मान बेकार ॥३०२॥

303. இல்லாமை கந்தா இரவு துணிந்தொருவர்
செல்லாரு மல்லர் சிறுநெறி ;—புல்லா
அகம்புகுமின் உண்ணுமின் என்பவர்மாட் டல்லால்
முகம்புகுதல் ஆற்றுமோ மேல்?

Ask only of the courteous.

There will never be wanting those who, with their, destitution as their support (*making it their excuse*), will venture upon mendicancy, and tread the way of humiliation; but will the noble-minded man enter (*as a suppliant*) the presence of any save of those who will embrace him and say, 'Enter my dwelling, eat of my food?' 303.

दारिद्र्यहेतोर्मनुजस्य नीच-भैक्ष्ये प्रवृत्तिः सहजा, तथापि।
"आलिंग्य गेहं प्रविशन्तु भोक्तुं" इत्युक्तवत्सद्म बुधा विशेयुः ॥३०३॥

अभाव के कारण मनुज, हेयवृत्तिमय भीख।
अपनाता है जगत में, इस में नहीं अलीक॥
प्रवेश करते हैं सुधी, उसके हो तो गेह।
जो कहता—"आश्लेष कर, खाने आवे गेह" ॥३०३॥

304. திருத்தன்னை நீப்பினும் தெய்வம் செறினும்
உருத்த மனத்தோ டுயர்வுள்ளி னல்லால்,
அருத்தம் செறிக்கும் அறிவிலார் பின்சென்
றெருத்திறைஞ்சி நில்லாதாம் மேல்.

No reverses bend the noble spirit.

Though fortune forsake him, and fate frown, the man of lofty soul, dwelling with steadfast mind on things above, disdains to stand with bending neck in the train of the foolish who hoard their wealth. 304.

त्यक्तोऽपि दैवेन विनष्टभाग्यः क्रोधान्निजश्रैष्ठ्यमनुस्मरन् सः।
धनार्जनव्यग्रजडानुपेत्य नम्रोत्तमाङ्गेन महान्न तिष्ठेत् ॥३०४॥

भाग्यहीन महान मनुज, लक्ष्मीकृपा-विहीन।
क्रोधित होकर सोचता, गौरव अपनाधीन॥
धन के अर्जन में निरत, विमूढ नर के गेह।
जाकर नतसिर नहि खड़ा, होगा निस्संदेह ॥३०४॥

305. கரவாத திண்ணன்பின் கண்ணன்னார் கண்ணும்
இரவாது வாழ்வதாம் வாழ்க்கை ;—இரவினை
உள்ளுங்கால் உள்ளம் உருகுமால், என்கொலோ
கொள்ளுங்கால் கொள்வார் குறிப்பு.

Mendicancy is always painful.

To live asking naught even from those dear as an eye, whose love is sure, and who never refuse, is happy life. since the mind dissolves in shame at the very thought of beggary,—when men receive alms, what are the receivers' thoughts, I pray? 305.

प्रेम्णा प्रदातुर्महतोऽन्तिकेऽपि याच्ञां विना जीवनमुत्तमं स्यात्।
स्मृतैव यच्ञा हृदयं दहेच्चेत् याच्ञाकृतां चित्तगतिः कथं स्यात्? ॥३०५॥

सनेह-दाता मनुजवर, यदपि रहें निज साथ।
तो भी जीना भीख बिन, होगा विशेषजात॥
याचन की स्मृतिमात्र से, दिल में होता ताप।
याचन करते समय तो, कैसा होगा ताप ॥३०५॥

306. இன்று இயைக இனிய ஒழிகென்று
தன்னையே தானிரப்பத் தீர்வதற்கு—என்னைகொல்
காதல் கவற்றும் மனத்தினால் கண்பாழ்பட்
டேதி லவரை இரவு.

Contentment better than mendicancy.

When a man himself, begs of himself, saying, 'Let troubles come, let joys depart!' the sting of poverty is extracted; why then, for this purpose, should any one, his mind agitated with desire, and his eye wasted with weeping, beg of strangers? 306.

"आयान्तु दुःखानि सुखानि यान्तु" चेत्यात्मिका चित्तगतिर्यदा स्यात्।
दैन्यं स्वयं नश्यति तेन, कस्मात् भैक्ष्ये प्रवृत्तिः परगेहमेत्य ॥३०६॥

"आयें पीडा-शोक दुख, हर्ष भोग चल जाय"।
यों सुमिरन कर चित्त की, अगर दशा हो जाय॥
निर्धनता का आप तो, होता है अवसान।
किससे होगी भीख फिर, जाकर और मकार ॥३०६॥

307. என்றும் புதியார் பிறப்பினும் இவ்வுலகத்
தென்றும் அவனே பிறக்கலான்—குன்றின்
பரப்பெலாம் பொன்னொழுகும் பாய்அருவி நாட!
இரப்பாரை எள்ளா மகன்.

Beggars are universally despised.

Lord of the land where gold is borne down by rushing waterfalls from every hilly slope!—Though in this world new (kinds of) men are continually born, that very man is never born that does not scorn mendicants. 307.

भवन्त्यजस्रं भुवि नूत्नमर्त्याः किन्त्वर्थिनिन्दारहितो मनुष्यः।
जनिं विना मुक्तिमुपैति, शैलस्वर्णानयन्निर्झरदेशपाल! ॥३०७॥

पहाड निर्झर हेमयुत, प्रदेश का अधिराज।
लेता है जग में जनम, अजस्र मनुज-समाज॥
मगर मनुज कोई अगर, अर्थी निन्दाहीन।
जो तो वह बिन जन्म हो, वियुक्त हो भवहीन ॥३०७॥

308. புறத்துத்தன் இன்மை நலிய அகத்துத்தன்
நன்ஞானம் நீக்கி நிறீஇ ஒருவனை
ஈயாய் எனக்கென் றிரப்பானேல் அந்நிலையே
மாயானோ மாற்றி விடின்.

Mendicancy is unmitigated misery.

What wastes his outward frame; he lays aside wisdom, his inward being's good; and so resolving, begs of some stranger, saying, 'Give to me.'—If then the boon be refused, must he not that very instant die? 308.

दीनः प्रभाहीनशरीरयुक्तो विनष्टबुद्धिः समवाप्य मोहम्।
'देही' ति पृष्ट्वाऽथ निराकृतश्चेत् तत्रैव मृत्युं किमु नाप्नुयात् स ।३०८॥

शोभा-विहीन देहयुत, होकर सन्मतिहीन।
ज्ञानशून्ययुत मोह ही, पाकर सदैव हीन॥
दान मांगकर धनिक से, यदि निराश हो जाय।
उसका तो तत्काल ही, क्यों न निधन हो जाय॥३०८॥

309. ஒருவ ரொருவரைச் சார்ந்தொழுகல் ஆற்றி
வழிபடுதல் வல்லுத லல்லால்,—பரிசழிந்து
செய்யீரோ என்னும் என்றுஞ்சொற் கின்னாதே
பையத்தான் செல்லும் நெறி?

A hermitage preferable to mendicancy.

Men form close intimacies with others and live as their dependants, and this is permissible; but is it more painful quietly to go one's way *(to the hermitage)* than, lost to all sense of personal dignity, to say, 'Will ye not do aught for me?' 309.

धनाढ्यमालम्ब्य विनीतवृत्त्या दीनस्य वृत्तिः सहजा, तथापि।
निर्लज्जमस्मिन् मम देहि किञ्चित् इत्युक्तितः सौख्यकरी च याच्ञा॥३०९॥

अमीर का आलम्ब कर, सदैव अन्याधीन।
रहता है संसार में, विनयसहित ही दीन॥
मददगार जब नहि धनी, तब बिनु लज्जा भीख।
मांगना उचित नहि भला, अभाव सुखकर सीख ॥३०९॥

310. பழமைகந் தாகப் பசைந்த வழியே
கிழமைதா மியாதானுஞ் செய்க;—கிழமை
பொறாஅர் அவரெனிற் பொத்தித்தம் நெஞ்சத்து
அறாஅச் சுடுவதோர் தீ.

Relieve the wants of old friends.
though they shrink from it.

Relying on old friendship, in an affectionate manner, render such assistance as your intimacy warrants. If he will not endure (the assistance), will it not be a fire heaped up and burning in his bosom? 310.

सुज्ञातपूर्वाय सुहृद्वराय प्राप्ताय साह्यं ध्रुवमेव कार्यम्।
स्वयं न कुर्याद्यदिहागताय तच्चित्तसन्तापकवह्निवत् स्यात् ॥३१०॥

सम्यक परिचित मित्रवर, अगर गेह आ जाय।
तो करना ही चाहिए, उसका एव सहाय॥
ना तो आगत मित्र के, मन में वह असहाय।
जमकर तापद आग सम, होगा अनिष्ट दाय ॥३१०॥

Ch. 32.The Knowledge of the Assembly.

३२. सामान्यधर्माध्याय–सभातत्त्व-परिज्ञान

311. மெய்ஞ்ஞானக் கோட்டி உறழ்வழி விட்டாங்கோர்
அஞ்ஞானந் தந்திட் டதுவாங் கறந்துழாய்க்
கைஞ்ஞானங் கொண்டொழுகுங் காரறி வாளர்முன்
சொன்ஞானம் சோர விடல்.

Cast not pearls before swine.

Decline entirely to utter words of wisdom before heretics(= men of darkened knowledge—men who professing to be wise, have their under–standing darkened), who having forsaken the way pertaining to the assemblies of *true wisdom*, have there laid down propositions of *unwisdom*, and propagating them diligently, live in accordance with their own *shallow wisdom*! 311.

विद्वत्सभायामगृहीतसारा: विवेकशून्यानि वचांस्युदीर्य।
तत्साधनव्यग्रजडान्तिके ते ब्रूयुर्न सन्तो ह्युपदेशवाक्यम् ॥३११॥

बुध गोष्ठी में विनु सुने, हितकारक वचजाल।
विवेकविहीन वचन का, कर के इस्तेमाल॥
विमूढ अपने वाद में, नित रहते हैं मस्त।
सन्त न उनके वीच वच, कहते हितविन्यस्त ॥३११॥

312. நாப்பாடம் சொல்லி நயமுணர்வார் போற்செறிக்கும்
தீப்புலவற் சேரார் செறிவுடையார் ;—தீப்புலவன்
கோட்டியுட் குன்றக் குடிப்பழிக்கும் அல்லாக்கால்
தோட்புடைக் கொள்ளா எழும்.

Avoid the angry violent disputant.

Well–disciplined men come not near the heretic (=man of evil learning, the teacher of an evil system), who stores up (in his memory certain formulas, comp, 304), as though he understood their worth, and repeats them by rote (lit, as a *tongue–lesson*).
The heretic, if worsted in the assembly, will abuse the family (of his opponents); or he will spring up and challenge them to fight. 312.

यत्किञ्चिदुक्त्वा विबुधेन तुल्यं नटन्तमज्ञं न बुधा मिलन्ति।
यतस्तु विद्वत्कुलदूषणे वा कराभिघातं युधि वा विशेत्स: ॥३१२॥

अल्प-वचन ही बोलकर, छल से सुधी समान।
अभिनय करते मूढ से, मिलते नहि धीमान॥
कारण यह है अल्पविद, बुधकुलदूषण मग्न।
या रण में होंगे सदा, कर-ताडन में लग्न ॥३१२॥

313. சொற்றாற்றுக் கொண்டு சுனைத்தெழுதல் காமுறுவர்
கற்றாற்றல் வன்மையுந் தாந்தேறார்,—கற்ற
செலவுரைக்கும் ஆறறியார், தோற்ப தறியார்,
பலவுரைக்கும் மாந்தர் பலர்.

Vain babblers.

Many are the men that utter many things,—who long to raise up (in debate), from mere love of talking and an itching tongue; who do not themselves apprehend the power and might of learning; who know not the way to utter with penetrating force what they have learnt; and who know not what defeat means. 313.

परस्य वैदुष्यविवादशक्तिं स्वज्ञातमर्थं वदितुं परेषु ।
पराजये कारणमप्यबुध्वा वाञ्छन्ति वक्तुं बहवो बहूनि ॥३१३॥

ऐसे ही कुछ लोग हैं, जो पर से पटु वाद।
करने में समर्थ नहीं, पर को अपना वाद॥
समझाने में पटु नहीं, न जान कर निज हार।
वक्ता बनना चाहते, सभा-बीच बहु बार ॥३१३॥

314. கற்றதூஉ மின்றிக் கணக்காயர் பாடத்தால்
பெற்றதாம் பேதையோர் சூத்திரம்—மற்றதனை
நல்லா ரிடைப்புக்கு நாணாது சொல்லித்தன்
புல்லறிவு காட்டி விடும்.

The neophyte.

Without any learning of his own, the fool has obtained one formula from overhearing the lessons of a tutor (who was teaching others), yet unabashed he enters the circle of the good, speaks it out, and makes exhibition of his mean understanding. 314.

आकर्ण्य विद्यार्थिभिरुक्तपाठ-मप्राप्य विद्यां गुरुतः क्रमेण ।
ज्ञात्वैकसूत्रं सदसीदमुक्त्वा मौढ्यं विलज्जो विवृणोति मूढः ॥३१४॥

सुनकर केवल पाठ कुछ, सहपाठी से उक्त।
क्रम विद्या नहि प्राप्तकर, अध्यापक से उक्त॥
एक सूत्र ही जानकर, सभासदों के बीच।
विलज्ज करते हैं प्रकट, स्वीय मूढता नीच ॥३१४॥

3.15. வென்றிப் பொருட்டால் விலங்கொத்து மெய்கொள்ளார்
கன்றிக் கறுத்தெழுந்து காய்வாரோ—டொன்றி
உரைவித் தகமெழுவார் காண்பவே, கையுள்
சுரைவித்துப் போலுந்தம் பல்.

Convincing arguments.

They who arise to utter words of wisdom, having associated themselves with the assembly of those who rage and burn and fume with anger, like beasts, for the mere sake of victory, not understanding the truth, shall see their own teeth like pumpkin seeds in their hands!

315.

जयैकलक्ष्यास्त्वगृहीततत्त्वा कोपेन ये सन्ति सभां प्रविश्य।
स्ववाग्मितां तेषु च दर्शयन्तः स्युर्भग्नदन्ता विबुधा हतास्तैः ॥३१५॥

ज्ञाततत्त्व जो हैं नहीं, जयैक लक्ष्यसमेत।
प्रवेश करके भीड़ में, बैठे कोप समेत॥
यदि उन में बुध-वाग्मिता, दर्शायी ही जाय।
भग्नदन्त हो विबुध ही, करसे हत हो जाय ॥३१५॥

316. பாடமே ஓதிப் பயன்தெரிதல் தேற்றுத
மூடர் முனிதக்க சொல்லுங்கால்—கேடருஞ்சீர்ச்
சான்றோர் சமழ்த்தனர் நிற்பவே மற்றவரை
சன்றுட் இறப்பப் பரிந்து.

Fools disgrace themselves in the assembly of the learned.

When foolish men chant their lesson, not knowing the fruit that lesson yields, but uttering words that gender wrath, the learned ones, whose fame dies not, will stand by ashamed, sorely pitying the mother that bare them.

316.

उच्चार्य मूलं परमार्थतत्त्व-मप्राप्य मूढः प्रवदेत् कुवाक्यम्।
तेषां तु मातर्यनुतापबुध्या विख्यातसन्तस्तदिदं सहन्ते ॥३१६॥

उच्चारण कर मूल का, अर्थतत्व-अनजान।
बोलेंगे दुखकर वचन, विमूढ तीर समान॥
उनकी माँ पर सदय हो, नामी सज्जन लोग।
सहते हैं भी सदसि में, मूढ-वचन- दुख भोग ॥३१६॥

317. பெறுவது கொள்பவர் தோள்போல் நெறிப்பட்டுக்
கற்பவர்க் கெல்லாம் எளிய நூல்—மற்றம்
முறிபுரை மேனிய ருள்ளம்போன் றியார்க்கும்
அறிதற் கரிய பொருள்.

The letter easy, the meaning hard.

Like the charms of those who sell their love for what they gain, the sacred texts are easy to those who rightly learn them; but like the minds of these whose forms are soft as tender shoots, the meaning is hard to all. 317.

पण्याङ्गनानां भुजवत्तु शास्त्रं भवेत्सुलभ्यं पठनोद्यतानाम्।
शास्त्रान्तरार्था रमणीयवेश्या मनोवदज्ञेयतमाः समेषाम् ॥३१७॥

धनदाता को ज्यों लक्ष्य, गणिका के भुज-भाग।
त्यों पाठक को सरल हो, आम शास्त्र का भाग॥
गूढ शास्त्र के अर्थ तो, कभी नहीं हैं ज्ञात।
जैसी सुन्दर नारि की, मनोदशा अज्ञात ॥३१७॥

318. புத்தகமே சாலத் தொகுத்தும் பொருள்தெரியா
உய்த்தக மெல்லாம் நிறைப்பினும்—மற்றவற்றைப்
போற்றும் புலவரும் வேறே பொருள்தெரிந்து
தேற்றும் புலவரும் வேறு.

Book collectors and scholars.

Although men gather together books in abundance, and not understanding their contents, fill the whole house with them; the sages who merely take care of books are of one sort, and the *sages* who understand their contents, and make them clear to others, are of another sort. 318.

ग्रन्थांस्तु संचित्य विनार्थबोध ये स्वीयगेहं किल पूरयन्ति।
न ते बुधाः स्युः सुगृहीतभावा ये बोधयन्त्यन्यमिमे बुधाः स्यु ॥३१८॥

धनदाता को जो करें, बिना अर्थ का ज्ञान।
समझे जाते वे नहीं, मकान-भर विद्वान॥
ज्ञात तत्व जो अर्थविद, पर को देते ज्ञान।
समझे जाते सर्वत्र, वे ही हैं विद्वान ॥३१८॥

319. பொழிப்பகலம் நுட்பநூல் எச்சமிந் நான்கிற்
கொழித்தகலங் காட்டாதார் சொற்கள்—பழிப்பில்
நிரையாமா சேர்க்கும் நெடுங்குன்ற நாட !
உரையாமோ நூலிற்கு நன்கு.

A perfect commentary.

Lord of the land of long chains of hills where the wild cattle assemble in herds!

Is that a good commentary to a faultless composition, which consists of the words of those who do not sift it thoroughly, in the four divisions of *summary*, *amplification*, *minute exposition*, and *supplementary information*, and thus exhibit the full import? 319.

व्याख्याचतुष्कैः सुविचार्यभाव-प्रकाशहीनानि पदानि तानि।
व्याख्यानवर्याणि न वै भवन्ति गोपूर्णशैलान्वितदेशपाल! ॥३१९॥

पुस्तक संग्रह जो करें, बिना अर्थ का ज्ञान।
वन्यधेनु गिरि से सहित, प्रदेश का हकदार।
विमर्श करके खूब थी, टीका टिप्पणी चार॥
मतलब के उद्बोध में, यदि न योग्य हो जाय।
तो वे टीकाएं सदा, उचित न समझी जाय ॥३१९॥

320. நிற்பிறப் பில்லார் எனைத்துநூல் கற்பினும்
சொற்பிறரைக் காக்குங் கருவியரோ—இற்பிறந்த
கல்லறிவாளர் நவின்றநூல் தேற்றுதார்
புல்லறிவு தாமறிவ தில்.

Critics.

Will those who are not of high family, however they may study learned works, be fit instruments to guard others from faults of speech? And men of good family who are well learned will not (seem to) be aware of the deficiencies of those who do not comprehend the works they talk of. 320.

अधीतशास्त्रा अपि दुष्कुलीना दोषान् परोक्तेषु न वै सहन्ते।
बुधाः कुलीनास्त्वनधीतशास्त्रैः प्रयुक्तदोषान् क्षमया सहन्ते ॥३२०॥

दोषयुक्त वच श्रवणकर, शास्त्रविज्ञ कुलीन।
असह्य होकर भीड़ में, नहि हैं भाषणहीन॥
दोषयुक्त वच श्रवण कर, पण्डित मनुज कुलीन।
अनपढ़ कृत हो समझकर, होते सहनाधीन ॥३२०॥

Ch. 33. Insufficient Knowledge

३३. शत्रुघर्माध्याय—अल्पज्ञानवत्ता

321. அருளின் அறமுரைக்கும் அன்புடையார் வாய்ச்சொல்
பொருளாகக் கொள்வர் புலவர்—பொருளல்ல
ஏழை அதனை இகழ்ந்துரைக்கும் பாற்கூழை
மூழை சுவையுணரா தாங்கு.

Only the wise value the wise.

Men sense receive as a reality the words from the mouth of the loving ones who graciously teach virtue. The (ignorant) wretch, himself unreal, speaks (of virtue) with contempt. Just so the ladle distinguishes not the flavour of the rice boiled in milk. 321.

प्रेम्णा दयार्द्रैः कथितं सुवाक्यं गृह्णाति विद्वान् बहुलाभकारि।
तद्वाक्यसारं न हि वेत्ति मन्दो दर्वी न वेत्त्यन्नरुचिं यथैव॥३२१॥

सनेह सकरुण आप्त के, धार्मिक वाक्य महान।
बहुत लाभकर समझकर, गहते हैं विज्ञान॥
किन्तु मूढ नहि जानते, उन वाक्यों का सार।
नहीं जानती करछुली, यथा अन्न का सार ॥३२१॥

322. அவ்வியம் இல்லார் அறத்தா றுரைக்குங்கால்
செவ்விய ரல்லார் செவிகொடுத்துங் கேட்கலார்
கவ்வித்தோல் தின்னும் குணங்கர்நாய் பாற்சோற்றின்
செவ்வி கொளல்தேற்ற தாங்கு.

Foolish people hearing hear not.

When men of ungrudging soul declare the way of virtue, those who are not rightly disposed, although they give ear, hear not.
Even so the currier's dog seizes on and devours leather, not appreciating the flavour of milk and rice. 322.

निर्दुष्टमर्त्यैरितधर्मबोधं श्रोतुं न वाञ्छेद् गुणहीनमूढः।
श्वा चर्मभोक्ता श्वपचैः सुपुष्टः क्षीरान्नसारं न यथाऽवगच्छेत् ॥३२२॥

दोषहीन नर से कथित, धार्मिक सदूपदेश।
सुनना चाहेगा नहीं, विमूढ विन शम-लेश॥
चर्माशी कुत्ता यथा, श्वपच-गेह में पुष्ट।
ना जानेगा सार ही, ओदन का पयजुष्ट ॥३२२॥

323. இமைக்கும் அளவில்தம் இன்னுயிர்போம் மார்க்கம்
எனைத்தானும் தாம்கண் டிருந்தும்—தினைத்துணையும்
நன்றி புரிகல்லா நாணில் மடமாக்கள்
பொன்றிலென் பொன்றாக்கா லென்.

Useless in life and unmourned in death.

what matters it whether they live or die—the shameless stupid people who do no good, not even as much as a grain of millet, though they see by every species of example the way in which their life so sweet to them, passes away in the twinkling of an eye? 323.

प्राणान्निमेषैकविनाश्यरूपान् कार्त्स्न्येन बुध्वाऽप्यथ धर्ममल्पम्।
निर्लज्जमूढो यदि नात्र कुर्यात् सत्ता च मृत्युश्च समे हि तेषाम् ॥३२३॥

इन निमेष में निधनयुत, रीति सभी से प्राण।
अवगत कर भी धर्म का, थोड़ा-सा ही त्राण॥
विमूढ लज्जा-रहित यदि, नहि करता इह लोग।
तो उसकी सत्ता तथा, मरण रहें सम भोग ॥३२३॥

324. உளநாள் சிலவால் உயிர்க்கேமம் இன்றால்
பலர்மன்னும் தூற்றும் பழியால்—பலருள்ளும்
கண்டாரோ டெல்லாம் நகாஅ தெவனொருவன்
தண்டித் தனிப்பகை கோள்.

Misanthropy.

Since being's days are few, and life on safeguard owns, and guilt by many blamed is rife, mid many men, why, laughing not with all they see, should any sulk apart, and nurse a sullen hate? 324.

स्याज्जीवितं स्वल्पमकर्यमेतत् तत्राऽपि निन्दा बहवोऽत्र, तस्मात्।
सर्वैः सहर्षं त्वविधाय मैत्री-मन्यैरमैत्र्या क इहास्ति लाभ ॥३२४॥

जीवन ही लघु-काल है, यह होता अनिवार्य।
उसमें दूषण बहुत हैं, उनको भी सिर-धार्य॥
सब के सह आनंदयुत, मैत्री अक्रियमाण।
विरोध करना और से, इससे नहि फलवान ॥३२४॥

325. எய்தி யிருந்த அவைமுன்னர்ச் சென்றெள்ளி
வைதா னொருவன் ஒருவனை—வைய
வயப்பட்டான் வாளா இருப்பானேல் வைதான்
வியத்தக்கான் வாழு மெனின்.

The evil tongue.

A man has gone before the assembly that had gathered together, and contemning another has reviled him. Now if the reviled one remain silent, the reviler is to be wondered as if he survive; (for abuse is his very life, and the patience of the reviled one has closed his mouth.)
325.

मन्देन विद्वत्सदसीह कश्चित् विनिन्दको मौनमवाप्नुयात् चेत्।
तन्निन्दको नश्यति, वैपरीत्ये भवेदिदं विस्मयदायकं हि ॥३२५॥

निन्दा करता मूढ यदि, सभा बीच रह जाय।
म निन्दित मानव मौन हो, तथैव यदि रह जाय॥
तो उसका निन्दक मनुज, हो जाता ही नष्ट।
विस्मयदायक है तभी, जब कि न निन्दक नष्ट॥३२५॥

326. மூப்புமேல் வாராமை முன்னே அறவினையை
ஊக்கி அதன்கண் முயலாதான்—நூக்கிப்
புறத்திரு போகென்னும் இன்னுச்சொல் இல்லுள்
தொழுத்தையாற் கூறப் படும்.

Dishonoured old age.

He who before old age comes, has not undertaken and zealously carried out works of virtue, will be pushed about in the house addressed in harsh language, and bidden to get on one side or to go out, by even the maid-servants. 326.

वार्धक्यदु:खागमनात्तु पूर्वं सद्धर्मकार्येष्वकृतप्रयत्न:।
अन्ते, 'गृहाङ्च्छ बहिर्वसे' ति दास्या कठोरं स तिरस्कृत: स्यात् ॥३२६॥

बुढापे के दु:खों के, आने के ही पूर्व।
पुण्यकार्य में जो नहीं, है कृत सुयत्न पूर्व॥
"घर से बाहर जा खड़ा", यों भृत्या की बात।
सुननी होगी अंत में, उसको ही दिन रात ॥३२६॥

327. தாமேயும் இன்புறார் தக்கார்க்கும் நன்றாற்றார்
ஏமஞ்சார் நன்னெறியுஞ் சேர்கலார்—தாமயங்கி
ஆக்கத்துள் தூங்கி அவத்தமே வாழ்நாளைப்
போக்குவார் புல்லறிவி னார்.

Wasted lives.

Men of scanty wisdom are those who do not themselves enjoy any sweets of life, bestow no benefactions on worthy persons, draw not high the good path that safeguards (the soul), but infatuated and absorbed in the acquisition of wealth, pass away their days of life in vain. 327.

स्वयं त्वभुक्त्वा महतामदत्त्वा धर्मानसम्पाद्य सदा विमुग्धाः।
मग्नाः सदा वित्तसमूह एव मन्दा निजायूंषि कदर्थयन्ति ॥३२७॥

नहि कर धनोपयोग खुद, पर को नहि कर दान।
धर्मकार्य में विमुख हो, वनकर नित नादान॥
वित्त-मोह में रात दिन, सम्यक सदैव मग्न।
दिवस विताते मन्दमति, होकर जीवन भग्न ॥३२७॥

328. சிறுகாலை யேதமக்குச் செல்வுழி வல்சி
இறுகிறுகத் தோட்கோப்புக் கொள்ளார்—இறுகிறுகிப்
பின்னறிவாம் என்றிருக்கும் பேதையார் கைகாட்டும்
பொன்னும் புளிவிளங்கா யாம்.

The miser's death-bed.

In the very earliest time (*in early youth*) they take not food for the journey which they must make (*into another world*), tying tightly the wallet on their shoulders; but tying tightly (*their treasure bags*), they say, 'In after days we will learn wisdom:' the gold these idiots will indict with their hands (as legacies, when they are speechless, and in the grasp of death) will be as sour *vilam* fruit. 328.

वाल्ये वयस्यात्मविमुक्तिहेतोः ये धर्मपाथेयमनाप्य मूढाः।
पश्येम पश्चादिति भावयन्ति तेऽन्ते स्वलक्ष्यं गदितुं न शक्ताः ॥३२८॥

आमुष्मिक फल के लिए, वचपन में से मूढ।
सुकृतमयी पाथेय को, ना रखते अतिगूढ॥
"देखेंगे पश्चात् ही", यों रखते कुविचार।
वे आखिर निजलक्ष्य पटु, नहि करते उद्गार ॥३२८॥

329. வெறுமை யிடத்தும் விழுப்பிணிப் போழ்தும்
மறுமை மனத்தாரே யாகி—மறுமையை
ஐந்தை யனைத்தானும் ஆற்றிய காலத்துச்
சிந்தியார் சிற்றறிவி னார்.

Saints when they suffer, sinners when they prosper.
When poor, or when disease's deadly grasp they feel, to other world their minds are given; but when wealth grows, no thought, small as a grain of mustard seed, give they to other world—these souls unwise!
329.

जडस्य धर्मे तु मतिस्तदा स्यात् यदा बुभुक्षाऽऽमयबाधितः स्यात्।
ताभ्यां विमुक्तः स यदा तदा तु न चिन्तयेत् सर्षपमात्रधर्मम् ॥३२९॥

प्यास भूख से मन्दमति, जब पीडित हो जाय।
तब वह धार्मिक कृत्य में, दत्तचित्त रह जाय॥
जब वह विमुक्त उभय से, प्यास-भूख के क्लेश।
तब नहि करने सोचता, धर्मकार्य-लव लेश॥ ३२९॥

330. என்னேமற் றிவ்வுடம்பு பெற்றும் அறம்நினையார்
கொன்னே கழிப்பர்தம் வாழ்நாளை—அன்னை
அளவிறந்த காதல்தம் ஆருயி ரன்னார்க்
கொளஇழைக்குங் கூற்றமுங் கண்டு.

Friends hurried away; the unwise heed it not.
Though they have gained a human frame, of virtue think not! In vain spent their days. Alas! and yet they see death eagerly hasting to snacth away those infinitely dear, like to their very souls! Why is this so?
330.

स्वप्राणतुल्यान् निजबन्धुवर्गान् यमोऽपनेतुं यतने तदेतत्।
दृष्ट्वापि कायेन सुधर्मकार्य-मप्राप्य चायुर्विफलं नयन्ति ॥३३०॥

अपने प्राण-समान ही, बन्धु वर्ग को स्वीय।
ले जाता है नरक को, काल पाश से स्वीय॥
यह लखकर भी मन्दमति, धार्मिक कार्य-कलाप।
न कर समय का क्षेप भी, करते हैं बिनु लाभ ॥३३०॥

Ch. 34. Utter Folly

३४. जडता

331. கொலைஞர் உலையேற்றித் தீமடுப்ப ஆமை
நிலையறியா தந்நீர் படிந்தாடி யற்றே
கொலைவல் பெருங்கூற்றம் கோள்பார்ப்ப ஈண்டை
வலையகத்துச் செம்மாப்பார் மாண்பு.

Men disport themselves in the very meshes to death's net.
While the murderers have put it into the pot, and kindled fire beneath, is sports unconscious of its fate: such is their worth who joy entangled tn life's *net*, while death, the mighty murderer. waits to seize them. 331.

सज्जे यमे प्राणमितोऽपनेतुं तुष्यन्त्यमी जीवितजाललग्नाः।
पक्तुं निहन्त्रा जलपूर्णपात्र-प्रक्षिप्तकूर्मो विहरेद्यथाऽत्र ॥३३१॥

मारक पितृपति प्राण के, हरने में सन्नद्ध।
फिर भी जीवन-जाल में, खुश है नर संबद्ध॥
ज्यों जलपूरित पात्र में, क्षेपित कूर्म विहार।
करता है पाचन अरय, मारक से इक बार ॥३३१॥

332. பெருங்கட லாடிய சென்றார் ஒருங்குடன்
ஓசை அவிந்தபின் ஆடுதும் என்றற்றால்
இற்செய் குறைவினை நீக்கி அறவினை
மற்றறிவாம் என்றிருப்பார் மாண்பு.

Postponing virtuous action to a time that never arrives.
They went to bathe in the great see, but cried 'we will wait till all its roar is hushed, then bathe!' Such is their worth who say, 'we will get rid of all our household toils and cares and then we will practise virtue and be wise.' 332.

कृत्वा कुटुम्बोचितकार्यजालं धर्मस्ततश्चिन्त्य इतीरयेद्यः।
शान्ते रवे मज्जनमत्र सिन्धौ कुर्याम चेत्याशयवान् भवत्सः ॥३३२॥

परिवारोचित कार्य सब, करने के ही बाद।
धर्म-कृत्य करणीय हो, जो कहता यह वाद॥
सरस्वान के नाद के, प्रशमन के हीं बाद।
जो चाहें मज्जन वहां, दोनों हैं सम वाद ॥३३२॥

333. குலந்தவம் கல்வி குடிமூப் பைந்தும்
விலங்காமல் எய்தியக் கண்ணும்—நலஞ்சான்ற
மையறு தொல்சீர் உலகம் அறியாமை
நெய்யிலாப் பாற்சோற்றின் நேர்.

A high tone of manners and morals.

Though a man be of good *caste*, have performed deeds of ascetic virtue, acquired learning, is of good family and attained a ripe old age, so that in these five points he is faultless; yet his ignorance of what is thoroughly good, without stain, sanctioned by ancient precedent, and of good renown in the world's ways, will render all his advantages like thin; watery milk with boiled rice. 333.

विद्यातपोभाग्यकुलोद्भवत्व-वृद्धत्वसंख्यांकगुणाढ्यमर्त्ये।
विशिष्टभाव्युत्तमलोकचिन्ता न चेद्विसर्प्यन्नसमं वृथैतत् ॥३३३॥

तप विद्या कुल धन जरा, इन पांचों से उक्त।
जो भावी पर लोक का, विबोध से नहि युक्त॥
उसका जीवन आज्य से, विहीन भात समान।
समझा जाता है वृथा, नापि कभी फलवान ॥३३३॥

334. கல்நனி நல்ல கடையாய மாக்களின்
சொல்நனி தாமுணரா வாயினும்—இன்னினியே
நிற்றல் இருத்தல் கிடத்தல் இயங்குதலென்
றுற்றவர்க்குத் தாமுதவ லான்.

Stones and senseless men.

Stones are much better than low men; since, though those (too) are utterly without apprehension of your words, yet they (stones) are of assistance to those that, employ them, inasmuch as they at once stand (where they are fixed), remain (where they are put), lie (where they are laid), and remove (when they are moved). 334.

शिला न वेत्त्यन्यवचस्तथापि स्थातुं च गन्तुं शयितुं तथैव।
यत्साह्यकृत्सा निकटागताना-मतो वरा नीचनरादपीयम् ॥३३४॥

निकट रात को ठहरने, सोने उठने स्थान।
तथा बैठने के लिए, देती है चट्टान॥
पर वच मात्र न जानती, किन्तु मनुज अनुदार।
उससे निकृष्ट हेय है, सचमुच सभी प्रकार ॥३३४॥

335. பெறுவதொன் றின்றியும் பெற்றனை போலக்
கறுவுகொண் டேலாதார் மாட்டும்—கறுவினால்
கோத்தின்ன கூறி உரையாக்காற் பேதைக்கு
நாத்தின்னும் நல்ல சுனைத்து.

A fool angry without cause, longs to abuse.

If the fool, though nothing is to be gained (by such conduct), acting as though he had gained something, waxing wroth against those who disdain (*or* are unable) to contend with him, cannot say and utter forth in his wrath a string of evil words a grievous inching will gnaw his tongue.

335.

निरर्थकं साधुजनेषु कोपात् ब्रूयुस्तु दुःखप्रदनिन्द्यवाक्यम्।
व्याख्यां च कुर्युर्भुवि बुद्धिहीना नो चेन्न शान्तिं भजतेऽस्य जिह्वा॥३३५॥

सज्जन से नाराज हो, दुखकर अर्थविहीन।
दूषित औ अपशब्द ही, कहते हैं मतिहीन॥
व्याख्या भी अपशब्द की, करते हैं वे लोग।
नहि तो, उनकी जीभ नहि, पाती शाति-अशोक ॥३३५॥

336. தங்கண் மரபில்லார் பின்சென்று காமவரை
எங்கண் வணக்குது மென்பவர்—புன்கேண்மை
கற்றளிர்ப் புன்னை மலருங் கடற்சேர்ப்ப
கற்கிள்ளிக் கையிழந் தற்று.

It is a hard thenkless task to bend the worthless to our will.

Lord of the sea-shore where the laurel with its bright foliage flowers! The poor (pretence of) intimacy enjoyed by those who follow after (wealthy but) utterly uncongenial men, and say 'we will bend them to our will'. is like loosing one's hand while digging into a rock.

336.

स्वस्मिन् विरक्तान् मनुजान् प्रयत्नात् कुर्याम रक्तानिति यो यतेत।
करक्षतैः शैलमसौ हि भेत्तुं वाञ्छेत् कदम्बाढ्यपयोधितीर॥ ॥३३६॥

विरक्त नर को यत्न से, अपने में अनुरक्त।
करने का परयास जो, करता है अविरक्त॥
सो निज भुज से छेदना, चाहेगा गिरिमाल।
कदम्ववनयुत सिन्धु के, प्रदेश का परिपाल ॥३३६॥

337. ஆகா தெனினும் அகத்துநெய் உண்டாகின்
போகா தெறும்பு புறஞ்சுற்றும்—யாதும்
கொடா அரெனினும் உடையாரைப் பற்றி
விடாஅர் உலகத் தவர்.

Ants around the neck of the closed oil-jar.

If there be *ghi* in the pot, though they cannot get at it, the ants will swarm without ceasing around the outside; and so the people of the world will cling to and not leave the possessors of wealth, though these give them nothing. 337.

घृताढ्यपात्रं परितो भ्रमन्ति विनाऽऽज्यलाभं हि पिपीलिकास्ताः।
अदानशीलं च धनेन पूर्णं लोकाः समन्तादनिशं भ्रमन्ति ॥३३७॥

बिनु ही लाभ पिपीलिका, घृत से पूरित पात्र।
छूती फिरती है यथा, अहस और ही रात्र॥
दानहीन धनवान के, पीछे जाते लोग।
फिर भी होते दूर नहि, उनके अभाव-शोक ॥३३७॥

338. நல்லவை நாடொறும் எய்தார் அறஞ்செய்யார்
இல்லாதார்க் கியாதொன்றும் ஈகலார்—எல்லாம்
இனியார்தோள் சேரார் இசைபட வாழார்
முனியார்கொல் தாம்வாழும் நாள்.

Fools make all life sad for themselves.

No good each they gain; nor deed of virtue do; nothing to needy men impart; nor know they joy of loved ones' sweet embrace; devoid of fame they live: do such not loathe the days they live? 338.

न सत्सभां याति न धर्ममेति दीनेषु दानं न करोति मूढः।
नोपैति भार्यां सयशो न जीवेत् न जीवितं द्वेष्टि तथाऽपि कस्मात् ॥३३८॥

दान न करता दीन को, और न यश की आस।
मूढ न जाता सद् सभा, और न स्त्री के पास॥
करता ही नहि धर्म ही, जीवन पर हि विराग।
नहीं दिखाता हेतु नहि, विदित न "नकारराग" ॥३३८॥

339. விழைந்தொருவர் தம்மை வியப்ப ஒருவர்
விழைந்திலேம் என்றிருக்கும் கேண்மை—தழங்குகுரல்
பாய்திரைசூழ் வையம் பயப்பினும் இன்னதே
ஆய்நலம் இல்லாதார் மாட்டு.

Friendship without reciprocity.

Friendship with those who are destitute of exquisite goodness, and who, though you cultivate them with affectionate deference, (morosely) say 'we entertain affection for none,'—though it should yield as its fruit the earth, which the sea with its noisy chime of leaping billows girds around,—would be only affliction. 339.

स्तुतः स्वयं बुद्धिमता जडस्तु निर्लक्ष्यभावं यदि दर्शयेत्सः।
स्तोता महानब्धिपरीतपूर्ण-भूलाभकालेऽपि न मोदमेति ॥३३९॥

स्तूयमाण भी सुमति से, विमूढ अपने आप।
उदासीन का भाव ही, दर्शाता चुपचाप॥
विमूढ के मन तदपि वह, नहि होगा सुखदाय।
यदपि सिन्धुयुत भूमि की, भेंट अधिक मिलजाय॥३३९॥

340. கற்றலும் கண்ணகன்ற சாயலும் நீற்பிறப்பும்
பக்கத்தார் பாராட்டப் பாடெய்தும்;—தானுரைப்பின்
மைத்துனர் பல்கி மருந்தின் தணியாத
பித்தனென் றெள்ளப் படும்.

Self-laudation.

The learning a man acquired, his world-renowned excellence, and his nobility of birth will gain for him respect when the bystanders celebrate them; but if he himself proclaim them, the young kinsmen crowding around will deride him as one afflicted with a mania not to be mitigated by any medicine. 340.

विद्याकुलश्रैष्ठ्यगुणाढ्यमेक-मन्यः प्रशंसेद्यदि तद्वरं स्यात्।
मूढं निजस्तोत्रपरं तु नित्य-पित्तेन तुल्यं ब्रुवते स्वकीयाः ॥३४०॥

कुल-गुणादियुत मनुज को, यदि कोई भी अन्य।
शासित करता तो वही, सचमुच होगा धन्य॥
आत्मश्लाघी मूढ को, पागल कहते लोग।
करते हैं उसकी तथा, निन्दा का उपयोग ॥३४०॥

Ch. 35 Lowness
३५. नीच-कृत्य

341. கப்பி கடவதாக் காலைத்தன் வாய்ப்பெயினும்
குப்பை கிளைப்போவாக் கோழிபோல்—மிக்க
கனம்பொதிந்த நூல்விரித்துக் காட்டினும் கீழ்தன்
மனம்புரிந்த வாறே மிகும்.

Teaching wasted.

The fowl, though each morning duly you scatter broken grain into its very mouth, will ceaselessly scratch in the refuse-heap; so, though you expound and show the base man works of learning, full of weighty wisdom, he will but the more resolutely go on in the way in which his mind finds delight. 341.

बुध्वाऽपि शास्त्रार्थरसं महद्भ्यः स्वाभीष्टदुष्कर्म करोति मन्दः।
सत्तण्डुलान् प्राप्य च कुक्कुटो न मुञ्चेद्यथाऽशुद्धसमीपवासम् ॥३४१॥

गुरु जन से शास्त्रार्थ भी, बिनु शक खूब अधीत।
खल करता है दुष्करम, स्वेच्छा से निर्णीत॥
सत्तण्डुल भी प्राप्त कर, मुर्गी न करे त्याग।
अशुद्ध समीप थान पर, रहने का अनुराग ॥३४१॥

342. காழாய கொண்டு கசடற்றார் தஞ்சாரல்
தாழாது போவாம் எனவுரைப்பின்—கீழ்தான்
உறங்குவாம் என்றெழுந்து போமாம்அஃ தன்றி
மறங்குமாம் மற்றொன் றுரைத்து.

The base will not seek the company of the wise and good.

If you say to the base man. 'Let us without delay go to seek refuge with faultless sages possessors of mature wisdom,' he will probably get up and make off, exclaiming, 'Let us go and slumber.!' or he will perhaps demur, and change the subject. 342.

विशुद्धशास्त्रार्थविदां समीपं "गच्छेम एही" ति सुमित्रवाक्यम्।
धिक्कृत्य मन्दः स्वपितुं प्रयास्यन् उक्त्वा कुहेतुं स ततोऽपगच्छेत्॥३४२॥

"शास्त्रार्थविदों के निकट, सभी पहुंच हम जाय।
यों यारों के वाक्य का, ग्रहण किया नहि जाय॥
विमूढ ऐसा बोलकर, सोने को तैयार।
और न जाने का वहां, बोलेगा कुविचार ॥३४२॥

343. பெருமை தாம்பெறினும் பெற்றி பிழையா
தொருமையுடைய ராகுவர் சான்றோர்—பெருமை
பெற்றக் கடைத்தும் பிறங்கருவி நன்னாட!
வற்றும் ஒருமை கீழ்.

Promotion does not spoil the good nor improve the bad.
Lord of the goodly land of swelling torrents! If thoroughly worthy men gain some added dignity, their nature knows no deviation, but they go on in the same even path of virtue; and although the base obtain promotion, his conduct too changes not, (promotion betters him not.
343.

भाग्यागमेऽप्युत्तमजा: स्वकीय-गुणान्विता: सन्ति यथावदेव।
वित्तागमे नीचजनप्रवृत्ति: नूत्ना भवेन्निर्झरदेशपाल! ॥३४३॥

निर्झर से परिपूर्ण औ, प्रदेश का परिपाल।
उत्तम जन सौभाग्य से, यदि हो मालामाल॥
तव भी स्वकीय शील से, वियुक्त नहि वे लोग।
पर-धन पाकर, बदलकर, दिखते नव खल लोग ॥३४३॥

344. தினையனைத்தே யாயினும் செய்தநன் றுண்டால்
பனையனைத்தா வுள்ளுவர் சான்றோர்—பனையனைத்(து)
என்றுஞ் செயினும் இலங்கருவி நன்னாட!
நன்றில நன்றறியார் மாட்டு.

Small benefits seem great to the wise; and vice versa.
Lord of the goodly land of glistening torrents! The excellent will deem any favour done them, though small as a grain of millet, to be large as a palm tree. You may constantly confer favours huge as a palm tree, but they are not benefits, when conferred on those who are not grateful.
344.

परोपकारं यवतुल्यमल्पं जानन्ति तालेन समं महान्त:।
तालोपमं साह्यमवाप्य नीचा न तत्स्मरेयुर्जलदेशपाल ! ॥३४४॥

यव समान बहु अलपतम, पर को कृत उपकार।
ताल सदृश हैं समझते, सज्जन वृहदाकार॥
नीच लोग तो प्राप्त कर, तालोपमं उपकार।
नहीं मानते भी कभी, सहाय वृहदाकार ॥३४४॥

345. பொற்கல தூட்டிப் புறந்தரினும் நாய்பிறர்
எச்சிற் கிமையாது பார்த்திருக்கும்—அச்சீர்
பெருமை யுடைத்தாக் கொளினும்கீழ் செய்யுங்
கருமங்கள் வேறு படும்.

The dog prefers to feed on refuse. Nature will out!

The dog, though you tend it with care, feeding it from a golden vessel, will watch, eye fixed for others' *leavings;* even so, although you receive the base as if they were possessed of greatness, the deeds do will be otherwise of greatness, the deeds they do will be otherwise (=their real character will be seen by their conduct). 345.

सुवर्णपात्रान्नसुपोषितोऽपि यथा परोच्छिष्टमपेक्षते श्वा।
सभाजितश्चापि तथैव नीचः करोत्यसौ गौरवहीनकर्म ॥३४५॥

हेमपात्रगत भोज से, पोषित भी ज्यों श्वान।
परोच्छिष्टमय भोज का, होता इच्छावान॥
त्यों बहु विशेष शील से, संमानित भी नीच।
गौरव-विहीन काम है, करता जनता बीच॥३४५॥

346. சக்கரச் செல்வம் பெறினும் விழுமியோர்
எக்கர் லுஞ் சொல்லார் மிகுதிச்சொல்—எக்காலும்
முந்திரிமேற் காணி மிகுவதேல் கீழ்தன்னை
இந்திரனு எண்ணி விடும்.

The base intoxicated by some trivial gain.

Though they obtain imperial wealth, the excellent never utter a vaunting word; but if at any time the base see some small fraction added to his scanty store, he will deem himself great as *Indra.* 346.

लोकाधिपत्ये समुपागतेऽपि निषिद्धवाक्यं न वदन्ति सन्तः।
ईषत्प्रवृद्धे निजभाग्यराशौ आत्मानमिन्द्रं मनुते मदान्धः ॥३४६॥

लोकाधिपत्य हाथ में, अगर स्वयं मिल जाय।
तब भी निषिद्ध वाक्य नहि, कहता बुध समुदाय॥
यदि मिलने पर अल्पधन, विबुधाधीश समान।
अपने को है समझता, मदान्ध कुबुद्धिमान ॥३४६॥

347. மைதிர் பசும்பொன்போல் மாண்ட மணியழுத்திச்
செய்த தெனினும் செருப்புத்தல் காற்கேயாம்
எய்திய செல்வத்த ராயினும் கீழ்களைச்
செய்தொழிலாற் காணப் படும்.

The slipper.

Though made of faultless yellow gold, enwrought with choicest pearls, the slipper serves but for one's foot; though the base be deemed prosperous through the wealth they have gained, their baseness will be seen by their actions. 347.

रत्नाढ्यजाम्बूनदनिर्मितापि स्यात्पादुका पादतलैकधार्या।
धनेन पूर्णा अपि नीचमर्त्याः स्वकर्मणा नीचपदैकयोग्याः ॥३४७॥

हीरे-रत्नों से जटित, सहेम पादत्राण।
शिरोधार्य नहि पाद का, करता ही है त्राण॥
वित्तयुक्त भी नीचजन, अपने कृत्यनुसार।
निकृष्ट-पदैक-भोग्य ही, कभी न सर्वाधार ॥३४७॥

348. கடுக்கெனச் சொல்வற்றும் கண்ணேட்ட மின்றும்
ஒடுக்கண் பிறர்மாட் டுவக்கும்—அடுத்தடுத்து
வேக முடைத்தாம் விறன்மலை நன்னுட!
ஏகுமாம் எள்ளுமாம் கீழ்.

The base man's habit of life.

Victorious lord of the good mountain land! The base is mighty in bitter words, is destitute of kindliness, rejoices in others' sorrows, is ever and anon full of sudden wrath, will run up and down and pour contempt on all he meets. 348.

वाक्ये कटुत्वं हृदि निर्दयत्वं परव्यथादर्शनमूलहर्षः।
वृथाटनं शाश्वतकोपवत्ता निन्देत्यमी नीचनरस्वभावाः ॥३४८॥

वच में कठोर भाव औ, दिल में निर्दय-भाव।
पर की पीडा देखकर, मन में प्रमोद-भाव॥
व्यर्थाटन रिस करना सतत, पर-निन्दा का भाव।
दुनिया में यो ख्यात हैं, निकृष्ट नर स्वभाव ॥३४८॥

349. பழைய ரிவரென்று பன்னாட்பின் நிற்பின்
உழைஇனிய ராகுவர் சான்றோர்—விழையாதே
கள்ளுயிர்க்கும் நெய்தற் கனைகடல் தண்சேர்ப்ப!
எள்ளுவர் கீழா யவர்.

No intimacy possible with the base.

Lord of the resounding sea's cool shore, where the *Neythal* breathes honied fragrance round! The worthy, if man for many days stand waiting in their train will say ;these are old acquaintance, and will make the place pleasant to them; the base in such circumstances feel no affection, but simply despise them. 349.

दिनैकमात्रागतसाप्तमित्र-वदेव मत्त्वा मुदितो महान् स्यात्।
नीचस्य भावो विपरीत एव "नैदळ्" सुमाढ्याब्धिसुकूलपाल! ॥३४९॥

"नैदव्य" सुमयुत सिन्धु के, शीतल तट का पाल।
दिनैक परिचित व्यक्ति को, परिचित अनैककाल॥
मित्र-सदृश ही मानकर, हर्षित होते संत।
पर चिरपरिचित को अधम, करता नहीं पसन्द ॥३४९॥

350. கொய்புல் கொடுத்துக் குறைத்தென்றுந் தீற்றினும்
வையம்பூண் கல்லா சிறுகுண்டை—ஐயகேள்!
எய்திய செல்வத்த ராயினும் கீழ்களைச்
செய்தொழிலாற் காணப் படும்.

Prosperity does not elevate the base.

Hear, O Sir! The little bullock-calves will not learn to bear the yoke and draw the chariot, though you give them cut grass, clip them, and constantly rub them down; so, though they have gained wealth, the base will be seen (*to be so*) by the deeds they do. 350.

छिन्नस्तृणौघैरभिवर्धितोऽपि रथं न वोढुं वृषभः समर्थः।
अवाप्तभाग्योऽप्यधमो मनुष्यः स्वभावकृत्यैर्न भवेद्वरिष्ठः ॥३५०॥

पोषित तृणगण-दाना से, ढोता नहि रथयान।
बैल कभी रथ खींचने, यथान सुशक्तिमान॥
तथा भाग्यवंत अधम नर, भी विभूति समवेत।
अपने स्वभाव कृत्य से, नहि वैशिष्ट्य समेत ॥३५०॥

355. தளிர்மேலே நிற்பினும் தட்டாமற் செல்லா
உளிநீரார் மாதோ கயவர்—அளிநீரார்க்
கென்றானுஞ் செய்யார் எனைத்தானுஞ் செய்பவே
இன்னாங்கு செய்வார்ப் பெறின்.

You must extort from the base what you want.

The base are like the chisel, that, though it is over the bud (to be sculptured), moves not without some one to strike it. On those who are courteous these confer no boon whatever. They will do everything for those who use violent means. 355.

नीचा: परप्रेरणत: समस्तं कुर्वन्ति, तद्वद्दययाऽन्वितानाम्।
साह्यं न कुर्वन्ति सतां, समस्तं कुर्वन्ति विद्रोहकृतां नराणाम् ॥३५५॥

पर से प्रेरित नीच जन, सभी काम में लग्न।
सदय संत की मदद की, कृति में नहि संलग्न॥
जो करते हैं अहित ही, उनको सभी प्रकार।
नीच लोग संसार में, करते हैं उपकार ॥३५५॥

356. மலைநலம் உள்ளும் குறவன்; பயந்த
விளைநிலம் உள்ளும் உழவன்; சிறந்தொருவர்
செய்நன்றி உள்ளுவர் சான்றோர்; கயம்தன்னை
வைததை உள்ளி விடும்.

Each thinks upon his own favourite place The good re-mebeonly benefits conferred on them; the bad only injuries.

The hill-man thinks upon the beauty of his hills; the farmer thinks upon his fields that have yielded him rich crops; the good think on the boons bestowed by worthy men; the base man's thoughts are fixed on a abuse he has received. 356.

स्मरेत् किरातो नगभाग्यवृद्धिं कृषीबल: सस्यभवं स्मरेद्धि।
सन्त स्मरन्त्यन्यकृतोपकारे नीचा: स्मरन्त्यन्यकृतां स्वनिन्दाम् ॥३५६॥

किरात गिरि की वृद्धि को, कर लेगा ही याद।
हरी भरी सारंग की, कृषक करेगा याद॥
पर से कृत उपकार की, संत करेगा याद।
परकृत निन्दा स्वीय की, नीच करेंगे याद ॥३५६॥

357. ஒருநன்றி செய்தவர்க் கொன்றி யெழுந்த
பிழைநூறும் சான்றோர் பொறுப்பர்—கயவர்க்
கெழுநூறு நன்றிசெய் தொன்றுதீ தாயின்
எழுநூறும் தீதாய் விடும்.

The good are grateful; the base ungrateful and malignant.
The good attach themselves to those that have done them one act of kindness, and forgive a hundred wrongs that arise. The base receive seven hundred benefits, but one wrong will turn them all to evil.
357.

एकोपकारं सुजन स्मरन् वै शतापकारानपि विस्मरेत् सः।
एकापकारस्मरणेन नीचो न मानयेत् सप्तशतोपकारान् ॥३५७॥

इक ही परोपकार को, सृजन करेगा याद।
फिर तो शतापकार को, नहिं करेगा याद॥
केवल इक अपकार की, नीच करेगा याद।
परन्तु शतोपकार की, नहीं करेगा याद ॥३५७॥

358. ஏட்டைப் பருவத்தும் இற்பிறந்தார் செய்வன
மோட்டிடத்தும் செய்யார் முழுமக்கள்—கோட்டை
வயிரம் செறிப்பினும் வாட்கண்ணாய்! பன்றி
செயிர்வேழ மாகுதல் இன்று.

Base men illiberal even in prosperity.
Worthless persons even in high estate do not the deeds that men of noble birth perform even in their poverty. O keen-eyed maid! Men may enring and arm the boar's tusks, but it will not even so become a warlike elephant.
358.

क्लेशेऽपि सद्भिः कृतधर्मकार्यं नीचो न कुर्यादपि भाग्यलाभे।
दष्टी यथा स्याद्गजवन्न वीरः सुभूषितैर्दन्तवरैर्युतोऽपि ॥३५८॥

भूषित वर रद युक्त भी, रण में करी-समान।
वराह बनता है नहीं, वीर पराक्रमवान॥
दुख में भी सज्जन रचित, धार्मिक कार्यकलाप।
करता कभी न नीच तो, मिलने पर धनलाभ ॥३५८॥

Ch. 36. Baseness

३६. मूर्खता

351. ஆர்த்த அறிவினர் ஆண்டிளைய ராயினும்
காத்தோம்பித் தம்மை அடக்குப—மூத்தொறூஉம்
தீத்தொழிலே கன்றித் திரிதந் தெருவைபோல்
போத்தறார் புல்லறிவி னார்.

Age does not improve the essentially base.

The thoroughly wise, though young in years, will guard themselves in stern self-repression. The low unwise as age comes on become mature in evil works, and are like reeds wind-shaken, hollow still! 351.

वाल्येऽपि चार्थाद्विनिवृत्त्य यत्नात् निजेन्द्रियाण्यात्तसुखो बुधः स्यात् ।
दुष्कृत्यमग्नस्य कुमार्गगन्तु-रज्ञानिवृद्धस्य सुखं कथं स्यात् ॥३५१॥

करके इन्द्रिय का दमन, अपने शैशव-काल।
बुध जन पाते हैं हर्ष, बाकी जीवन-काल॥
विमूढ जन दुष्कृत्य में, सदैव हो अतिमग्न।
कुमार्गगामी प्रौढ में, पछताता दुखमग्न ॥३५१॥

352. செழும்பெரும் பொய்கையுள் வாழினும் என்றும்
வழும்பறுக்க கில்லாவாம் தேரை—வழும்பில்சீர்
நூல்கற்றக் கண்ணும் நுணுக்கமொன் றில்லாதார்
தேர்கிற்கும் பெற்றி அரிது.

Fine perception unattainable by the obtuse.

Though frogs, flourish long in a rich large, lake, they never rid themselves of their slime; so it is hardfor those void of fine perception, even when they have learned pure and excellent text-books, to acquire the gift of clear understanding. 352.

भेकस्य देहस्थमलं न नश्येत् सदा निमग्नेऽपि तटाकनीरे।
अधीतशास्त्रः सततं सुसूक्ष्मबुद्ध्या विना शास्त्ररसं न वेत्ति ॥३५२॥

शास्त्र अनेक अधीत भी, जो हो मेधाहीन।
शास्त्र-तत्त्व की खोज में, वह हो क्षमताहीन॥
निमग्न भी तालाब के, पानी में दिन-रात।
दादुर को तन-गन्दगी, होती नहि अवसाद ॥३५२॥

353. கணமலை நன்னுட! கண்இன் றொருவர்
குணனெனயுங் கூறற் கரிதால்—குணனழுங்கக்
குற்றம் உழைநின்று கூறுஞ் சிறியவர்கட்
கெற்றால் இயன்றதோ நா.

Detraction easy only to the base.

Lord of the goodly land of mountain chains! It is hard to stand before a man, and publish even his praise. How then can mean men's tongues depreciate a man's good qualities and proclaim his faults while standing before him? 353.

वक्तुं यदेकस्य गुणं परोक्षे जिह्वेति जिह्वा, पुरतोऽस्य दोषान्।
वक्तुस्तथाऽज्ञस्य कृता तु केन जिह्वा भवेत् पर्वतदेशपाल! ॥३५३॥

जीभ अनोखी मनुज की, परोक्ष में शुभ शील।
कहने नहि तैयार है, सम्मुख तो बदशील॥
कहने को तैयार है, जिह्वा निन्दक-माल।
विदित न यह कैसी रची, सगिरि प्रदेशपाल ॥३५३॥

354. கோடேந் தகலல்குற் பெண்டிர்தம் பெண்ணீர்மை
சேடியர் போலச் செயல்தேற்றார்—கூடிப்
புதுப்பெருக்கம் போலத்தம் பெண்ணீர்மை காட்டி
மதித்திறப்பர் மற்றை யவர்.

Base men vaunt themselves like wantons.

Chaste women trick not out their charms of womanhood, as is as the wont of the wanton. Like fountains ever fresh those others make display of every charm, and vaunt their beauty as they pass. 354.

दासीसमं मण्डयितुं स्वकायं कुलस्त्रियो नैव विदन्ति सम्यक्।
दास्यः स्वयं मण्डनमूलशोभां प्रदर्श्य पुंसा सहिता रमन्ते ॥३५४॥

गणिका सम अपना वदन, मण्डित करने रोज।
अच्छे कुल की नारियां, नहि लेती हैं सोच॥
गणिकाएं अपना वदन, अलंकार से युक्त।
खूब दिखाकर पुरुष से, मिलती है मुदयुक्त ॥३५४॥

359. இன்றுதும் இங்கிலையே ஆதும் இனிச்சிறிது
நின்றுதும் என்று நினைத்திருந்து—ஒன்றி
உரையின் மகிழ்ந்துதம் உள்ளம்வே றுகி
மரையிலையின் மாய்ந்தார் பலர்.

Vain dreams. We fade as a leaf.

'To-day, at once, a little hence, we shall gain our end!' So many speak and think, and joyously tell it out among their friends; but soon their eager minds are changed; and they have perished like a lotus leaf. 359.

अस्मिन् दिने वाद्य ततः कदाचित् धनं भवेदित्यनुचिन्त्य तृप्ताः।
अन्ते त्वलभ्यैतदपूर्णभावाः सरोजपत्रेण समं व्यनश्यन् ॥३५९॥

"इस दिन में अथवा अभी, कभी कभी फिर वित्त।
पायेंगे" यों सोचकर, खुश कर के निज चित्र॥
कई लोग अन्तिम समय, अलभ्यवित्त निराश।
होकर सरोज पत्र सम, पाते हैं ही नाश ॥३५९॥

360. நீருட் பிறந்து நிறம்பசிய தாயினும்
ஈரம் இடையகத் தில்லாகும்—ஒரும்
நிறைப்பெருஞ் செல்வத்து நின்றக் கடைத்தும்
அறைப்பெருங்கல் அன்னர் உடைத்து.

Wealth without heart.

Though born in the water, and its hue appear green, the *Netti's* pith knows no moisture; so in the world are men of amplest wealth whose hearts are hard as stones upon the rocky mountain fell. 360.

विनाऽऽर्द्रभावं शिलया समानाः सन्त्येव भाग्ये नितरां स्थितेऽपिः
यथैव लोके जलजातशीत-तद्वेतसार्न्तनहि चार्द्रता स्यात् ॥३६०॥

आर्द्रभाव विनु नर कई, हैं ही शिला समान।
यद्यपि वे सौभाग्य से, बिलकुल हो धनवान॥
नागरमोथा नीर में, उगा व हरा समेत।
फिर भी है नहि आर्द्रता, उसके अंतनिकेत ॥३६०॥

Ch. 37 Miscellaneous Topics.
३७. विविध नीतिप्रद अध्याय

361. *மழைதிளைக்கும் மாடமாய் மாண்பமைந்த காப்பாய்*
இழைவிளக்கு நின்றிமைப்பின் என்னாம்—விழைதக்க
மாண்ட மனையாளை யில்லாதான் இல்லகம்
காண்டற் கரியதோர் காடு.

The wife.

The mansion meets the clouds. A stately band of warders keep around. Gems glisten therein like lamps. What then? *Where the owner has not a wife of dainty excellence: the house within is a waste, hard to explore.* 361.

दिविस्पृशत्सौधतलाः सुरक्ष्याः तत्रापि दीपाभरणाढ्यभार्याः।
तथापि काम्या गुणिनी न चेत् सा व्यर्था, स्मशानेन समं गृहं तत् ॥३६१॥

नभस्पृशी गोपुर तथा, ऊंचे हैं प्रासाद।
उनमें भूषित दार हैं, वर्ण सहित अवदात॥
लेकिन उन में सभ्यता, औ कामुकता—ज्ञान।
अगर नहीं तो क्या भला, वह घर मसान समान ॥३६१॥

362. *வழுக்கெனைத்தும் இல்லாத வாள்வாய்க் கிடந்தும்*
இழுக்கினைத் தாம்பெறுவ ராயின்—இழுக்கெனைத்துஞ்
செய்குறுப் பாணி சிறிதேஅச் சின்மொழியார்
கையுறுப் பாணி பெரிது.

Outward guards avail nothing.

Though compassed round with a faultless guard of swords, if once they gain freedom, in little time they are stained with every fault; and long is the time those soft-voiced once spurn every law of right 362.

कृपाणभृत्सेवकरक्षिताश्च चारित्र्यहीना यदि ता रमण्यः।
स्यात्पूतता स्वल्पतमा हि तासा-मपूतता स्याद्बहुकालदीर्घा ॥३६२॥

कृपाणधारी भृत्य से, पालित भी हो जाय।
तो भी स्त्री चारित्र्य से, विहीन यदि रह जाय॥
पूत भावना स्वल्पतम, उसका अपूत भाव।
बहुत काल का दीर्घ हो, हेतु चित्त का भाव ॥३६२॥

363. எறியென் றெதிர்நிற்பாள் கூற்றம்; சிறுகாலை
அட்டில் புகாதாள் அரும்பிணி;—அட்டதனை
உண்டி உதவாதாள் இல்வாழ்பேய்: இம்மூவர்
கொண்டானைக் கொல்லும் படை.

The evil qualities of a bad wife and their effects.

Death is the wife that stands dares and her spouse to strike! *Disease* is she who enters not the kitchen betimes! *Demon domestic* is she who cooks and gives no alms! These three are *swords* to slay their lords! 363.

'मा घातये' त्युक्तवती यमी स्यात् पाकं न कुर्याद्यदि सेयमाधिः।
विना पतिं भक्षति चेत् पिशाची तिस्रस्त्विमा भर्तृनिहन्तृसेनाः ॥३६३॥

वक्त्री यों "मारो मुझे" पत्नी काल-समान।
पाचन-कृति से जो विमुख, सो स्त्री आधि समान॥
पति बिनु जो हो अन्नभुक्, सो स्त्री भूत समान।
पतिघातक तीनों स्त्रियां, सुविदित सैन्य समान॥३६३॥

364. கடியெனக் கேட்டுங் கடியான் வெடிபட
ஆர்ப்பது கேட்டும் அதுதெளியான்—பேர்த்துமோர்
இற்கொண் டினிதிரூஉம் ஏமுறுதல் என்பவே
கற்கொண் டெறியுந் தவறு.

The second marriage.

He hears (that *marriage* is another name for) *dread,* and yet he dreads it not! He hears the fearful funeral drum, but it gives him no sense! Again to take a wife and to dwell bewildered amidst domestic enjoyments is a fault that merits stoning; so say (the wise). 364.

"धिक्कृत्य मुञ्चे"ति सतां वचांसि श्रुत्वाऽप्यबुध्वा मृतिवाद्यघोषम्।
ऊढ्वा पुनर्भोगरतस्य मोहः स्वशीर्षनिक्षिप्तशिलासमः स्यात् ॥३६४॥

सुनकर सज्जन का कथन, "छोड़ो निज घर बार"।
मृत-भेरी के घोष का, नहि बन जाननहार॥
फिर भोगो परिणीत का, मोहन कार्यकलाप।
शीश क्षिप्त पाषाण सम, होगा अपने आप ॥३६४॥

365. தலையே தலம்முயன்று வாழ்தல்; ஒருவர்த்
இடையே இனியார்கண் தங்கல்;—கடையே
புணராதென் றெண்ணிப் பொருள்நசையால் தம்மை
உணராரின் சென்று நிலை.

Different modes of life.

The *best* thing is a life spent in penitential practices. The *middle* course is to live with dear ones around. The *worst* of all is; with the thought that we have not enough, through desire of wealth subserviently to follow those who understand us not. 365.

श्रेष्ठस्तपोयत्नवताऽत्र वासः स्थितिर्गृहिण्या सह मध्यमा स्यात्।
स्वगौरवज्ञानविहीनमर्त्ये वासो धनार्थं त्वधमो विभाव्यः ॥३६५॥

उत्तम जीवन तापसी, सदा कहाया जाय।
गृहस्थ जीवन दारयुत, मध्यम माना जाय॥
अविदित स्वमान धनिक के, पीछे ही पड़ जाय।
तो वह धन ही के लिये, अधम कहाया जाय ॥३६५॥

366. கல்லாக் கழிப்பர் தலையாயார்; நல்லவை
துவ்வாக் கழிப்பர் இடைகள்; கடைகள்
இனிதுண்ணேம் ஆரப் பெறேம்யாம் என்னும்
முனிவிலர் கண்பா டிலர்.

Three kinds of men; those that learn, those that enjoy, and those that complain.

The men of noblest mood pass their time in learning. The middle sort pass their time in the enjoyment of good things. The last and lowest cry: Our food is not sweet,' 'We've not got our fill,' and in angry mood lie sleepless. 366.

नयन्ति कालं पठनेन सन्तो मध्या नयन्त्याप्तधनोपभोगात्।
अपूर्णभोगानुभवादतृप्ता नयन्ति कालन्त्वधमा विनिद्राः ॥३६६॥

ग्रंथ पठन कर संत हैं, व्यतीत करते काल।
लब्ध वित्त के भोग से, चलता मध्यम-काल॥
अपूर्ण भोगानुभव से, अतृप्त हो निशिकाल।
सोये बिन हैं अधमजन, व्यतीत करते काल ॥३६६॥

367. செந்நெல்லா லாய செழுமுகீ மற்றும்அச்
செந்நெல்லே யாகி விளைதலால்—அந்நெல்
வயல்நிறையக் காய்க்கும் வளவய லூர!
மகனறிவு தந்தை யறிவு.

Like father, like son!

The red grain's swelling germ in after time grows up and yields that same red grain—O fertile crofted village lord, whose fields with ripening crops of that same grain!—*Wisdom of son is wisdom of the sire.* 367.

सच्छालिबीजा: पुनरेव शालि-धान्यात्मतां यान्ति, सुशालिसस्यै:।
सम्पूर्णकिदारसुदेशराजन्! ज्ञानं पितु: संक्रमते हि पुत्रे ॥३६७॥

अनाज-अंकुर क्षेत्र में, उगते हैं बहुवार।
अनाज पूरित देश के, बलिष्ठ सुकर्णधार॥
जैसे बेटा बाप का, पा लेता है ज्ञान।
मूल-वस्तु-गुण उपज में, वैसे सुदृश्यमान ॥३६७॥

368. உடைப்பெருஞ் செல்வரும் சான்றோரும் கெட்டுப்
புடைப்பெண்டிர் மக்களும் கீழும் பெருகிக்
கடைக்கால் தலைக்கண்ண தாகிக் குடைக்கால்போற்
கீழ்மேலாய் நிற்கும் உலகு.

Bad times.

The wealthy men of great possessions and the perfect have perished, while wantons' sons and base men multiply. The lowest takes chief place, and, like the umbrella's handle, this world is upside down! 368.

परम्पराढ्या गुणिनश्च खिन्ना: नीचाश्च दासीतनया धनाढ्या:।
लोकस्य वृत्तिस्त्वधरोत्तराऽभूत् छत्रस्थदण्डस्थितितुल्यरूपा ॥३६८॥

परम्परा से श्रेष्ठजन, दुख से हैं समवेत।
गणिकासुत औ नीचजन, धन से हैं समवेत॥
जगत-रीति अधरोत्तरा, प्रचलित होती आज।
छत्र-दण्ड का हाल-सम, उलटा है अब राज ॥३६८॥

369. இனியார்தம் நெஞ்சத்து நோய்உரைப்ப அந்நோய்
தணியாத உள்ளம் உடையார்—மணிவரன்றி
வீழும் அருவி விறன்மலை நன்னாட!
வாழ்வின் வரைபாய்தல் நன்று.

Misery of unfeeling selfishness.

Lord of the good land of mighty hills whence streams descend sweeping along pearls!
Better men should jump down a precipice than live with a mind not disposed to assuage the pain of the dear ones who tell them of their heart's pain. 369.

सन्मित्रचित्तव्यसनं निशम्य नो वारयेद्यो भुवि तस्य वासात्।
शैलात् पतित्वा मरणं गरीयः सुरत्नसन्निर्झरशैलपाल! ३६९॥

सुरत्न धृत निर्झर सहित, पर्वत का परिपाल।
सुमित्र-धन के खरीद जो, देता नहीं निकाल॥
उसका जीवन भूमि में, वृथा हि समझा जाय।
गिरि से गिरकर मरण हो, गरीय समझा जाय ॥३६९॥

370. புதுப்புனலும் பூங்குழையார் நட்பும் இரண்டும்
விதுப்பற நாடின்வே றல்ல—புதுப்புனலும்
மாரி அறவே அறுமாம், அவரன்பும்
வாரி அறவே அறும்.

The wanton's love.

'The mountain freshed, and the love of those adorned.
With pendant jewels rare examined calmly prove
To differ nought: *that* fails when rains that feed it fail:
And love of *these* fails too, when income fails!. 370.

नूत्नप्रवाहः कुलटासु मैत्री द्वयं समं स्याद्रचिते विमर्शे।
वृष्टचां गतायां न नवप्रवाहो नष्टे धने प्रेम न चास्ति तस्याः ॥३७०॥

गणिका-मैत्री स्रोत-नव, दोनों एक समान।
माने जाते जगत में, विमर्श से पहचान॥
वष्टि न तो नव स्रोत का, कहीं नहीं है स्थान।
नहिगणिका के प्यार का, बिना वित्त के स्थान ॥३७०॥

Ch. 38. Wantons

३८. सुख-दुःख-धर्माध्याय—वेश्या

371. விளக்கொளியும் வேசையர் நட்பும் இரண்டும்
துளக்கற நாடின் வேறல்ல—விளக்கொளியும்
நெய்யற்ற கண்ணே அறுமே, அவரன்பும்
கையற்ற கண்ணே அறும்.

The wanton's mercenary character.

The lamp's light and harlot's love examined well are seen to differ not a whit; the lamp's light goes out when the feeding oil is consumed! and the harlot's love is spent when the lavish hand has spent wealth. 371.

दीपप्रकाशः कुलटानुरक्ति-रिदं द्वयं भाति समं विमृष्टे।
घृतक्षये नश्यति दीपकान्तिः धनक्षये नश्यति रक्तिरस्याः ॥३७१॥

गणिका

गणिका-सनेह दीप-छवि, दोनों एक समान।
करने पर विवाद विदित, वे ही नहि असमान।
जब हो घी क्षयमाण तो, दीपकान्ति हो लुप्त।
जब धन हो क्षयमाण तो, गणिकाराग विलुप्त ॥३७१॥

372. அங்கோட் டகலல்குல் ஆயிழையாள் நம்மோடு
செங்கோடு பாய்துமே என்றாள்மன்—செங்கோட்டின்
மேற்காணம் இன்மையான் மேவா தொழிந்தாளே
காற்கால்நோய் காட்டிக் கலுழ்ந்து.

The wanton's self-interested professions.

She (of enticing beauty), adorned with choice jewels, said forsooth, 'I will leap with you down the steep precipice;' but on the very brow of the precipice, because I had no money, she, weeping and pointing to her aching feet, withdrew and left me alone! 372.

वाराङ्गना, प्रेमनिभेन, "शैलात् पतेव चावा" मिति पूर्वमूचे।
'पादाधिना सञ्चलितुं न शक्ते' त्यसत्यमुक्त्वाऽद्य न चागमत् सा ॥३७२॥

कुलटा ने पहले कहा, "नेह निभाया जाय।
दुख आवें तो शैल से, हम दोनों गिर जाय"॥
अब दुख में वह कह चली, "वातरोग से खिन्न।
चलने में ताकत नहीं", सछल सत्य से भिन्न ॥३७२॥

373. அங்கண் விசும்பின் அமரர் தொழப்படும்
செங்கண்மா லாயினும் ஆகமன்—தம்கைக்
கொடுப்பதான் றில்லாரைக் கொய்தளி ரன்னார்
விடுப்பர்தம் கையால் தொழுது.

Courtezans forsake those who have no wealth.

Though he be *Mal*, the fiery-eyed, whom in the heaven's fair homes immortals worship, if in hand he bring no gift the women tender as the buds men cull, will straight, dismiss hem, bowing low with folded hands. 373.

स्वर्गे वसद्भिस्त्वमरैः सुनन्द्यो रक्ताक्षविष्णुर्भवतात् तु साक्षात्।
किन्त्वर्थहीनं किल पल्लवाङ्ग्यः कुर्वन्ति दूरे कुलटाः प्रणम्या ॥३७३॥

दिव के वासी अमर से, पूजित प्रशंसमान।
रक्तनयन हरि सामने, हो यदि सुदृश्यमान॥
तो भी धन कर में नहीं, फिर पल्लव-सम-देह।
गणिका आती नहि निकट, इसमें नहि संदेह ॥३७३॥

374. ஆணமில் நெஞ்சத் தணிநீலக் கண்ணார்க்குக்
காண மிலாதார் கடுவனையர்—காணவே
செக்கூர்ந்து கொண்டாரும் செய்த பொருளுடையார்
அக்காரம் அன்னார் அவர்க்கு.

Money makes a man the wanton's darling.

To the damsels of loveless hearts, whose eyes are as beauteous as blue water-lilies, those who have no wealth are as poison! Even those who have turned the (oil) press, in sight of all men, if they have wealth, are as sugar to them. 374.

नीलाक्षिणी प्रेमविहीनदासी विषेण तुल्यं विधनं त्यजेत् सा।
स्यात्तैलजीवी धनवान् यदेषा तं शर्करावद्गृणुते क्रमेण ॥३७४॥

नीलनयनि अनुराग से, विहीन वेश्या नार।
निर्धन से विष सम कभी, नहीं दिखाती प्यार ॥
सधन तैल जो वो रहे, तो शक्कर सम रोज।
गणिका अतीव चाहती, करके उसकी सोच ॥३७४॥

375. பாம்பிற் கொருதலை காட்டி ஒருதலை
தேம்படு தெண்கயத்து மீன்காட்டும்—ஆங்கு
மலங்கன்ன செய்கை மகளிர்தோள் சேர்வார்
விலங்கன்ன வெள்ளறிவி னார்.

Wantons and their paramours.

The silly ones, who are as beasts, seek the embraces of women who are like the eel, which shows one head to the snake, and another head to the fish, in the sweet clear lake: (*are of a double and deceitful nature*). 375.

मीने च सर्पे क्रमशः स्वदेहं प्रदर्श्य मीनः किल वञ्चयेत् तौ।
तथा स्वकायात् जनवञ्चिकायाः वेश्याः करौ वाञ्छति मूढबुद्धिः ॥३७५॥

मछली तथैव सांप में, क्रम से अपनी देह।
दर्शित कर करता कपट, है झष निस्संदेह॥
जनता को छलकारिणी, अपने रूपाधार।
गणिका के कर चाहता, विमूढ बिना विचार ॥३७५॥

376. பொத்தநூற் கல்லும் புணர்பிரியா அன்றிலும்போல்
நித்தலும் நம்மைப் பிரியலம் என்றுரைத்த
பொற்றொடியும் போர்த்தகர்க்கோ டாயினாள் நன்னெஞ்சே
நிற்றியோ போதியோ நீ.

Feigned love becomes open hostility.

'We will never part, like the precious stone strung on its thread, or the *Andril*,' said the damsel with golden bracelets: she has now become the horn of a fighting ram (*she angrily repels me.*) Dear heart! dost linger still, or wilt thou go? 376.

"क्रौञ्चेन तुल्यौ मणिसूत्रतुल्या-वावां युता" वित्यवदत् तु दासी।
भिन्नाशया छागविषाणवत् सा हे चित्त! किं सा तव वासयोग्या॥३७६॥

"क्रौंच सदृश मणिसूत्र सम, हम मिलकर रह जाय"।
यों वेश्या ने तव कहा, जव हो धन की आय॥
दुख में विचार वदलकर, छागविषाण समान।
वह रहती है क्या वही, तेरा निवास-थान ॥३७६॥

377. ஆமாபோல் நக்கி அவர்கைப் பொருள்கொண்டு
சேமாபோல் குப்புறூஉம் சில்லிலக்கண் அன்பிலீன
ஏமாந் தெமதென்றிருந்தார் பெறுபவே
தாமாம் பலரால் நகை.

Ridiculous infatuation of the wanton's dupe.

Those who fondly reckon upon the devoted love of the worthless wanton, that, like the wild ox, licks the hand and despoils men of their wealth, and then, like the buffalo, bounds away, shall suffer the deserved ridicule of many. 377.

सल्लिह्य गोवद्धनमाप्य तस्मात् प्राप्तेऽथ कार्ये त्वसहायभूता:।
पतद्बलीवर्दसमानवेश्या:, तत्प्रीतिकाम: परिहास्य एव ॥३७७॥

सुरभी ज्यों ही चाटकर, करता है छल-जाल।
त्यों वेश्या धन के लिये, करती माया-जाल॥
कपटी सांड समान हो, वह करती न सहाय।
गणिका-मोहित मूढ तो, निंदित होगा हाय ॥३७७॥

378. ஏமாந்த போழ்தின் இனியார்போன் றின்னராய்த்
தாமார்ந்த போதே தகர்க்கோடாம்—மான்நோக்கின்
தங்நெறிப் பெண்டிர் தடமுலை சேராரே
செங்நெறிச் சேர்துமென் பார்.

Bought embraces.

Those whose avowed purpose it is walk in the way of rectitude seek not the embrace of the fascinating, fawn-eyed damsels, who walk in a way of their own' who are pleasant when gratified with gifts, and when they are filled (=*when no more gifts are to be expected*) are like the horn of the fighting ram. 378.

प्रदर्श्य रक्तिं कपटा जनेषु लब्ध्वा धनं तानथ वञ्चयन्ति।
वेश्या: स्वकार्यैकपरास्तदीय-स्तनौ न वाञ्छेत् परलोककाम: ॥३७८॥

प्यार दिखाकर कपट से, नर से पाकर वित्त।
धोखा देती है सदा, गणिका उसका चित्र॥
पर जग कामुक जो रहे, सो गणिका-कुच-चाह।
नही करेगा और नहि, जायेगा छल-राह ॥३७८॥

379. ஊறுசெய் நெஞ்சம்தம் உள்ளடக்கி ஒண்ணுதலார்
தேறமொழிந்த மொழிகேட்டுத்—தேறி
எமரென்று கொள்வாருங் கொள்பவே யார்க்கும்
தமரல்லர் தம்உடம்பி னர்.

Let him be deceived that will.

Let those accept (*wantons' false love*), who take them as their own believing the words uttered to inspire belief, by the bright-browed ones, who keep concealed within the cruelty that lurks in their heart. Those whose bodies are their sole wealth belong to none, (i.e. *they have no souls to give* !). 379.

चित्तेऽन्यविद्रोहमतिस्तु तस्याः वाक्यं परं प्रत्ययदायकं स्यात् ।
मूढो नरस्तां मनुते स्वकीयां वेश्या न कस्यापि भवेत् तु वश्या॥३७९॥

गणिका मन में सोचती, पर का अहित-विचार।
आशादायक किन्तु तो, हो उसके उद्गार॥
मूढ मानता है उसे, अनन्यपरा स्वकीय।
वेश्या वश्या हो नहीं, कभी नहीं दमनीय ॥३७९॥

380. உள்ளம் ஒருவன் உழையதா ஒண்ணுதலார்
கள்ளத்தால் செய்யுங் கருத்தெல்லாம்—தெள்ளி
அறிந்த விடத்தும் அறியாராம் பாவம்
செறிந்த உடம்பி னவர்.

Lust blinds men.

Though the dupes clearly discern and know the guileful intentions entertained by the bright-browed ones, even where their minds are (*apparently*) set upon some persons, they whose bodies are full of sin do not recognise it ! 380.

चित्तेऽस्ति कश्चिद्बहिरन्यपुंसि प्रीतेव सा वञ्चयतीह वेश्या।
विचारयन्तोऽपि रहस्यमेतत् नरा न जानन्ति हि पापवश्याः ॥३८०॥

कोई नर है चित्त में, बाहर नर को अन्य।
प्यारी सम छल कपट से, ठगती नारी पण्य॥
अवगत करने के लिए, गणिका-स्वरूप बोध।
पापवश्य नर सजग हैं, पर वह हो दुर्बोध ॥३८०॥

Ch. 39. Chaste Matronhood

३९. सुखधर्माध्याय—पतिव्रता

381. அரும்பெறற் கற்பின் அயிராணி யன்ன
பெரும்பெயர்ப் பெண்டி. செனினும்—விரும்பி
பெறுநசையாற் பின்நிற்பா ரின்மையே பேணும்
நறுநுதலாள் நன்மைத் துணை.

Freedom from temptation.

Though women live famed as *Ayirani* for rarest gift of chastity, absence of men that stand enamoured of their charms is a help in way of good to those of fragrant brow who guard themselves. 381.

इन्द्राणितुल्यप्रथिताश्च साध्व्यो भोगेच्छया पार्श्वमुपागतानाम्।
यास्तेषु वश्या न भवन्ति रम्या फालास्तु ता भर्तृमनोऽनुकूलाः ॥३८१॥

शची सदृश यशकारिणी, भोगेच्छा के साथ।
निकटागत नर को जगह, कभी न देती साथ॥
पति-मन के अनुकूल हो, सदैव मण्डित काय।
रम्यशिरोधर भामिनी, साध्वी समझी जाय ॥३८१॥

382. குடநீர்அட் டுண்ணும் இடுக்கட் பொழுதும்
கடல்நீர் அறவுண்ணும் கேளிர் வரினும்
கடன்நிர்மை கையாறுக் கொள்ளும் மடமொழி
மாதர் மனைமாட்சி யாள்.

A true wife, in time of poverty, if friends come in enough to drink up the sea, performs her duties with kindness of speech. When in the straitened time they cook and eat with but one pot of water on the hearth,—if relatives arrive enough to drain the sea, the soft-voiced dame, the glory of her home, well fulfils each seemly duty. 382.

दारिद्र्यकाले जलमात्रलभ्ये नानाविधस्वीयजनागमेऽपि।
या स्वीयधर्मात् च्यवते न वैसा रम्यस्वरा लक्ष्यपतिव्रता स्यात्॥३८२॥

केवल जल ही लब्ध हो, अभाव-पीडित काल।
घर में नाना बन्धु के, मिलने के भी काल॥
जो अपने कर्त्तव्य से, विमुखी नहि है नार।
रम्य भाषिणी है वही, भर्तृपरायण नार ॥३८२॥

383. நாலாறும் ஆறுய் நனிசிறிதாய் எப்புறனும்
மேலாறு மேல்உறை சோரினும்—மேலாய
வல்லாளாய் வாழும்ஊர் தற்புகழும் மாண்கற்பின்
இல்லாள் அமர்ந்ததே இல்.

The real home!

On every side the narrow dwelling lies open, on every part the rain drips down; yet, if the dame has noble gifts, praised by townsfolk for her modest worth, such a housewife's blest abode is indeed a *home*!
383.

द्वाराणि नाना परितस्तथोर्ध्वं पतेत् तु वर्षासलिलं महन्न।
गेहेऽत्र या स्वीयविधिं करोति सा लोकवन्द्या गृहभाग्यभूता ॥३८३॥

अनेक चारों ओर हैं, रहते घर के द्वार।
उसमें वहती है सतत, वर्षा की जलधार॥
ऐसे घर में नार जो, यदि निज फरज निभाय।
जनता वन्दित तो उसे, गृहिणी मानी जाय ॥३८३॥

384. கட்கினியாள் காதலன் காதல் வகைபுனைவாள்
உட்குடையாள் ஊர்நாண் இயல்பினுள்—உட்கி
இடன்அறிந் தூடி இனிதின் உணரும்
மடமொழி மாதராள் பெண்.

The wife: 'placens uxor.'

She is sweet to the eye, and adorned in the way that a lover loves; she enforces awe: her virtue shames the village folk; she is submissive; but in fitting place is stern, yet sweetly relents:—such a soft-voiced dame is a *wife*.
384.

पतीच्छया मण्डितकाययुक्ता रम्या भयाढ्या स्वजनोपकर्त्री।
सम्युज्य पश्चात्कृतविप्रलम्भैः या तोषयेन्नाथमियं सती स्यात् ॥३८४॥

गृहिणी वह है जो सदा, करती है प्रिय-वात।
अलंकृता हो मानकर, अपने पति की वात॥
भयाभिभूता सुन्दरी, निज जन का उपकार।
कर्त्री धव से मिलन कर, तोपदायिका नार ॥३८४॥

385. எஞ்ஞான்றும் எம்கணவர் எம்தோள்மேற் சேர்ந்தெழிலும்
அஞ்ஞான்று கண்டேம்போல் நாணுதுமால்-எஞ்ஞான்றும்
என்னே கெழீஇயினர் கொல்லோ பொருள்நசையால்
பன்மார்பு சேர்ந்தொழுகு வார்.

The modest woman cannot understand shamelessness.

'Whenever our spouse takes us in his embrace, we feel a timid shame as if we saw him then for the first time and they (wantons) daily, through desire of gain, submit to the embraces of many! How can this be? ' 385.

सदा मिलित्वा पथिभिः स्थिताश्च लज्जायुताः स्मो नवसङ्गतुल्यम्।
धनेच्छयाऽनन्तनरैः समेता दास्यो रता भर्तृषु, किन्नु चित्रम्! ॥३८५॥

सतत मिलन कर नाथ से, सह हो निवासमान।
लज्जा से अभिभूत हम, नवसंसर्ग समान॥
वित्त कमाने के लिये, अनुरत पुरुषसमेत।
वेश्या तो पतिरत रहे, यह है चकितसमेत ॥३८५॥

386. உளத்துணர்வுடையான் ஓதிய நூலற்றுல்
வள்ளன்மை பூண்டான்கண் ஒண்பொருள்—தெள்ளிய
ஆண்மகன் கையில் அயில்வா ளனைத்தரோ
நாணுடையாள் பெற்ற நலம்.

A modest wife like a javelin in the hand of a hero

As the scroll that he reads, whose inmost heart well understands it, is goodly wealth with him who is graced by a generous spirit. As a keen weapon in the hand of a clear-souled hero, is the loveliness that a modest woman owns. 386

दातुः स्वहस्तङ्गतवित्ततुल्यं सद्वीरहस्तस्थकृपाणतुल्यम्।
विद्वज्जनाधीतसुशास्त्रतुल्यं प्रशस्यते साध्विगतं महत्त्वम् ॥३८६॥

दानवीर के हाथ गत, विभूति-वित्त समान।
युद्धवीर के हाथ गत, भीषण खड्ग समान॥
पंडित लोगों से पठित, प्रधान शास्त्र समान।
सलज्ज स्त्री की श्रेष्ठता, शंसित हो हि महान॥३८६॥

387. கருங்கொள்ளும் செங்கொள்ளும் தூணிப் பதக்கென்
ஒருருங்கொப்பக் கொண்டானும் ஊரன்-ஒருங்கொவ்வா
நன்னுதலார்த் தோய்ந்த வரைமார்பன் நீராடா
தென்னையும் தோய வரும்.

The injured wife to her confidante:

'The lord of the town has bought, it seems, black *gram* and red *gram*, a *tuni* and a *pathakku*, as if they were all the same! He, whose chest is broad as a mountain, having associated with the beautiful browed ones,—inferior to me!— *unpurified, seeks my society too!*' 387.

ग्राम्यो यथाऽज्ञातकुळुत्थभेदः क्रीणाति मूल्येन समेन मूढः।
पूर्वं तु दासीमनुभूय भर्ता न स्नाति, मां चापि भुनक्त्यपूतः॥३८७॥

कुलथी के उपभेद से, ना परिचित ग्रामीण।
सम कीमत से उभय को, खरीदता मतिहीन॥
जाकर गणिका-गेह पति, करके सुख का भोग।
स्नान बिना आकर यहां, करता है संभोग ॥३८७॥

388. கொடியவை கூறுதி பாண! நீ கூறின்
அடியைய இட்டோதுங்கிச் சென்று—துடியின்
இடக்கண் அனையம்யாம் ஊரற் கதனால்
வலக்கண் அனையார்க் குரை.

The neglected wife

'O minstrel, utter not cruel words, or if thou utter them, softly draw back thy step, and go to utter them to those who are like the lute's right side; for we, to the lord of the town, are as its left'. 388.

ढक्कास्थवामस्थलवद् वृथाऽस्मि मा निन्द भर्तारमपेहि दूत!।
ढक्कालसद्दक्षिणभागतुल्य-फालाढ्यदासीर्व्रज, शंस सर्वम् ॥३८८॥

डमरू का बाँया सदृश, मैं तो हूं बेकार।
पति-निन्दा दूत! न करो, न करो क्लेशाधार॥
डमरू का दाँया सदृश, मायायुक्त विशाल।
वेश्या से जाकर कहो, अरे दूत का हाल॥३८८॥

389. சாய்ப்பறிக்க நீர்திகழும் தண்வய லூரன்மீ
தீப்பறக்க நொந்தேனும் யானேமன்—தீப்பறக்கத்
தாக்கி முகிழ்பொருத தண்சாந் தணியகலம்
நோக்கி யிருந்தேனும் யான்.

Meek complainings (to her maid).

'I am she, forsooth, that felt a pang when a fly alighted on the lord of the town, surrounded by cool rice-fields over which the waters gleam, where they pluck the rich grass! And I am she who have lived to look upon his breast adorned with cool *sandal-wood* paste, which has been warmly embraced by others. 389.

स्त्रीमक्षिकाया: पतिदेहसङ्गं दृष्ट्वा पुरा मे सहनं न चाऽभूत्।
आश्लिष्य वेश्यामनुभूतभर्तृ-वक्षस्थलीमीक्ष्य सहेऽहमद्य ॥३८९॥

पति के तन पर एकदा, मक्खी थी आसीन।
यह लखकर मैं दार थी, असह्य क्षमताहीन॥
वेश्या का आश्लेश कर, हाजिर पति-उर-भाग।
लखकर भी मैं सह्य हूं, मन में धरकर राग ॥३८९॥

390. அரும்பவிழ் தாரினன் எம்அருளும் என்று
பெரும்பொய் உரையாதி பாண—கரும்பின்
கடைக்கண் அனையம்நாம் ஊரற் கதனால்
இடைக்கண் அனையார்க் குரை.

The pining wife.

'Minstrel, utter not a gross falsehood, saying that he who wears a garland of opening buds will favour us!
'To the lord of the town we are as the (*tasteless*) tip of the sugar-cane; therefore, tell (such a tale) to them who are like its middle (sweet, juicy) joints.' 390.

मालाधरो मे पतिरेति मामित्य-सत्यवाक्यं वद माऽत्र दूत!।
इक्ष्वग्रतुल्या विरसाऽहमस्मि वदेक्षुमध्यायितसारवेश्याम् ॥३९०॥

मालाधर मम नाथ फिर, आयेगा घर-बार।
यों रच असत्य मत बता, यहां दूत! इस बार॥
ईख-दण्ड के अग्रसम, मैं तो हूं निस्सार।
ईख-दण्ड के मध्य सम, गणिका से कह सार ॥३९०॥

Ch. 40 The Characteristics of Love
४०. सुखानुभव-लक्षण

391. முயங்காக்கால் பாயும் பசலைமற் றூடி-
உயங்காக்கால் உப்பின்றாம் காமம்—வயங்கோதம்
நில்லாத் திரையலைக்கும் நீள்கழிச் சேர்ப்ப!
புல்லாப் புலப்பதோர் ஆறு.

'The way of true love never did run smooth.'

'Lord of the cool shore of the deep bay, where the gleaming ocean's restless billows beat!
'If there be no fond embrace, a sickly hue will spread itself (over her face); and, if there be no lovers' quarrels, love will lack its zest.
'To embrace and disagree is the one way (of love)'. 391.

सङ्गो न चेद्देहविवर्णता स्यात् योगे सदा श्रेष्ठतमो न कामः।
त्यक्त्वाऽथ योगो रसपुष्टिमार्गो वीचीस्पृशच्छीतसुतीरपाल! ॥३९१॥

संग न हो तो कान्ति बिन, होगी विवर्ण देह।
सदा भोगरति विरस हो, इस में नहि संदेह॥
मिलकर के फिर बिछुड़ना, होगा रतिरसदार।
लहरों से शीतल तीर-नायक संकर्णधार ॥३९१॥

392. தம்அமர் காதலர் தார்சூழ் அணியகலம்
விம்ம முயங்குந் துணையில்லார்க்—கிம்மெனப்
பெய்யா எழிலி முழங்குந் திசையெல்லாம்
நெய்தல் அறைந்தன்ன நீர்த்து.

The Lonely one

'To those who were wont to strain in close embrace their own beloved whose broad breast was girt with garlands, when the rains patter down, it is as though one beat the funeral drum through all the regions where the muttering of the thunder is heard from out the clouds; since they are deprived of their loved one's society.' 392.

स्वनायवक्षःस्थलसङ्गसौख्यं यासां न लभ्येत मुदा समेतम्।
दिशासु वर्षद्घनजातशब्दः श्रूयेत तासां मृतिवाद्यरूपः ॥३९२॥

जिनको अपने नाथ का, उरमर्दन सुख भोग।
नहीं मिलेगा सह मुदा, बिलकुल ही निश्शोक॥
होगा गोचर श्रवण का, उन को घन का नाद।
मरणवाद्य के सदृश हैं, नापि सुरम्य निनाद॥३९२॥

393. கம்மஞ்செய் மாக்கள் கருவி ஒடுக்கிய
மம்மர்கொள் மாலை மலராய்ந்து பூத்தொடுப்பாள்
கைம்மாலை இட்டுக் கலுழ்ந்தாள் துணையில்லார்க்
கிம்மாலை என்செய்வ தென்று.

The forsaken one at eventide

At wildering eventide, when workmen all put by their tools, she culled choice flowers, and wove a gay garland;—then let it fall from her hands, and wailed, 'What can this wreath avail to me who weep alone?' 393.

अहर्मुखे मादकहेतुभूते त्वन्विष्य पुष्प ग्रथती स्वयं सा।
"नाथे प्रयाते किमु मालये" ति निक्षिप्य मालामरुदत् सतीयम् ॥३९३॥

मादक कारक दिवस में, निश्चित सायंकाल।
कुसुम ढूंढ कर जो सती, लगी गूंथने माल॥
"जब पति का निर्गमन हो, तो न बनाना भाल"।
यों कह वह रोने लगी, रखकर थल पर भाल ॥३९३॥

394. செல்சுடர் நோக்கிச் சிதரிக்கண் கொண்டநீர்
மெல்விரல் ஊழ்தெரியா விம்மித்தன் - மெல்விரலின்
நாள்வைத்து நங்குற்றம் எண்ணுங்கொல் அந்தோதன்
தோள்வைத் தணைமேற் கிடந்து.

The lover says to his friend ( ) in regard to his forsaken bride:

'Regarding the setting sun, and wiping away one by one with her soft finger tears that well up in her eyes, suffused with read, sobbing she lies resting her arms on the couch: alas; are they my faults she is counting up?' 394.

सायार्कमुद्दिश्य निजाश्रु हस्तैः सम्मार्जयन्ती च, निजाङ्गुलीभिः।
निर्दिश्य यातान् दिवसान्, स्वशय्या-माविश्य दोषं मम सा स्मरेत् किम्
॥३९४॥

संध्या रवि को देखकर, अश्रु पोंछ निज हाथ।
निजांगुली से गणन कर, गत वासर दिन-रात॥
जाकर शयनागार निज, मेरी नेत्री नार।
मेरे ही अपराध को, करती याद अपार ॥३९४॥

395. கண்கயல் என்னுங் கருத்தினல் காதலி
பின்சென்ற தம்ம சிறுசிரல்—பின்சென்றும்
ஊக்கி எழுந்து எறிகல்லா ஒண்புருவம்
கோட்டிய வில்வாக் கறிந்து.

The lover in a figure praises the lustre of his beloved's eye, and the beauty of her arched brow: and indicates also his own timid reverence

'The little kingfisher seeing the eyes of my beloved *(as she was disporting in the tank)* and taking them for carp, followed her; but though it followed, and poised itself aloft, it darted not down, recognising her gleaming brow bent above them as a bow! 395.

नेत्रे प्रियाया मम मीनबुध्या विदार्य भोक्तुं त्वनुसृत्य पश्चात्।
कार्येऽवतीर्णो भ्रुवमीक्ष्य चाप-भिया निवृत्तः किल मत्स्यघाती ॥३९५॥

मीन समझकर मीनहर, मम प्यारी के नैन।
उनको खाने मारकर, उद्यत था दिन रैन॥
कार्यकाल में भृकुटि को, लखकर भय से चाप।
खूब समझकर हनन से, निवृत्त था चुपचाप ॥३९५॥

396. அரக்காம்பல் நாறும்வாய் அம்மருங்கிற் கன்னே
பரற்கானம் ஆற்றின கொல்லோ—அரக்கார்ந்த
பஞ்சிகொண் டூட்டினும் பையெனப் பையெனவெள்
நஞ்சிப்பின் வாங்கும் அடி.

The mother bewails the hardships of the tough desert path over which her tender daughter will follow her beloved.

'When I applied the (softest) cotton soaked in the red dye to the foot of her whose waist is lovely, and whose mouth breathes the fragrance of the red water-lily, did she not cry "gently, gently." and shrinking draw it back? And oh! has it endured the stony, desert path?' 396.

रक्तोत्पलास्या तनुमध्यमा मे पुत्री पुरालक्तविभूषणं च।
पादे कृतं नासहताद्य पादौ वने शिलाढ्ये कथमत्र यातौ ॥३९६॥

रक्तोत्पल सम कान्तियुत, सुमुखी नितम्बयुक्त।
मेरी तनया ना रही, पायल भूषण युक्त॥
परालक्त को धारने, नहि थे सहिष्णु पाद।
अब कटु वन में प्रियसहित, कैसे जाते पाद ॥३९६॥

397. ஒலைக் கணக்கர் ஒலியடங்கு புன்செக்கர்
மாலைப் பொழுதில் மணந்தார் பிரிவுள்ளி
மாலை பரிந்திட் டழுதாள் வனமுலைமேல்
கோலஞ்செய் சாந்தந் திமிர்ந்து.

Grief of the deserted wife

when those who con palm leaf scrolls had ceased, in eve's dim twilight hour, she thought of her absent spouse! and weeping plucked the flowers from out her wreath, and brushed the odorous sandal from her lovely breast! 397.

अहर्मुखे रक्तदिशासमेते वियुक्तभर्तारमनुस्मरन्ती।
उन्मुच्य मालां कुचचन्दनं च सम्मार्ज्य खिन्ना ह्यरुदत् प्रिया सा ॥३९७॥

विराम तथैव शान्तिकर, रक्त दिशायुत शाम।
बिछुड़े नायक मात्र की, स्मृति करती अविराम॥
प्रिया फेंक वरमाल औ, धोकर कुच-घनसार।
खिन्न दीन रोने लगी, चेटी का उद्गार ॥३९७॥

398. கடக்கருங் கானத்துக் காளைபின் நாளை
நடக்கவும் வல்லையோ என்றி—சுடர்த்தொடீஇ
பெற்றான் ஒருவன் பெருங்குதிரை அந்நிலையே
கற்றான் அஃதூரும் ஆறு.

The confidante demands of the bride if she can endure to walk after her beloved through the desert, she replies:

'Thou hast said, O maiden with burnished bracelets! have you strength to walk on the morrow after your beloved? When one (*a warrior*) has obtained a splendid horse, that very instant he has learned how to ride it! (*his enthusiasm teaches him*). 398.

"प्रियेण साकं विपिनं श्व एव किन्त्वं न गच्छेरि" ति मामपृच्छः।
क्रेता यथाश्वस्य तमारुरुह्य तच्चालनं तत्क्षण एव वेत्ति ॥३९८॥

नायक सह ही विपिन कल, जायें क्या तुम लोग।
यों मुझसे पूछा गया, मिलने सुख का भोग॥
जैसे क्रेता अश्व का, समझे ही तत्काल।
करना सवार तुरग पर, तथैव उसकी चाल ॥३९८॥

399. முலைக்கண்ணும் முத்தும் முழுமெய்யும் புல்லும்
இலக்கணம் யாதும் அறியேன்—கலைக்கணம்
வேங்கை வெரூஉம் நெறிசெலிய போலுமென்
பூம்பாவை செய்த குறி.

The mother now aware of her daughter's flight says:

My breast, my necklace of pearls, and my whole body she embraced! I knew not what it portended. It was the sign, it seems, made by my lovely one that she was about to set out on the path where the herds of antelopes flee in fright from the tiger.' 399

मुक्ता कुचाभ्यां परिषस्वजे मां सुता पुरा, मे विदितो न हेतुः।
जानेऽद्य चिह्नैर्मृगहन्तृसिंह-युते वने स्वीयगते कृतेति ॥३९९॥

तेरा ही आश्लेष का, कुच से औ मणिमाल।
कारण, मुझ को विदित नहि, यह तो अतीत काल॥
अब जानें संकेत से, मृगघ्न-सिंह निवास।
निज यात्रा की विपिन में, स्मारक यह वनवास ॥३९९।

400. கண்மூன் றுடையானும் காக்கையும் பையுட்
என்னீன்ற யாயும் பிழைத்ததென்—
கொங்கரும்பன்ன முலையாய்! பொருள்வயிற்
பாங்கனார் சென்ற நெறி.

The lady complains of her lover's long absence

The triple-eyed (*Civan*), the crow, the hooded snake; the mother that bare me: what have these done amiss? Maiden whose bosom bears the Gongu buds, all gofd! The may my lover went for wealth is my pain.' 400

काकं त्रिनेत्रं मम मातरं च राहुं विनिन्द्याद्य न कोऽपि लाभः।
मन्नायको वित्तकृते च मार्गं यं प्राप मार्गः सखि! सो विनिन्द्यः ॥४००॥

सखि! मेरी जननी कभी, नहि ही निन्दा हेतु।
त्रिनेत्र तथैव राहु भी, नहि हो निन्दा हेतु॥
मम प्रिय ने धन के लिए, अपनायी जो राह।
निन्दा करने उचित हो, निर्विशेष वह राह ॥४००॥